MPAMV-606

गायन–रागों और तालों का अध्ययन IV

एम0पी0ए0 संगीत – चतुर्थ सेमेस्टर

संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग

मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

MPAMV-606

गायन–रागों और तालों का अध्ययन IV

एम0पी0ए0 संगीत – चतुर्थ सेमेस्टर

संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग

मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
तीनपानी बाईपास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पीछे,
हल्द्वानी, जिला नैनीताल, पिनकोड–263139
फोन नं0 : 05946–286000/01/02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in**
वेबसाईट : **www.uou.ac.in**

MPAMV-606

अध्ययन मंडल

कुलपति (अध्यक्ष)
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रो0 एच0 पी0 शुक्ल (संयोजक)
निदेशक–मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 विजय कृष्ण (सदस्य)
पूर्व विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग,
डी0एस0बी0 कैम्पस, नैनीताल,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

डॉ0 आशा पाण्डे कृष्ण (सदस्य)
विभागाध्यक्षा, संगीत
एच0एन0बी0 गढ़वाल
श्रीनगर

डॉ0 मल्लिका बैनर्जी (सदस्य)
संगीत विभाग,
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त
विश्वविद्यालय, दिल्ली

द्विजेश उपाध्याय (सदस्य)
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संयोजन, प्रूफ रिडिंग एवं फार्मेटिंग

प्रदीप कुमार
सहायक प्राध्यापक,
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.),
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, हल्द्वानी, नैनीताल

जगमोहन परगांई
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.),
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शनविभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

अशोक चन्द्र टम्टा
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.),
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रकाश चन्द्र आर्या
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.),
संगीत नृत्य एवं कलाप्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संपादन

डॉ0 विजय कृष्ण
पूर्व विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 चन्द्रशेखर तिवारी
वरिष्ठ संगीतज्ञ,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 रेखा साह
पूर्व विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग,
डी0एस0बी0 कैम्पस, नैनीताल
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.),
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, हल्द्वानी, नैनीताल

इकाई लेखन

1.	डॉ0 रेखा शाह	इकाई 1,4, 5,
2.	डॉ0 महेश पाण्डे	इकाई 3
3.	डॉ0 गीता जोशी	इकाई 2, 6
5.	डॉ0 विजय कृष्ण	इकाई 7

कापीराइट : @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
संस्करण : सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशन वर्ष : जनवरी 2022,
प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल–263139
ई–मेल : books@uou.ac.in

इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी, चक्रमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

MPAMV-606

एम0पी0ए0 संगीत – चतुर्थ सेमेस्टर
गायन–रागों और तालों का अध्ययन IV – एम0पी0ए0एम0वी0–606

इकाई	इकाई का नाम	पृष्ठ
इकाई–1	पाठ्यक्रम के रागों का पूर्ण वर्णन, तुलना एवं स्वर समूह द्वारा राग पहचानना	1–13
इकाई–2	संगीतज्ञों(शारंगदेव, बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर, पं0 जसराज, मल्लिकार्जुन मंसूर, केसरबाई केरकर, आचार्य बृहस्पति, पं0 कुमार गन्धर्व व किशोरी अमोणकर) का जीवन परिचय व भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान	14–45
इकाई–3	संगीत के प्रसिद्ध ग्रन्थों (संगीत रत्नाकर, चतुर्दण्डीप्रकाशिका, नारदीय शिक्षा, संगीत मकरंद, संगीत चिन्तामणि, संगीतांजलि एवं संगीत–पारिजात) का सामान्य अध्ययन	46–67
इकाई–4	संगीत संबंधी विषयों पर निबंध लेखन।	68–77
इकाई–5	पाठ्यक्रम के रागों की बन्दिशों (विलम्बित ख्याल, मध्यलय ख्याल, तान व तराना आदि) को लिपिबद्ध करना।	78–104
इकाई–6	पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुवपद एवं धमार (दुगुन, तिगुन व चौगुन) लयकारी सहित लिपिबद्ध करना।	105–142
इकाई–7	पाठ्यक्रम की तालों का परिचय व तालों के ठेकों को लयकारी (दुगुन, तिगुन, चौगुन, आड, कुआड व बिआड) सहित लिपिबद्ध करना	143–158

चतुर्थ सेमेस्टर

राग– कोमल ऋृषभ आसावरी, मुल्तानी, श्री, पूरियाधनाश्री, बिलासखानी तोड़ी, ललित

ताल – झूमरा, सूलताल, गजझम्पा व 11मात्रा की ताल

इकाई 1 – पाठ्यक्रम के रागों का पूर्ण वर्णन, तुलना एवं स्वर समूह द्वारा राग पहचानना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 राग कोमल ऋृषभ आसावरी
1.3.1 परिचय
1.3.2 मुख्य स्वर संगतियाँ
1.3.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
1.3.4 राग गांधारी एवं कोमल ऋृषभ आसावरी की तुलना
1.4 राग मुल्तानी
1.4.1 परिचय
1.4.2 मुख्य स्वर संगतियाँ
1.4.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
1.4.4 राग भीमपलासी एवं मुल्तानी की तुलना
1.5 राग श्री
1.5.1 परिचय
1.5.2 मुख्य स्वर संगतियाँ
1.5.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
1.6 राग पूरियाधनाश्री
1.6.1 परिचय
1.6.2 मुख्य स्वर संगतियाँ
1.6.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
1.6.4 राग पूरियाधनाश्री एवं श्री की तुलना
1.7 राग बिलासखानी तोड़ी
1.7.1 परिचय
1.7.2 मुख्य स्वर संगतियाँ
1.7.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
1.7.4 राग मियाँ की तोडी, गुजरी तोड़ी एवं बिलासखानी तोड़ी की तुलना
1.8 राग ललित
1.8.1 परिचय
1.8.2 मुख्य स्वर संगतियाँ
1.8.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
1.9 सारांश
1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला—संगीत में स्नातकोत्तर, चतुर्थ सेमेस्टर (एम0पी0ए0एम0वी0—606) पाठ्यक्रम की प्रथम इकाई है।

प्रस्तुत इकाई में आपको पाठ्यक्रम के रागों का पूर्ण वर्णन दिया जाएगा जिससे आप रागों का पूर्ण परिचय प्राप्त करेंगे। राग में प्रयोग होने वाली मुख्य स्वर संगतियाँ जिनसे राग की स्थापना की जाती है इस इकाई के माध्यम से आप उनको भी जानेंगे। चलन एवं अंग के आधार पर राग एक दूसरे से मिलते हैं। अतः इस इकाई में प्रस्तुत रागों के तुलनात्मक अध्ययन से आप राग को एक दूसरे से पृथक कर पाएँगें तथा रागों को भली भाँति समझने में सक्षम होंगे।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप अपने पाठ्यक्रम के रागों को पूर्णतया समझेंगे और मिलते—जुलते रागों का अध्ययन कर एक दूसरे से अलग कर समझेंगें, जो आपको रागों का सैद्धान्तिक पक्ष प्रस्तुत करने में सहायक होगा। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप रागों का क्रियात्मक स्वरूप में प्रस्तुतीकरण सफलता पूर्वक कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :—

1. पाठ्यक्रम के रागों का पूर्ण परिचय प्राप्त करेंगे।
2. स्वर समूह द्वारा रागों को पहचानेंगे।
3. रागों को एक दूसरे से पृथक कर पाएँगें।
4. रागों की सैद्धान्तिक व्याख्या एवं क्रियात्मक स्वरूप का सुन्दर तथा सफल प्रस्तुतिकरण कर सकेंगे।

1.3 राग कोमल ऋृषभ आसावरी

1.3.1 परिचय :–

यह आसावरी थाट जन्य राग है। आसावरी में ऋृषभ को कोमल कर देने से इस राग को कोमल ऋृषभ आसावरी कहा गया है। दोनों में कुछ विशेष अन्तर नहीं है सिर्फ आसावरी में ग ध नि कोमल तथा कोमल ऋृषभ आसावरी में रे ग ध नि को कोमल कर इसके स्वरूप को कुछ क्लिष्ट बनाकर इस राग को गाते बजाते हैं। वादी स्वर धैवत तथा सम्वादी गंधार है। इसके आरोह में ग एवं नि स्वर वर्जित है तथा अवरोह में सातों स्वरों का प्रयोग होता है इसलिए इस राग की जाति औडव–सम्पूर्ण मानी जाती है। इसका गायन समय दिन का दूसरा प्रहर है। राग का चलन प्रायः आसावरी राग के समान ही है। आजकल इस राग के गायन वादन का आसावरी की अपेक्षा अधिक प्रचलन है। यह राग अत्यधिक लोकप्रिय है तथा सुनने में बहुत सुन्दर प्रतीत होता है।

समप्रकृतिक राग	–	आसावरी, जौनपुरी।
न्यास के स्वर	–	ध, ग।
आरोह	–	सा रे म प, ध, सां।
अवरोह	–	सां नि ध प म ग, रे रे सा।।
पकड़	–	सा रे म, ग रे, म प ध, म ग रे, ऩि ध़ सा ।

1.3.2 मुख्य स्वर संगतियाँ :–

1. सा रे सा, रे ऩि ध़ सा, सा रे म ग रे सा।
2. रे ऩि ध़ सा, रे ग , म ग रे, म ग रे सा।
3. सा रे म प, ध म ग रे , म ग रे , ऩि ध़ सा।
4. म प ध , म ग रे, म प, ध नि ध म ग रे, रे प, ध म ग रे, ग रे सा।
5. म प ध म प, रे म प ध म ग प, सा रे म, रे म प, म प ध म ग रे, ग रे, ऩि ध़ सा।
6. म प ध सां, रें नि ध सां, रें नि ध म ग रे , म प ध, म ग रे, म ग रे सा।
7. सां रें मं गं रें नि ध सां, रें नि ध म ग रे, रे म प, ध म ग रे, ऩि ध़ सा।

1.3.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना :–

1. सा रे म ग रे, ऩि ध़ सा।
2. रे ऩि ध़, म़ प़ ध़ सा, रे ऩि ध़ सा।
3. म प ध नि, ध, म ग रे, ग रे सा।
4. म प ध सां, ध सां, रें नि ध सां।
5. रे म प ध म प, ध म प ध सां।
6. सां रे मं गं रें, ऩि ध, रें नि ध म ग रे सा।

1.3.4 राग गांधारी एवं कोमल ऋृषभ आसावरी की तुलना :–

राग गांधारी	कोमल ऋृषभ आसावरी
1. गांधारी राग आसावरी थाट से उत्पन्न होता है।	1 यह राग भी आसावरी थाट से उत्पन्न होता है।
2. इसकी जाती षाडव–सम्पूर्ण है।	2. इस राग की जाति औडव–सम्पूर्ण है।
3. वादी धैवत तथा सम्वादी गंधार है।	3. वादी धैवत एवं संवादी गंधार है।
4. गायन समय दिन का दूसरा प्रहर है।	4. गायन समय दिन का दूसरा प्रहर है।
5. इस राग में गंधार, धैवत कोमल तथा ऋृषभ एवं निषाद शुद्ध व कोमल दोनों प्रकार के लगते हैं।	5. इस राग में रे ग ध नि स्वर कोमल लगते हैं।
6. इसका आरोह जौनपुरी तथा अवरोह विलासख़ानी तोड़ी की तरह है।	6. इस राग का चलन आसावरी की तरह है परन्तु रे कोमल होने के कारण यह विलासखानी तोड़ी से मिलता है।
7. इसका साधारण चलन आसावारी अंग का है। ग रे[म] म प[सा] यह स्वर विन्यास इस राग का स्वतंत्र अंग है।	7. इस राग की उठान सा रे म प ध सां इस प्रकार है। इसमें रें नि ध म ग, रे नि ध सा, इस राग का स्वर विन्यास है।
8. आरोह– सा रे म प ध नि सां। अवरोह– सां नि ध प, म ग रे सा। पकड़– सा ध ध प, ध म प ग, रे ऽ रे सा।	8. आरोह– सा रे म प ध, सां अवरोह– सां नि ध, म प ग, रे ऽ रे सा।

1.4 राग मुल्तानी

1.4.1 परिचय :–

तीवर मनि कोमल रि–ग–ध, आरोहन रि– ध हानि।
प–सा वादी–सम्वादी ते, गुनि गावत मुल्तानी।। (रागचन्द्रिकासार)

कोमला रिधगा यत्र वादि संवादिनौ पसौ।
आरोहे रिधहीना सा मूलतान्यपरऊगा।। (चन्द्रिकायाम)

मुल्तानी राग की उत्पत्ति तोड़ी थाट से मानी गई है। इस राग में रे ग ध स्वर कोमल तथा म–नि स्वर तीव्र प्रयुक्त होते हैं। इसमें वादी पंचम तथा सम्वादी षडज है। आरोह में रे–ध स्वर वर्जित तथा अवरोह में सातों स्वर प्रयोग किये जाते हैं इसलिए इस राग की जाति औडव– सम्पूर्ण है। इसका गायन समय दिन का चौथा प्रहर मान्य है। इस राग में ऋृषभ, गंधार एवं धैवत इन स्वरों का प्रयोग बड़ी कुशलता के साथ किया जाता है। क्योंकि इन स्वरों के प्रयोग में असावधानी होने के कारण इस राग में श्रोताओं को कभी–कभी तोड़ी राग का आभास होना सम्भव है। मुल्तानी में मध्यम तथा गंधार स्वरों की संगति व पुनरावृत्ति होती है। इस राग को 'परमेल प्रवेशक' राग मानते हैं क्योंकि यह तोड़ी थाट से पूर्वी थाट के

रागों में प्रवेश कराता है। तोड़ी के गंधार को कोमल के स्थान पर शुद्ध कर दें तो पूर्वी थाट हो जाएगा। मुल्तानी गाने में सा, प, नि यह न्यास के स्थान माने जाते हैं तथा भिन्न–भिन्न प्रकार की तानें इन स्वरों पर समाप्त की जाती हैं। कुछ संस्कृत ग्रन्थों में मुल्तानी राग में गंधार तीव्र बताया गया है किन्तु प्रचलित हिन्दुस्तानी संगीत–पद्धति में कोमल गंधार ही माना जाता है। राग मुल्तानी एवं तोड़ी समीप के राग है। मुल्तानी के अवरोह में ऋृषभ–धैवत की मात्रा अधिक होने से तोड़ी की छाया आने लगती है, इसलिए कुछ विद्वान जैसे बिहाग के अवरोह में ऋृषभ और धैवत कम रखते हैं, उसी प्रकार मुल्तानी के अवरोह में भी रखते हैं। जहाँ तोड़ी में सा रे ग, प्रयोग करते हैं तो मुल्तानी में नि़ सा ग अथवा नि़ सा[म] ग स्वर का प्रयोग करते हैं। इससे राग का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है।

समप्रकृतिक राग – तोड़ी

न्यास के स्वर – सा, प नि।

आरोह – नि़ सा, ग मं प, नि सां।

अवरोह – सां नि ध प, मं ग, रे सा।

पकड़ – नि़ सा, मं ग, प ग, रे सा।

1.4.2 मुख्य स्वर संगतियाँ :–

1. नि़ सा, ग रे सा, नि़ सा, नि़ ध़ प़, मं प, नि़, प़ नि़ सा, नि़ सा, ग रे सा।
2. नि़ सा, मं ग, मं ग रे सा, ग मं प, ग, मं ग रे सा, प़ नि़ सा।
3. नि़ सा रे सा, ग रे सा, मं ग रे सा, नि़ सा ग मं प, ग, मं ग रे सा।
4. नि़ सा, मं ग प, मं प ध प, मं ग, प ग, रे सा, नि़, सा ग रे सा।
5. ग मं प नि ध प, मं प ग, ग मं प नि, ध प मं प ग, प ग, प, ग रे सा।
6. नि़ सा ग मं प, ग मं प, नि, सां, प नि सां, गं रें सां, नि सां मं ं गं, रें सां।
7. नि सां रें, नि ध प, मं प ध प, ग, मं ग प ग, मं ग रे सा, प़ नि़ सा, ग रे सा।।

1.4.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना :–

1. नि़ सा ग मं, प, ग, रे सा।
2. नि़ सा मं ग, प, ग रे सा।
3. मं प ध प, ग, ग मं प, नि ध प।
4. नि सां रें सां, नि ध प, ग मं प नि, सां, गं रे सां।
5. ग मं प, ग रे सा, प़ नि़ सा मं ग रे सा।

1.4.4 राग मुल्तानी एवं भीमपलासी की तुलना :–

राग मुल्तानी	राग भीमपलासी
1. मुल्तानी राग तोड़ी थाट का राग है।	1. भीमपलासी काफी थाट का राग है।
2. इस राग में रे ग ध कोमल, म तीव्र तथा निषाद शुद्ध प्रयुक्त होता है।	2. इस राग में ग–नि कोमल तथा शेष स्वर शुद्ध प्रयुक्त होते हैं।
3. वादी पंचम तथा सम्वादी षड्ज हैं।	3. वादी मध्यम तथा सम्वादी षड्ज है।

4. इस राग की जाति औडव–सम्पूर्ण है।	4. इस राग की जाति औडव–सम्पूर्ण है।
5. गायन समय दिन का चौथा प्रहर है।	5. गायन समय दिन का तीसरा प्रहर है।
6. सा, प, नि को मुल्तानी के न्यास के स्वर माने जाते हैं।	6. भीमपलासी में सा म प यह न्यास के स्वर माने जाते हैं।
7. समप्रकृतिक राग तोड़ी माना गया है।	7. समप्रकृतिक राग धनाश्री माना गया है।
8. आरोह में रे–ध स्वर वर्जित है तथा अवरोह सम्पूर्ण है। आरोह– ऩि सा, ग मं प, नि सां। अवरोह– सां नि ध प, मं ग, रे सा।। पकड़– ऩि सा, मं ग, प ग, रे सा।	8. आरोह में रे ध स्वर वर्जित है तथा अवरोह सम्पूर्ण है। आरोह– ऩि सा ग म प नि सां। अवरोह– सां नि ध प, म ग रे सा। पकड़– ऩि सा म, म ग, प म ग, म ग रे सा।

1.5 राग श्री

1.5.1 परिचय :–

कोमल रिध तीवर निगम प–रि संवादीवादि।
ध–ग बरजे अरोहि में यह श्री राग अनादि।। (रागचन्द्रिकासार)

यत्र तीव्रा गमनयो वादिसंवादिनो रिपौ।
आरोहे न धगौ सायं श्रीरागो गीयते बुधैः।। (रागचन्द्रिकायाम)

श्री राग, पूर्वी थाट जन्य राग है। इसके आरोह में गंधार तथा धैवत स्वर वर्ज्य है तथा अवरोह सम्पूर्ण है इसलिए इस राग की जाति औडव–सम्पूर्ण है। वादी स्वर ऋृषभ तथा सम्वादी स्वर पंचम हैं। इस राग का गायन समय सूर्यास्त की बेला माना जाता है। इस राग की प्रकृति अत्यधिक गम्भीर है। कुशल गायक जब इस राग में ऋृषभ व पंचम का संगति करते हैं तब यह सुनने में बहुत अच्छा लगता है। सांयकालीन रागों में 'श्री' राग का स्वरूप बिल्कुल स्वतंत्र है। इस राग में ''सा रे[ग] रे सा'' यह स्वर समुदाय बहुत वैचित्रयदायक है। यह अत्यन्त लोकप्रिय राग है। श्री राग में ऋृषभ, धैवत कोमल, मध्यम तीव्र तथा अन्य स्वर शुद्ध लगते हैं।

न्यास के स्वर – रे, प।
आरोह – सा रे रे, सा, रे, मं प, नि सां।
अवरोह – सां, नि ध, प, मं ग रे, ग रे, रे, सा।।
पकड़ – सा, रे रे, सा, प, मं ग रे, ग रे, रे, सा।

1.5.2 मुख्य स्वर संगतियाँ :–

1. सा, रे॒ग रे॒ स, नि़ सा रे॒, नि़ ध़ प़, प़ नि़ सा, रे॒ग रे॒ग, सा, सा, रे॒ रे॒ मं प, मं प ध॒ प, प, रे॒, रे॒ मं प, ध॒, मं ग रे॒, ग रे॒, रे॒ग रे॒ग, सा।
2. सा रे॒ रे॒, ग रे॒, मं ग रे॒, प मं ग रे॒, ध॒ प मं ग रे॒, नि ध॒ प मं ग रे॒, रे॒ रे॒, प, रे॒, ध॒ मं ग रे॒, रे॒ रे॒ प, रे॒ग रे॒ग, सा।
3. मं़ ध़॒ प़, नि़ नि़ सा, प़ नि़ सा, नि़ सा रे॒ सा, मं ग रे॒ सा, मं प ध॒, मं ग रे॒ सा, सां, नि ध॒, प, मं प नि ध॒ प मं ग रे॒, ध॒ मं ग रे॒ सा।
4. नि़ सा रे॒ मं प ध॒ प, मं प नि सां, रें॒ रें॒ सा, नि सां रें॒, नि ध॒ प, मं प सा, रें॒ रें॒, मं॑ गं॒ रें॒, गं रें॒, रें॒ रें॒ सां।
5. नि़ सा, प, रे॒, प, मं, प, नि ध॒, प, सां, नि ध॒, नि ध॒, प, रें॒, नि ध॒ प, मं प ध॒, मं ग रे॒, मं ग रे॒, ग रे॒, रे॒, सा, नि़ रे॒ सा।

1.5.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना :–

1. सा रे॒ रे॒, मं प, मं प ध॒ मं प, मं ग रे॒, ग रे॒, सा।
2. सा, नि़ सा, रे॒, मं ग रे॒, ध॒ मं ग रे॒, ग रे॒, सा।
3. नि़ सा, रे॒ नि़ ध़॒ प़ , नि़ ध़॒, प, म़॑ प़ नि़ सा, रे॒, ग रे॒।
4. नि़ सा, प, रे॒, प, मं प, मं, रे॒, ग, रे॒ सा, नि़ रे॒ सा।
5. म" प नि ध॒ मं ग रे॒, ग रे॒ रे॒, मं ग रे॒, ग रे॒, सा।

1.6 राग पूरिया धनाश्री

1.6.1 परिचय :–

कोमल रि–ध तीवर निगम है पंचम सुर वादि।
यह पूरियाधनासिरी जहाँ रिखब संवादि।। (रागचन्द्रिकासार)

तीव्रास्तु निगमा यस्यां कोमलौ धैवतर्षभौ।
पांशा संवादि ॠृषभा सायं पूर्याधनाश्रिका।। (चन्द्रिकायाम)

पूरियाधनाश्री राग पूर्वी थाट से उत्पन्न होता है। इस राग की पूर्वी राग से अलग रखने के लिए विशेष ध्यान रखना पड़ता है। पूर्वी राग में दोनों मध्यमों (तीव्र एवं शुद्ध) को प्रयोग होता है किन्तु पूररियाधनाश्री में केवल तीव्र मध्यम ही प्रयुक्त होता है। इससे भेद स्पष्ट हो जाता है। इस राग का वादी स्वर पंचम तथा सम्वादी ॠृषभ है तथा पूर्वी राग में वादी गंधार तथा संवादी निषाद है। सातों स्वरों का प्रयोग होने के कारण इस राग की जाति सम्पूर्ण–सम्पूर्ण है। गायन समय संध्याकाल सर्वमान्य हैं। इस राग में ॠृषभ, धैवत, कोमल, मध्यम तीव्र एवं शेष स्वर शुद्ध लगते हैं। पूरिया धनाश्री के गायन में मं ग, मं रे॒ ग तथा रें॒ नि ध॒ प ये स्वर समुदाय राग वाचक तथा वैचित्र्य दायक हैं। यह अत्यन्त मधुर एवं लोकप्रिय राग है।

समप्रकृतिक राग	–	पूरिया
न्यास के स्वर	–	ग, प
आरोह	–	ऩि रे, ग मं प, ध प, नि सां।
अवरोह	–	रें नि ध प, मं ग, मं रे ग, रे सा।
पकड़	–	ऩि रे ग, मं प, ध प, मं ग, मं रे ग, ध मं ग, रे सा।

1.6.2 मुख्य स्वर संगतियाँ :–

1. ऩि रे सा, ग रे सा, रे ऩि ध़ प़, म़ं ध़ ऩि ध़ प़, म़ं ध़ ऩि रे ग, मं रे ग, रे ग, मं ग रे सा।
2. ऩि रे ग, मं ग, मं रे ग, मं ग रे सा, ऩि सा ग मं प, मं ध प, मं प, मं ग, नि ध, प, मं ग, मं रे ग, मं ध मं ग, रे सा।
3. प, ध प, नि ध प, रें नि ध प, मं ध नि मं ध प, मं प मं ग, रे ग प, रे ग, रे सा, ऩि रे सा, प, प ध, प।
4. म ध नि रें सां, नि रें गं रें, सां नि ध प, मं ध नि ध प, मं ध प, मं प म ग, मं रे ग, ऩि रे ग मं ध मं ग रे सा।
5. ऩि रे ग मं ध नि रें गं मं ग, मं रें गं, मं गं रें सा, रें नि ध प, मं ध नि ध प, मं प मं ग, मं रे ग, ध मं ग रे सा, ऩि रे ग प, मं ध प।।

1.6.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचनानना :–

1. ऩि रे सा, ग रे सा, मं ग, म रे ग।
2. ग प, मं ध प, मं प, मं ग, मं रे ग, रे सा।
3. मं ध नि रें सां, रें नि ध प, मं रे ग, मं ग रे सा।
4. नि रें गं, मं गं, मं रें गं, मं गं रें सां।
5. मं प मं ग, मं रे ग, ध मं ग रे सा।
6. ऩि रे ग प, मं ध प, नि ध प, मं ग, मं रे ग।

1.6.4 राग पूरियाधनाश्री एवं राग श्री की तुलना :–

राग श्री	पूरियाधनाश्री
1. श्री राग पूर्वी थाट जन्य राग है।	1. पूरियाधनाश्री पूर्वी थाट जन्य राग है।
2. इसके आरोह में गंधार धैवत स्वर वर्जित है।	2. इसमें सातों स्वरों का प्रयोग होता है।
3. जाति औडव–सम्पूर्ण है।	3. जाति सम्पूर्ण–सम्पूर्ण है।
4. वादी स्वर रे तथा सम्वादी प है।	4. वादी स्वर प तथा सम्वादी रे है।
5. गायन समय सूर्यास्त की बेला माना जाता है।	5. गायन समय संध्याकाल मान्य है।
6. श्री राग में रें–ध स्वर कोमल तथा म	6. इसमें म तीव्र एवं रे–ध कोमल हैं अन्य

तीव्र है।

7. इस राग में सा रे रे सा, यह स्वर समुदाय प्रयोग किया जाता है।
8. श्री राग को गाना कठिन होता है।
9. स्वर संगतियाँ – सा रे रे सा, रे रे मं प, मं प ध प, प रे, रे मं प, ध मं ग रे।
10. न्यास – रे रे , प
11. **आरोह** – सा रे रे, सा, रे, मं प, नि सां।
 अवरोह –सां, नि ध, प, मं ग रे, ग रे, रे, सा।।
 पकड़ – सा रे रे, सा, प मं ग रे, ग रे, रे, सा।

स्वर शुद्ध हैं।

7. इस राग में मं ग, मं रे ग स्वर राग स्वरूप स्पष्ट करता है।
8. पूरियाधनाश्री प्रचार में अधिक है।
9. स्वर संगतियाँ – ऩि रे ग, मं ग मं रे ग, ध मं ग रे सा, ऩि रे ग प, मं ध प।
10. न्यास – ग, प।
11. **आरोह** – ऩि रे, ग मं प, ध प, नि सां।
 अवरोह – रें नि ध प, मं ग, मं रे ग, रे सा।
 पकड़ – ऩि रे ग, मं प, ध प, मं ग, मं रे ग, ध मं ग, रे सा।

1.7 राग बिलासखानी तोडी़

1.7.1 परिचय :–

निसौ रिसौ धनिसाग रिगौ मगौ, रिगौ रिसौ।
धनि धपौ गधौ पगौ रिगौ मगौ रिसौ।
बिलासखानीका तोडी़ धगसंवादमंडिता।। (अभिनवरागमजर्याम।। 197।।)

आज से कुछ वर्ष पूर्व राग बिलासखानी तोडी़ अप्रचलित रागों की श्रेणी में था। यह राग एक प्राचीन प्रकार है इस राग की उत्पत्ति भैरवी थाट से मानी जाती है। इसर राग का आविष्कार सुप्रसिद्ध गायक सम्राट तानसेन के पुत्र बिलासखाँ ने किया। इस राग के नाम से भी यही संकेत मिलता है। आजकल इस राग को सर्व सम्मति से भैरवी थाठ के अन्तर्गत माना जाता है क्योंकि इसमें सभी स्वर भैरवी के हैं। इस राग का वादी स्वर धैवत तथा सम्वादी गंधार है। इसका गायन समय प्रातः काल है तथा कुछ विद्वान इसका गायन समय दिन का द्वितीय प्रहर भी मानते हैं। प्रस्तुत राग के वादी सम्वादी, थाट एवं गायन समय के विषय में भी सभी विद्वान एक मत हैं परन्तु इसकी जाति के सम्बन्ध में गुणीजनों में काफी मतभेद है। इसकी जाति कुछ लोग सम्पूर्ण–सम्पूर्ण तथा कुछ लोग षाडव–षाडव मानते हैं। लेखक के मत से षाडव–षाडव जाति मानना ही अधिक उचित है।

पंडित भातखण्डे जी की क्रमिक पुस्तक मालिका के छठे भाग में बिलासखानी तोडी़ में पाँच बन्दिशें हैं जिनमें केवल एक बन्दिश 'जबते मन मोहन' जो कि झूमरा ताल निबद्ध है, सम्पूर्ण–सम्पूर्ण जाति के आधार पर रची गई है । क्योंकि उसमे ग म ध ग ध प ग प इस प्रकार स्वरों का प्रयोग हुआ है। बाँकी के दो बिलम्बित ख्याल तथा एक चारताल तथा एक धमार है। इन चारों में आरोह में मध्यम एवं अवरोह में

पंचम वर्जित करके षाडव–षाडव जाति के आधार पर इनकी रचना की गई है जिसमें से प्रसद्धि ख्याल 'नीके घुँघरिया ठुमकत चाल चलत हैं' इस बन्दिश के स्थाई व अन्तरे में कही भी पंचम स्वर का प्रयोग नहीं किया गया है। आरोह–अवरोह में पंचम वर्जित षाडव जाति की बिलासखानी का यह स्वरूप बिलासखानी तोड़ी का एक भिन्न प्रकार माना जा सकता है।
इस राग में आसावरी एवं तोड़ी का सुन्दर योग है। आरोह में मध्यम तथा निषाद स्वर दुर्बल हैं। इन स्वरों का उपयोग यदि कुशलता से सावधानी पूर्वक किया जाए तो भैरवी राग से यह सहज रूप में बचाया जा सकता है।

आरोह – सा रे ग, प, ध, नि ध सां।
अवरोह – सां रें नि ध, म ग रे ग, रे सा।।
पकड़ – ध म ग रे ग, रे ऩि ध़, सा।

1.7.2 मुख्य स्वर संगतियाँ :–

1. सा, रे ऩि, सा, रे ग, रे ग, म ग, रे, सा, सा रे ग प, ध म ग, रे ऩि ध़ सा।
2. सा रे ध़, सा, रे ग, म ग, रे ग रे सा ग प ध नि ध म ग रे ग रे सा।
3. सा रे ग प ध नि ध सां, रें नि ध सां, ध गं, रें गं रें सां, नि ध सां।
4. प ध नि ध, म ग म ग रे सा, सा रे ग, प ध म ग रे सा।
5. रें नि ध नि ध, म ग, रे ऩि ध़ सा।

3.7.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना :–

1. सा रे ग प ध म ग रे ग रे सा।
2. ग रे, नि ध़ , प़ ध़ सा रे ग।
3. प ध नि ध, म ग, रे ग रे सा।
4. सा रे ग, ध़ ग, रे ग प, ध म ग।
5. रें नि ध सां, रें गं रें सां नि ध म ग, रे ऩि ध़ सा।

1.7.4 राग मियॉ की तोडी, गुजरी तोडी एवं बिलासखानी तोडी की तुलना :–

	मियाँ की तोड़ी	गुजरी तोड़ी	बिलासखानी तोड़ी
1.	यह राग तोड़ी थाट जन्य है।	गुजरी तोड़ी का थाट तोड़ी है।	बिलासखानी तोड़ी भैरवी थाट का राग है।
2.	रे ग ध स्वर कोमल तथा मध्यम तीव्र (मं)लगता है।	रे ग ध कोमल, मध्यम तीव्र (मं) प्रयुक्त होता है।	इस राग में रे ग ध नि स्वर कोमल लगते हैं।
3.	पंचम स्वर का प्रयोग।	पंचम स्वर वर्जित।	सातों स्वरों का प्रयोग।
4.	ठस राग की जाति सम्पूर्ण–सम्पूर्ण है।	इस राग की जाति षाडव–षाडव है।	कुछ विद्वान इसकी जाति सम्पूर्ण–सम्पूर्ण तथा कुछ षाडव–षाडव मानते हैं।

5.	वादी धैवत तथा सम्वादी गंधार स्वर है।	वादी धैवत तथा सम्वादी गंधार है। कुछ विद्वान इस राग में ऋृषभ सम्वादी मानते हैं।	वादी स्वर धैवत तथा सम्वादी गंधार है।
6.	गायन समय दिन का दूसरा प्रहर मान्य है।	गायन समय दिन का दूसरा प्रहर मान्य है।	इसका गायन समय प्रातः काल है।
7.		कुछ विद्वान इस रग का सम्बन्ध गुजरात तथा गुजरी प्रान्त से मानते हैं।	इस राग का आविष्कार तानसेन के पुत्र विलासखाँ ने किया ।
8.	इस राग का स्वर चलन सा रे ग, रे ग रे सा, रे ग प, मं प, ध मं ग, रे ग रे सा।	गुजरी तोड़ी का स्वर चलन रे ग मं ग, ध मं ग, रे ग रे सा, ध़ नि़ सा।	विलासखानी तोड़ी का स्वर चलन सा रे ग, प, ध, नि ध सां, रें नि ध म, ग रे नि़ ध़ सा।

1.8 राग ललित

1.8.1 परिचय :–

द्वै मध्यम कोमल रिखब पंचम सुर बरजोई।
सम संवादी वादि ते ललित राग शुभ होई।। **चन्द्रिकासार**

मृदु रिनिधगास्तीव्रा मद्वयं पंचयो न हि।
सम संवादि वादी च गीतान्ते ललितः शुभः।। **चन्द्रिकायाम्**

ललित राग मारवा थाट जन्य राग है। पंचम वर्ज्य होने के कारण इसकी जाति षाडव–षाडव मानी जाती है क्योंकि इसके आरोह तथा अवरोह दोनों में छः स्वरों का प्रयोग होता है। वादी स्वर शुद्ध मध्यम एवं सम्वादी षड्ज है। उतरांग प्रधान होनें के कारण ललित राग का गायन समय रात्रि का अन्तिम प्रहर माना जाता है। इस राग में दोनों मध्यम (तीव्र मं एवं शुद्ध म) का प्रयोग होता है। ध मं ध मं म यह स्वर–समुदाय बार–बार इसमें दिखाई देता है। इस स्वर– समुदाय से तथा नि़ रे ग म मं म ग, इन स्वरों से यह राग तुरन्त पहचान में आ जाता है। प्रातः काल में यह एक बिल्कुल स्वतंत्र रूप है। कुछ इस राग को शुद्ध धैवत युक्त मिलता है, किन्तु यहां पर इस राग की शुद्ध धैवत से ही लिया जाता है। इस राग में ऋृषभ कोमल तथा शेष स्वर शुद्ध लगते हैं।

समप्रकृतिक राग – पूरिया, मारवा।
न्यास के स्वर – शुद्ध मध्यम, गंधार।
आरोह – नि़ रे ग म, मं म ग, मं ध, सां।
अवरोह – रें नि ध, मं ध मं ग, म रे, सा।।
पकड़ – नि़ रे ग म, ध मं ध मं म, ग।

1.8.2 मुख्य स्वर संगतियाँ :–

1. ग, रे सा, नि़ रे ग म, ग, म , मं, म, मं ग, रे ग, मं ग रे सा, नि़ रे ग म, मं म ग, रे, नि़ रे सा।
2. सा, नि़ रे सा, नि़ रे ग रे सा, नि़ रे ग म मं ग, मं ग रे सा, नि़ रे ग मं ध मं म ग, ध मं ध मं म, ग म मं म ग, रे ग, म ग रे सा।
3. नि़ रे ग म, मं म ग, ध मं म, नि़ रे ग मं ध नि ध मं म, ध मं म, नि़ रे सा, ग रे सा, रें नि ध मं म, ग म मं म ग, रे ग, मं ग रे सा।
4. नि़ रे सा सा, ग रे सा सा, ग म मं ग मं ग रे सा, ग मं ध मं म ग मं ग रे सा , गमंधनिधम धमं म ग, मं ग रे सा, नि रे ग म, मं म।
5. सां, नि सां, मं ध सां , ग म, मं ध, सां, नि़ रे, ग म, ध मं, ध, सां, नि रे सां, गं रें सां, नि रें गं मं मं मं गं रें सां, नि रें नि ध, मं ध मं म, ग म मं मग, रे ग , मं ग रे सा, नि़ रे ग म, मं म, ग।

1.8.3 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना :–

1. नि़ रे सा, नि़ रे ग म, मं म ग।
2. ध मं, ध मं म ग, रे ग, मं ग रे सा।
3. नि़ रे ग मं ध नि ध मं म, ग, म मं म ग।
4. मं ध सां, रें नि ध, मं ध मं म, मं ग रे सा।
5 नि़ रे ग, म, ग म, मं म, मं ध मं, म, मं ग रे सा

अभ्यास प्रश्न

क. लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. कोमल रिषभ आसावरी राग में कौन–कौन स्वर कोमल हैं?
2. मुल्तानी राग की जाति बताइये?
3. 'श्री' राग का गायन समय कौन सा है?
4. मं प, मं रे ग रे ग, मं ग रे सा किस राग के स्वर हैं?
5. पाठ्यक्रम के तोडी़ अंग के रागों के नाम लिखिए?
6. बिलासखानी तोडी़ राग के आविष्कारक कौन हैं?
7. नि़ रे ग म, मं म ग यह स्वर समुदाय किस राग के हैं?

ख. निम्न स्वर–समुदाय द्वारा राग पहचानिये :–

8. सा रे ग प, ध म ग रे, नि़ ध़ सा।
9. सा रे रे मं प, रे म प ध, मं ग रे, ग रे रे सा।

1.9 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप पाठ्यक्रम के रागों का पूर्ण परिचय प्राप्त कर चुके हैं। राग में प्रयुक्त होने वाले स्वर, राग का वादी, सम्वादी, राग के पकड़ स्वर एवं राग के मुख्य स्वर समुदाय जिनके द्वारा राग को एक दूसरे से अलग करके पहचाना जा सकता है इन सबका अध्ययन राग के परिचय में कराया गया है। इस इकाई में आपने अंगों के आधार पर तथा राग के चलन के आधार पर समान प्रकार के रागों का तुलनात्मक अध्ययन भी किया है जिससे आप एक राग से दूसरे राग को पृथक कर उसके सैद्धान्तिक स्वरूप को भी समझेंगे और इसके साथ रागों को क्रियात्मक रूप में सफलता पूर्वक कर पाएँगें। स्वर समूहों द्वारा राग पहचानना का अध्ययन भी आपने इस इकाई में किया है जिससे आप स्वर समूह को पढ़कर तथा सुनकर रागों को पहचान सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप पाठ्यक्रम के रागों को पूर्ण रूप से समझेंगे एवं उसके सैद्धान्तिक तथा क्रियात्मक पक्ष को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत कर सकने में सक्षम होंगे।

1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क. लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. रिषभ, गन्धार, धैवत
2. औडव–सम्पूर्ण
3. दिन का अन्तिम प्रहर (सूर्यास्त)
4. पूरियाधनाश्री
5. मियाँ की तोड़ी, विलासखानी तोड़ी, गुजरी तोड़ा
6. विलास खॉ
7. राग ललित।

ख. निम्न स्वर–समुदाय द्वारा राग पहचानिये :–

8. विलासखानी तोड़ी
9. श्री राग

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पं0 विष्णुनारायण, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग – 1, 2, 3, 4, 5 व 6, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. बसंत, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. झा, पं0 रामाश्रय ‘रामरँग’, अभिनव गीतांजली।

1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम के किन्हीं चार रागों का पूर्ण परिचय प्रस्तुत कीजिए।
2. राग गांधारी तथा कोमल रिषभ आसावरी की तुलना कीजिए।
3. अपने पाठ्यक्रम के पूर्वी थाट के रागों का पूर्ण परिचय तथा उसकी मुख्य स्वर संगतियाँ लिखिए।

इकाई 2 – संगीतज्ञों(शारंगदेव, बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर, पं0 जसराज, मल्लिकार्जुन मंसूर, केसरबाई केरकर, आचार्य बृहस्पति, पं0 कुमार गन्धर्व व किशोरी अमोणकर) का जीवन परिचय व भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 संगीतज्ञों की जीवन शैली एवं योगदान
  2.3.1 शारंगदेव
  2.3.2 बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर
  2.3.3 पं0 जसराज
  2.3.4 मल्लिकार्जुन मंसूर
  2.3.5 केसरबाई केरकर
  2.3.6 आचार्य बृहस्पति
  2.3.7 पं0 कुमार गन्धर्व
  2.3.8 किशोरी अमोणकर
2.4 सारांश
2.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.7 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला—संगीत में स्नातकोत्तर, चतुर्थ सेमेस्टर (एम0पी0ए0एम0वी0—606) पाठ्यक्रम की दूसरी इकाई है। इससे पहले की इकाई के अध्ययन के बाद आप पाठ्यक्रम के रागों का पूर्ण वर्णन, तुलना एवं रागों का पूर्ण परिचय जान चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में भारतीय संगीत के लिए समर्पित विद्वान संगीतज्ञों ने जीवन तथा संगीत के प्रति उनके योगदान का विस्तार से वर्णन प्रस्तुत किया गया है। भारतीय संगीत आज जिस स्थिति में अवस्थित है उस तक पहुँचाने में देश के विभिन्न संगीतज्ञों का योगदान अविस्मरणीय है। भारतीय संगीत के उत्थान में संगीतज्ञों की विशेष भूमिका है। भारतीय संगीत के क्षेत्र में उनकी गहन साधना तथा उनके विचारों को भी प्रस्तुत किया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान को समझा सकेंगे तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को समझा सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :—

- बता सकेंगे कि विद्वान संगीतज्ञों का संगीत के क्षेत्र में क्या योगदान है।
- समझ सकेंगे कि संगीतज्ञों को एक मुकाम तक पहुँचने में निरन्तर कितनी कठोर साधना करनी पड़ती है।
- संगीत के महत्व को संगीतज्ञों एवं शास्त्रकारों के माध्यम से जानते हुए विश्लेषण कर सकेंगे।
- संगीत कलाकार के अपनी कला सम्बन्धी तीन मुख्य उद्देश्य होते हैं:
    1. अपनी कला द्वारा श्रोताओं को श्रेष्ठतम संगीत का रसास्वादन कराना।
    2. कला सम्बन्धी अपने ज्ञान का विस्तार करना। तथा
    3. कला में पूर्ण सिद्धि करके अपनी इच्छा पूर्ति करना।

2.3 संगीतज्ञों की जीवन शैली एवं योगदान

2.3.1 शारंगदेव :–

जीवन परिचय – उत्तर भारत के शास्त्रीय संगीतज्ञों में शारंगदेव एक महान शास्त्रकार (संगीतज्ञ)थे। इनके जन्म के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ भी प्राप्त नहीं है लेकिन इनका जन्म तेरहवीं शताब्दी पूर्वाध में सन् 1210 से 1247 ई0 के मध्य में माना जाता है। यह देवगिरि (दौलतबाद) के यादव वंशीय राजा के दरबारी संगीतज्ञ थे।

शारंगदेव ने ''संगीत रत्नाकर'' नामक ग्रंथ की रचना की, जो कि उत्तर भारत में शास्त्रीय संगीतज्ञों के लिये उनके नाम से अधिक जाना जाता रहा। भारतीय संगीत का आधार स्तम्भ संगीत रत्नाकर पग–पग पर अपनी महत्ता दर्शाता है।

तेरहवीं शताब्दी में सम्पूर्ण भारत में एक ही पद्धति प्रचलित थी। उत्तरी एवं दक्षिणी संगीत पद्धति में कोई विभाजन न था इसलिये दोनों पद्धतियों में इसे आधार ग्रंथ माना गया। हम सभी जानते है कि यह ग्रंथ संस्कृत की सूत्र शैली में लिखा गया है अतः इसको समझने हेतु संस्कृत का ज्ञान होना आवश्यक है। इस ग्रंथ के काल निर्णय के सम्बन्ध में कोई कठिनाई नहीं होती क्योंकि ग्रंथ के मंगलाचरण में ही इन्होनें परिचय निम्नलिखित रूप से दिया है :–

"मेरा वंश कश्मीर का है और उसके मूलपुरूष हैं वृषगण। उसी वंश के भास्कर नामक एक पुरूष कश्मीर से दक्षिण में चले आये थे। उनके पुत्र हैं श्री सोठल जिनका मैं पुत्र हूँ। श्री सोठल के आश्रयदाता राजा सिंघन थे।"

शांरगदेव की शिक्षा–दिक्षा राजाश्रय में ही हुई। इनका **"संगीत रत्नाकर"** सर्वांगीय रूप तथा विस्तृत विषय, प्रतिपादन की दृष्टि से यह सम्पूर्ण एवं अनूठा ग्रंथ है। भारत में जब भारतीय संस्कृति को बचाने एवं विदेश आक्रमण के कारण राजनैतिक उठापठक का माहौल था। ऐसे समय में अव्यवस्थित कर उनका अध्ययन, मनन, चिन्तन करके उसके निचोड़ को ग्रंथ रूप दे दिया। शास्त्रीय संगीत का एक बड़ा युग बीत जाने पर भी आज तक ऐसा प्रामाणिक एवं विशाल, श्रेष्ठ ग्रंथ उपलब्ध नहीं हो पाया। निश्चित ही भरत से लेकर शारंगदेव तक काल में संगीत का कोई ग्रंथ प्राप्त नहीं है। गांधर्व तथा उसके परवर्ती विकास हेतु शारंगदेव का ही ग्रंथ प्रामाणिक है।

"संगीत रत्नाकर" के श्लोकों का उदाहरण दिये बिना कोई भी ग्रंथकार संगीत शास्त्र सम्बन्धी अपने विचारों को व्यक्त नहीं करता है। ग्रंथकार अपने विचारों की पुष्टि शारंगदेव के श्लोकों के माध्यम से करते हैं।

संगीत रत्नाकर पर सात टीकाओं का सृजन हुआ है। इस काल में दो ही टीकायें उपलब्ध हैं। एक सिंह भूपाल की तथा दूसरी कल्लिनाथ की। शारंगदेव ने "संगीत रत्नाकर" ग्रंथ में संगीत की परिभाषा दी है–

"गीतं वाद्यं च नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते।
मार्गी देशीर्ति तदद्वेध मार्गः स उच्यते।

देशे–देशे जनानां यद्रच्या हृदय रनजकम्
गीतं च नादन् नृत्तं तद्देशात्यभिधीयते।"

अर्थात् गीत, वाद्य तथा नृत्य ये तीनों ही संगीत कहलाते हैं। मार्ग और देशी भेद से संगीत दो प्रकार का है– मार्ग वह है जिसे ब्रह्मादि देवताओं ने खोज निकाला है और भारतीय मुनियों ने भगवान शंकर के समक्ष प्रस्तुत किया है, वह संगीत कल्याण करने वाला है। जो गीत, वादन और नृत्य के साथ देश विदेश में जनरूचि के अनुकूल लोक का हृदय रंजक होता है, वह देशी कहलाता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि देवपूजन हेतु जो संगीत होता है वह मोक्षप्राप्ति का साधन है। वही संगीत मार्गी संगीत के नाम से जाना जाता है। मार्गी संगीत में धर्म एवं नियम दोनों की प्रधानता है। देशी संगीत जन से निकला और जनरंजन करने वाला हुआ साधारण जनता द्वारा देश, काल परिस्थितिवश जो संगीत उन्मुक्त कंठ से प्रस्फुटित हुआ वह संगीत ऐसा माना जाता है। शारंगदेव के समय से ही मार्गी संगीत का ह्यास होना प्रारम्भ हो गया और बाद में पूर्णतः लुप्त हो गया। अब केवल देशी संगीत ही प्रचार–प्रसार में है।

शारंगदेव के **"संगीत रत्नाकर"** नामक ग्रंथ में सात अध्याय हैं। स्वराध्याय, रागविवेकाध्याय, प्रकीर्णाध्याय, तालाध्याय, वाद्याध्याय व नर्तनाध्याय। प्रथम अध्याय में नाद का स्वरूप नादोत्पत्ति और उसके भेद सारणाचतुष्टयी, ग्राम, मूर्च्छना, तान निरूपण, स्वर व जाति साधारण वर्ण, अलंकार और जातियों का विस्तृत वर्णन है। द्वितीय अध्याय में ग्राम राग और उनके विभाजन तथा रागांग राग उनके शब्दों का स्पष्टीकरण और देशी राग और उनके नामों का उल्लेख है। तृतीय अध्याय में वाग्गेयकार के लक्षण, गीत के गुण–दोष और स्थाय आदि का विवरण है।

चतुर्थ अध्याय में गान में निबद्ध और अनिबद्ध भेद, धातु व प्रबंध के भेद और अंगों आदि का विवरण उपलब्ध है। पंचम अध्याय में तालों के विषय में वर्णन प्राप्त है। छठे अध्याय में वाद्यों का वर्गीकरण चार प्रकार से किया है। घन वाद्यों के भेद, वादन विधि और वादकों के गुण–दोष कथित हैं। सातवें अध्याय में नृत्य, नाट्य और नृत का विषय प्रस्तुत किया गया है।

शारंगदेव ने अपने समय में प्रचलित समस्त गेय रागों को दस वर्गों में विभाजित किया है– ग्राम राग, राग, उपराग, भाषा, विभाषा, अन्तरभाषा, उपांग, क्रियांग, भाषांग व रागांग। उन्होंने कुल 11 विकृत स्वर, सात शुद्ध स्वर व अठारह जातियां मानी हैं। इन जातियों का विस्तारशः वर्णन करने के उपरान्त ग्राम रागों को जातियों से उत्पन्न माना है। शारंगदेव के स्वर और राग आधुनिक स्वर और रागों से साम्यता नहीं रखते। इसका कारण यह है कि उन्होंने जो श्रुत्यन्तर स्थापित किये थे वे आज के श्रुत्यन्तर से भिन्न हैं।

भरतकृत "नाट्यशास्त्र" एवं बृहद्देशीय के आधार पर शारंगदेव ने अपने ग्रंथ का सृजन किया था। किन्तु उनके काल में जातियों का लोप हो चुका था और रागों ने उनका स्थान ने लिया था। उन्होंने इन्हीं रागों का वर्णन अपने ग्रंथ में किया है। उन्होंने प्राचीन जातियों से प्रचलित रागों का सम्बन्ध जोड़ने का प्रयास किया पर वे सफल न हो सके।

पं0 भातखण्डे के मतानुसार – "शारंगदेव ने संगीतरत्नाकर ग्रंथ की रचना करके संगीत जगत को निश्चित ही एक ऐसी अक्षय, विचारोपयोगी, निरन्तर शोधपरक, चिराग व अमरकोष प्रदान किया है जिस पर गम्भीरता से कार्य करने की आवश्यकता है।"

संगीत रत्नाकर का संगीत देश के किसी भी भाग में स्पष्टतः नहीं समझा जा सकता। भारत में आधुनिक काल में जो विद्वान हैं उनमें से एक भी "रत्नाकर" में वर्णित रागों को विस्तारशः समझाने में समर्थ नहीं हो सके। "रत्नाकर" उत्तरी या दक्षिणी किस संगीत प्रणाली के प्रामणिक ग्रंथों का माना जाये? कुछ विद्वान इसे उत्तरी ग्रंथों में स्थान प्रदान करने के लिये तत्पर हैं तो दूसरी ओर

कुछ संकेत करते हुए इसे निश्चित रूप से दक्षिणी ग्रंथ मानते हैं। उन्होंने अपने मेलों तथा ग्रंथ के रागों की तुलना तक कर डाली है। परन्तु दक्षिणी ग्रंथकारों ने भी रत्नाकर के संगीत का स्पष्ट अनुसरण नहीं किया।

पं0 भातखण्डे के अनुसार – पिछली पांच शताब्दियों के संस्कृत ग्रंथकारों ने अपने प्रामाणिक ग्रंथों में संगीत रत्नाकर को उद्धृत किया है, चाहे वह उचित हो या त्रुटिपूर्ण।

जो कुछ भी हो इसमें संदेह नहीं है कि आज यह ग्रंथ हमारे प्रामाणिक संगीत ग्रंथों में प्रथम एवं प्रमुख मान्य हैं। ग्रंथ निश्चित ही जटिल एवं दुरूह भी है। रत्नाकर के नाम एवं ख्याति से सभी परिचित हैं। फिर भी ग्रंथ के रहस्यों को समझने की कहीं चेष्टा नहीं हुई हैं। गत शताब्दी में ग्रंथ के हिन्दी अनुवाद के एक या दो प्रयास हुए पर अनुवादकों ने शारंगदेव के शुद्ध सप्तक तक को नहीं समझा। इसीलिये शारंगदेव के संगीत को वे समझने में असमर्थ रहे। रत्नाकर जैसा महान ग्रंथ अपनी समाप्ति के 150 वर्षों में ही पूर्णतयाः दुर्बोध हो गया। कतिपय आलोचकों के अनुसार शारंगदेव ने ग्राम, मूर्च्छना और जाति की पुरानी पद्धति में 'रत्नाकर' की रचना की। जो आगामी लेखकों के लिये पूर्णतया दुर्बोध हो गया, क्योंकि उस समय तक जाति से रागोप्पत्ति की पद्धति का बहिष्कार हो चुका था और पूर्ण संगीत मात्र एक ग्राम (षडज ग्राम) पर ही अपने शुद्ध व विकृत स्वरों तथा सप्तकों के साथ सीमित हो गया था। आलोचकों का कथन है कि– शारंगदेव ने कहीं भी यह स्पष्ट नहीं किया कि वीणा के तारों को किन–किन स्वरों पर बांधा जाये और परदे किस प्रकार ठीक किये जायें।

इन सब बातों को जानने के लिये आवश्यक है कि "रत्नाकर" के पूर्ववर्ती कुछ उपलब्ध ग्रंथ का अध्ययन किया जाए। इस ग्रंथ के पूर्व का मात्र एक ग्रंथ उपलब्ध हुआ है। **'दत्तिल कृत दत्तिल कोहल्यम्'** जो **तंजौर की 'पैलेस लाइब्रेरी'** में रखा हुआ है। यह छोटी सी रचना नृत्य कला पर है और इसके सभी छन्द "रत्नाकर" के नृत्याध्याय में मिलते हैं। कुछ विद्वानों ने शारंगदेव के संगीत पर गम्भीरता से विचार करना प्रारम्भ कर दिया है, शायद भविष्य में यह ग्रंथ सहज हो सके।

2.3.2 बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकरकर :–

जीवन परिचय – बालकृष्ण बुआ का जन्म सन् 1849 ई0 में कोल्हापुर के पास चंदूर नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता रामचन्द्र बुआ स्वयं एक अच्छे गायक थे। इस कारण बाल्यकाल से ही इनके अन्दर भी संगीत की अभिरूचि उत्पन्न हो गई। भाऊ बुआ, देवजी बुआ, हद्दू खां आदि विद्वानों से इन्होंने ध्रुपद, धमार, ख्याल और टप्पा की शिक्षा पाई। अतः इन चारों अंगो के आप कलावंत थे।

बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर को बचपन से ही संगीत के प्रति अत्यधिक रूचि थी और ये चाहते थे कि संगीत में इन्हें एक ऐसा गुरू मिले जो कि इन्हें संगीत का भरपूर ज्ञान दे। कुछ समय बाद इन्हें जोशी बुआ नामक प्रसिद्ध संगीतज्ञ से भी संगीत–शिक्षा प्राप्त हुई और अपने परिश्रम तथा रियाज के द्वारा थोड़े समय में ही बाल कृष्ण बुआ गायनाचार्य बन गए। आपने समस्त हिन्दुस्तान व नेपाल का भ्रमण किया तथा अनेक संगीत–सम्मेलनों में भाग लिया।

बम्बई में आपने 'गायन–समाज' की स्थापना की और 'संगीत–दर्पण' नामक एक मासिक पत्र भी चलाया, किंतु श्वास रोग के कारण आपको बम्बई छोड़नी पड़ी। कुछ समय बाद आप औंध स्टेट

के गायक हो गए। वहाँ प्रातःकाल अपना रियाज करते और फिर शिष्यों को पढ़ाते थे। बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर अखिल भारतीय संगीत कलाकोविदों में एक उच्च श्रेणी के गायक हो गए थे। प्रसिद्ध संगीताचार्य पं0 विष्णु दिगंबर पुलस्कर इन्हीं के शिष्य थे।

कुछ समय बाद इन्होंने इचलकरंजीकर नामक रियासत में स्थायी रूप से राज–गायक की पदवी स्वीकार कर ली, तभी से ये इचलकरंजीकरकर के नाम से प्रसिद्ध हो गए और पुनः समस्त भारत का भ्रमण करके इन्होंने संगीत का प्रचार–प्रसार किया। इसी बीच इनके एक मात्र सुपुत्र का निमोनिया से यकायक देहान्त हो गया और फिर एक सुपुत्री भी चल बसी। इन आघातों से इनके स्वास्थ्य को विशेष धक्का पहुँचा। फलस्वरूप सन् 1926 ई0 में ही बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर स्वर्गवासी हो गए।

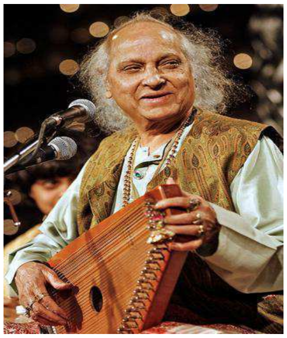

2.3.3 पं0 जसराज :–

जीवन परिचय – पंडित जसराज का जन्म 20 जनवरी 1930 ई0 को हिसार में हुआ था। इनके पिता का नाम मोतीराम था। मोतीराम जी कश्मीर राज्य के दरबारी गायक थे। बालक जसराज की संगीत शिक्षा सर्वप्रथम तबला वादन से प्रारम्भ हुई। अपने भ्राता प्रताप नारायण से इन्होंने तबले की शिक्षा प्रारम्भ की। इन्होंने तबला का विधिवत् अभ्यास भी प्रारम्भ किया। इनके बड़े भ्राता पं0 मणिराम बहुत अच्छे गायक है अतः उनके साथ वे तबले की संगत करते थे। लेकिन धीरे–धीरे बालक जसराज को तबले पर संगत करना अच्छा नहीं लगता था। उनका मन हीनता का अनुभव करने लगा। उनके मन में कुशल गायक बनने की इच्छा जागृत हुई और उन्होंने गायन सीखना प्रारम्भ कर दिया।

अपने बड़े भ्राता पं0 मणिराम से वे नियमपूर्वक गायन सीखने लगे। यह प्रशिक्षण लगभग दस वर्षों तक चला। यह समय सन् 1945 से सन् 1955 तक का था। पं0 मणिराम जी से संगीत की शिक्षा लेने के बाद में पं0 जसराज, महाराजा जसवंत सिंह वाघेला के शिष्य बने। साथ ही पं0 जसराज ने आगरा घराने के स्वामी बल्लभदास जी से भी शिक्षा ग्रहण की।

1960 में एक बार जब पं0 जसराज बड़े गुलाम अली खां को देखने हास्पिटल गए तो खां साहब ने पं0 जसराज को अपना शिष्य बनाने की बात की, परन्तु जसराज ने बड़ी शालीनता से उनको इनकार कर दिया, और कहा कि वे तो पहले ही पं0 मणिराम के शिष्य हैं।

प्रारम्भ में पं0 मणिराम जी, पं0 जसराज को तबले पर संगति करने के लिये ही अपने साथ ले जाते थे। ये वह समय था जब सारंगी वादक और तबला वादक को मझले स्तर का कलाकार माना जाता था। 14 साल की उम्र में तबला वादक बनने से नाखुश पं0 जसराज ने प्रण किया कि वे तब तक अपने केश नहीं काटेंगे जब तक वे संगीत गायन की शिक्षा ग्रहण नहीं कर लेते। ऑल इण्डिया रेडियो पर अपनी पहली प्रस्तुति देकर अंततः उन्होंने अपने केश काटे और प्रतिज्ञा पूरी की। उस प्रस्तुति में उन्होंने राग कौसी कानड़ा (राग मालकौंस व दरबारी कान्हड़ा का संयुक्त रूप) प्रस्तुत किया था।

1962 में श्री शांताराम की पुत्री मधुरा से पं0 जसराज का विवाह हुआ। उनके एक पुत्र शारंगदेव पंडित तथा पुत्री दुर्गा जसराज हैं। प्रसिद्ध संगीतकार जतिन—ललित उनके भतीजे तथा सुलक्षणा पंडित उनकी भतीजी हैं।

संगीत की प्रस्तुतियाँ :—

पं0 जसराज $3\frac{1}{2}$ सप्तक तक गाते हैं और वे मेवाती घराने के विशेष प्रकारों का प्रयोग करते हैं। उन्होंने बाबा श्याम मनोहर गोस्वामी के निर्देशन में हवेली संगीत में विस्तृत शोध भी किया है। पं0 जसराज ने प्राचीन मूर्च्छना पद्धति के अनुसार स्त्री और पुरूष द्वारा अलग—अलग रागों में एक ही समय में गाए जाने वाली जुगलबंदी का आदर्श प्रकार प्रारम्भ किया। जिसे संगीतज्ञों ने पुणे में जसरंगी नाम दिया।

पं0 जसराज को भैरव परिवार के रागों के साथ प्राचीन रागों दरबारी कान्हड़ा, मियां की मल्हार, जोग आदि का विशेषज्ञ माना जाता है। उनको अप्रचलित रागों ज्ञानकली, अबीरी तोड़ी, धनाश्री, पटदीप की पूर्वा, भावसाख, देवसाख, गुंजी कान्हाड़ा और चारजू की मल्हार आदि की प्रस्तुतीकरण में भी महारथ हासिल है।

सन् 1963 में पं0 जसराज स्थायी रूप से बम्बई में रहने लगे। आकाशवाणी पर तीन—चार राष्ट्रीय कार्यक्रमों के अन्तर्गत दोनों भाइयों ने युगलबन्दी में काफी प्रसिद्धि प्राप्त की। सन् 1963 में पं0 जसराज ने युगलबन्दी गाना छोड़कर एकल गायन प्रस्तुत करना प्रारम्भ किया और भारतवर्ष में अपनी कला को प्रतिष्ठित किया। इनके गाये हुए रागों के विभिन्न रिकार्ड कैसेट बनकर तैयार हो चुके हैं। अपने पिता की स्मृति में प्रत्येक वर्ष पं0 जसराज हैदराबाद में "पं0 मोतीराम, पं0 मणिराम संगीत समारोह आयोजित करते हैं।"

पं0 जसराज धीरे—धीरे अपने कठिन परिश्रम से अच्छे गायकों में स्थान बनाने लगे थे। इनका प्रथम सार्वजनिक कार्यक्रम सन् 1952 में नेपाल में महाराजा त्रिभुवन विक्रम के समक्ष हुआ। भारत में 1954 में बम्बई में स्वामी हरिदास संगीत सम्मेलन में इन्होंने भाग लिया। इसके बाद वे विभिन्न संगीत कार्यक्रमों में आमन्त्रित किये जाने लगे। प्रारम्भ में कई वर्षों तक पं0 मणिराम और जसराज युगलबन्दी कार्यक्रम पेश करते रहे। ये दोनों भाई साणन्द के महाराजा जयवंत सिंह के पास दरबारी गायक भी रहे। महाराजा की कई बन्दिशें ये दोनों भाई गाते हैं, जिनमें एक बन्दिश बहुत प्रसिद्ध हुई जो अजाना राग में हैं।

गायन शैली व भारतीय संगीत में योगदान :—

वर्तमान समय में पं0 जसराज मेवाती घराने का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं जिसके मूल स्त्रोत रीवा राज्य के बड़े मुहम्मद खां हैं। आजकल भावपूर्ण गायन और स्वरों के माध्यम से काव्य—सौन्दर्य के दर्शन की चर्चा छिड़ते ही मेवाती घराने के प्रतिष्ठित गायक पं0 जसराज का नाम सामने आ जाता है। चाहे शास्त्रीय रागों की प्रस्तुति हो, वल्लभ संप्रदाय के लीलागीतों का गायन हो, या "कान कहानी सुन्यों करे" एवं "गीत गोविन्द" जैसे संगीत रूपकों का संगीत नियोजन, सब में पं0 जसराज की विशिष्ट भावपूर्ण गायन शैली मूर्त हो उठती है।

रस भाव समृद्ध गायन के प्रतीक पं0 जसराज कण गायकी का पालन करते हैं। इससे स्वर तथा शब्द का जो सुंदर समन्वित रूप अभिव्यक्त होता है, वह रसिकों को सहज अभिभूत कर लेता

है। शास्त्रीय शुद्धता के साथ राग और बंदिश की मूर्ति निर्मित हो जाती है। गायन के समय पं0 जसराज पूरी तरह अंतर्मुख हो जाते हैं।

उनके गाये हुए अनेक रागों में से जैसे पूरिया (अब थारे बिन कुण), दरबारी कान्हाड़ा (जय—जय श्री दुर्गे), भैरव (आनन्देश्वर), केदार (तुम जय—जय—जय सुत महेश), खमाज बहार(ए री मां, सकल वन), भैरवी (पुनीत पद पंकजा) आदि बंदिशों में जहाँ उदात्त भावना है। वहीं उद्वेलन, तड़पन और मिलन की आकृति भी है, जहां शांत सौम्य रूप है, वहीं रणोन्मत्त विजयोत्साह भी है, जहां पूर्ण यौवन—सम्पन्न, किंतु विरहाकुल नायिका का रूप है। वहीं गांभीर्य और स्वाभिमान भी है, चांचल्य और प्रफुल्लता है तो पराशक्ति के प्रति श्रद्धा, भक्ति और प्रणति भी है। काव्य सौंदर्य के साथ—साथ इन बंदिशों की स्वर रचना एवं प्रस्तुति में अपूर्व आनंदानुभूति है।

पं0 जसराज के गायन में रसिक श्रोताओं को स्वर—समाधि की अवस्था में पहुँचाने की अद्‌भुत शक्ति है। उनके आलाप में स्वर सौंदर्य की अनुभूति है तथा स्वर—गांभीर्य का स्पंदन है। विलंबित में बंदिश का विशिष्ट भावपूर्ण रूप है और द्रुत में जीवंतता है। "सरगम" के प्रयोग में उनकी अपनी विशेषता है, जो सर्वदा राग के अंतर्निहित भाव के अनुरूप रहती है। रागों के प्रति उनका अपना खास नजरिया है। स्वर स्मष्टियों का अलंकरण, बोलबांट, बोलतान, तान आदि के सुष्ठ गुम्फन के साथ तीन सप्तकों में सहज संचरण रसिकों को चमत्कृत कर देता है। वे ध्रुपद गायकी के एवं लय—ताल के साधक रहे हैं, इस कारण उनके गायन में गमक के स्वस्थ प्रयोग का रूप सामने आता है। साथ ही उनकी विनम्रता और भावपूर्ण मुद्रा रसिकों को सहज ही आकृष्ट कर लेती है।

घरानों के सम्बन्ध में पं0 जसराज का मत है कि एक घराने से बँधकर कोई गायक अपने व्यक्तित्व का विकास नहीं कर सकता। प्रत्येक घराने की अपनी विशेषता है और हर गायक अच्छी चीजें ग्रहण करना पसंद करेगा। आगरा की मध्य लय की चीजें, किराना की बढ़त और पटियाला की तानें अच्छी हैं। उत्तरी और दक्षिणी पद्धतियों के संबंध में पं0 जसराज का मत है कि दोनों में अंतर अवश्य है, मूलतः वे एक ही है।

संगीत—शिक्षा के बारे में कहते है कि छात्र की श्रेणी और क्षमता का पता लगा लेने के बाद उसे सरगम, पलटें, जरब, संतुलन, दीर्घता, स्वर—प्रवाह, नोम—तोम, आलापचारी और उसके माध्यम से लय—अभ्यास सिखाना चाहिये। उनकी मान्यता है कि शब्दों की संस्कृति और सौंदर्य बनाये रखना आवश्यक है, शब्दों का सार्थक रूप उभरना चाहिए। स्वरों के रस और शब्दों के भाव को आत्मसात् करके प्रस्तुत किया गया गायन अवश्य प्रभावकारी होता है।

सम्मान व पुरस्कार — पं0 जसराज को पद्मविभूषण (2000), संगीत नाटक अकादमी अवार्ड 1987, संगीत कलारत्न, मास्टर दीनानाथ मंगेशकर अवार्ड, लता मंगेशकर पुरस्कार, महाराष्ट्र गौरव पुरस्कार, सुरेर गुरू, स्वाती संगीत पुरस्कारम्—2008, संगीत नाटक अकादमी फैलोशिप (2010) आदि से नवाजा गया है।

शिष्य परम्परा — पं0 जसराज की शिष्य परंपरा में रतन—मोहन शर्मा, संजीव अभ्यंकर, रमेशनारायण, सुमन घोष आदि अनेक संगीतज्ञ हैं। यहाँ उल्लेखनीय है कि गुरू—शिष्य परंमरा के अनुगामी पं0 जसराज संगीत—शिक्षा निःशुल्क देते हैं।

2.3.4 मल्लिकार्जुन मंसूर :–

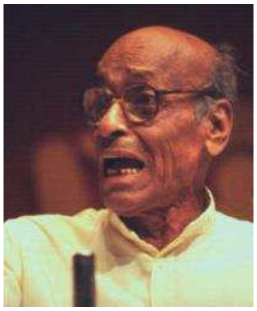

जीवन परिचय – पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर का जन्म 31 दिसम्बर, 1911 को धारवाड़ जिले के मंसूर नामक गॉव में हुआ। वे अमावस्या को मूल नक्षत्र में जन्मे थे, जो की अशुभ माना जाता है। उस जमाने की प्रथा के अनुसार उनकी मॉ ने उन्हें दत्तक देने का निश्चय किया, पर दत्तक लेने वाले मठाधीश बोले कि अब ये यह हमारा बेटा है, मगर ये अपनी मॉ के पास ही रहे। सात–आठ वर्ष की आयु में मल्लिकार्जुन मंसूर को अथणी मठ के स्वामी शिवयोगी का आशीर्वाद मिला। अथणी में उन्हें बागलकोट के स्वामी शिवबसव स्वामी का अशीर्वाद ही नहीं मिला, बल्कि अपने भावी गुरु के दर्शन भी हुए। ये गुरु थे पं0 बालकृष्ण बुवा इचलकरंजीकर के शिष्य पं0 नीलकंठ बुआ आलूरमठ। अदभुत एवं चमत्कारपूर्ण बात यह है कि गुरु ने स्वयं ही कहा कि यह लड़का हमें दे दो, हम इसे तैयार करेंगे। मल्लिकार्जुन जी का विश्वास रहा है कि यह सब अथणी स्वामी के आशीर्वाद से ही संभव हुआ। हुबली के सिद्धारूढ़ मठ के स्वामी जी की कृपा भी उन्हें प्राप्त हुई।

चोटी के गायकों में गिने जाने वाले पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर ने कला के क्षेत्र में पदार्पण रंगमंच के माध्यम से किया। उनके पिता गॉव के पटेल थे। नाटक का उन्हें बहुत शौक था और वे गाते भी थे। बच्चों को संगीत सिखाने के लिये कर्नाटक पद्धति के एक गायक को उन्होंने कुछ समय घर पर रखा। आठ–नौ वर्ष की आयु में बालक मल्लिकार्जुन के मन में नाटक कम्पनी में जाने की धुन सवार हुई। बड़े भाई बसवराज तो नाटक में ही थे। अतः नाटकों में काम करने के लिये वे घर से भाग निकले और विश्वगुणादर्श नामक नाटक कम्पनी में शामिल हो गए। वहां पर वे अगले सात–आठ वर्षों तक प्रहलाद, कृष्ण आदि की भूमिकायें करते रहे और गाते भी रहे। कम्पनी के पांडोबा नामक हारमोनियम मास्टर से उन्होंने संगीत सीखना भी प्रारम्भ किया। जब शिवबसव स्वामी जी ने किशोर मल्लिकार्जुन को नीलकंठ बुआ के पास भेजा, तब तक यही सिलसिला चला। पं0 नीलकंठ बुआ से मल्लिकार्जुन ने सात–आठ वर्ष शिक्षा पाई। गुरु और उनकी द्वितीय पत्नी उन्हें पुत्रवत् प्यार करते थे। सुबह चार बजे उठना और सरगम का रियाज करना। गुरु स्वयं ठेका पकड़कर शिष्य को सिखाया करते – पहले द्रुत चीजें, फिर ख्याल। सबसे पहले उन्हें राग भैरव में (जागो ब्रजराज कुंवर) सिखाया गया। गुरु के कारण ही षड्ज का महत्व और मध्यम का सम्बन्ध उनकी समझ में आया। बड़ी उदारता से पं0 नीलकंठ बुआ ने अपना सब कुछ शिष्य को दिया। वे मधुर कंठ के धनी थे और एक–एक राग में शिष्य को बीस–बीस, तीस–तीस बंदिशें सुनाते थे। केवल बिहाग में उनके पास चालीस बंदिशें थी।

मल्लिकार्जुन ने उनके विहाग, मालकौंस, भूप, कामोद, तोड़ी, हमीर, दरबारी, यमन, केदार, पूरिया, मारवा, अल्हैया बिलावल, ललित आदि रागों की तालीम पायी। राग का सौंदर्य, गमक, भीड़ आदि का महत्व उनकी समझ में आया। साथ ही यह बात भी मन–मस्तिष्क में अंकित को गई कि स्थायी आ गया तो राग आ गया। वे कहा भी करते थे कि पहले स्थायी गायी जाती थी, जबकि आज स्वर सुनाये जाते हैं, राग नहीं।

उस उम्र में सुने बड़े कलाकारों के संगीत को पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर आजीवन स्मरण करते रहे। उनका कहना था कि ''उस्ताद अब्दुल करीम खॉ की आवाज में अदभुत आवेग और दर्द था और वे श्रोताओं को बरबस भाव–विश्व में ले जाते थे। उन्होंने बताया कि जब मैंने पहली बार

सांगली में उस्ताद अल्लादिया खॉ को सुना तो मैं कुछ समझ ही नहीं सका। जैसे मेरी बुद्धि मेरा साथ नहीं दे रही थी। ऐसा लग रहा था कि यह एक अथाह सागर है, जिसमे अनगिनत लहरें उठ रही हैं, विलीन हो रही हैं, फिर आचानक पूरे वेग से आती हैं, मानों चल—अचल सबको अपने में समा लेंगी।'' यह था खॉ साहब के गायन का उपज अंग। उस समय मल्लिकार्जुन की उम्र लगभग 15 वर्ष की थी। उसके एक वर्ष के बाद वे धारवाड़ आ गये। यहां उन्होंने जो मेहनत की, उससे उनकी आवाज में लचीलापन आ गया।

सन् 1929 में उन्हें विश्वगुणादर्श कम्पनी ने ''वीर अभिमन्यु'' नामक नाटक के संगीत—निर्देशक के रूप में बुलाया। इस नाटक में उन्होंने शकुनि की भूमिका निभायी। उनके गाये कामोद और देशकार अत्यन्त लोकप्रिय हुए। दो वर्ष उन्होंने वाणी विलास कम्पनी में भी काम किया और ''कित्तुर रुद्र' नाटक में दिलावर खॉ की भूमिका निभायी। सन् 1930 में भास्कर बुआ बरवले शिक्षक बनकर धारवाड़ आये। यहां के उत्तर भारतीय संगीत का स्वरूप वातावरण उन्हें भा गया। हुबली भी निकट ही था, जहां उस्ताद मुराद खॉ बीनकर बड़े जनप्रिय थे। मंसूर दोनों की सुना करते। सन् 1933 में एच0एम0वी0 संगीत निर्देशक बी0 रूपजी, मंसूर को आमंत्रित करते मुंबई ले गये और उनका अड़ाना और गौड़ मल्हार का रिकार्ड बनाया। आगे चलकर इसी रिकार्ड ने मंसूर के लिए अतरौली—जयपुर गायकी सीखने का मार्ग प्रशस्त किया।

1933—34 में मंसूर मुंबई में आयोजित होने वाले गणेशोत्सवों में गाया करते थे। इसके लिए उन्हें 50, 75 या अधिक से अधिक 100 रूपये मिलते थे। तभी से वे मुंबई के म्युजिक सर्किलों में गाने लगे। अतरौली—जयपुर गायकी की शिक्षा प्राप्त करने का सुअवसर भी पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर को संयोग से ही मिला और इसे युग के जाने—माने गायक सुफल ही मानते थे। 1935 में एक दिन वे गिरगांव (मुंबई) में अपने आत्मीय और इस युग के जाने—माने गायक व अभिनेता विष्णुपंत पगनीस की सोने—चांदी, रिकार्ड आदि की दुकान पर बैठे थे कि वहां उस्ताद उल्लादिया खॉ के पुत्र उस्ताद मंजी खॉ आ गये। उनका गायन मंसूर ने सुन रखा था। पगनीस ने उस्ताद से सिफारिश की और साथ ही मंसूर का रिकार्ड भी सुनाया। वहीं से मंसूर की अतरौली—जयपुर गायकी की शिक्षा शुरु हो गयी। पं0 मंसूर बताते हैं कि ''मंजी खॉ साहब ने राग भीमपलासी गाया था, वैसा गायन हमने जीवन में कभी नहीं सुना था। सुबह ही तालीम शुरु होती, जिसे सुनने को बड़े खॉ साहब (उस्ताद अल्लादिया खॉ) आकर बैठते थे। गायन होता था – बढत, ताल, अंग, बोल अंग, मीड़ अंग, अलाप अंग, तानों में रस आदि सर्वांगों से सम्पन्न''। उस्ताद से मंसूर ने शिवमत भैरव, गौड़ सारंग, मालकौंस, नटविहाग, सावनी आदि राग सीखे। वे मानते हैं कि उस्ताद मंजी खॉ की गायकी पर उस्ताद रहमत खॉ की गायकी का असर था।

सन् 1936 में नीलकंठ बुआ का और 1937 में उस्ताद मंजी खॉ का देहान्त हो गया। मंसूर इससे अत्यधिक उद्विग्न हो गये। उन्हें संसार अंधकारमय लगने लगा। तब उस्ताद अल्लादिया खॉ की सिफारिश पर उनके द्वितीय पुत्र उस्ताद भुर्जी खॉ उन्हें तालीम देने लगे। उस्ताद मंजी खॉ और फिर उस्ताद भुर्जी खॉ की शिक्षा से मंसूर के गायन में रागालाप, ध्रुपद अंग का ख्याल, लयकारी, जटिल तानों का वैविध्य और स्वरक्षेप का वजन और लगाव में अनूठापन आया। उनके गायन में स्वर जिस तरह मूर्त हो जाता, उसे एक बार तो 'अविश्वसनीय' कहा जायेगा। मंसूर राग के प्रारम्भिक संक्षिप्त आलाप का पूर्ण परित्याग करके सीधे चीजें शुरु कर देते और उसके साथ एकरूप हो जाते। वे कहते भी थे ''मैं ही गाता हूॅ मैं ही सुनता हूॅ। मैं अपने आनंद के लिये गाता हूॅ। श्रोता उठकर चले जायें, इसकी मुझे कोई परवाह नहीं''।

उनकी गायकी तीन प्रवाहों के संगम से अद्भुत स्वरूप वाली थी – अप्पास्वामी से प्राप्त कर्नाटक पद्धति, ग्वालियर के पं0 बालकृष्णबुआ इचलकरंजीकर के शिष्य नीलकंठ बुआ से प्राप्त ग्वालियर गायकी और उस्ताद मंजी खॉ व उस्ताद भुर्जी खॉ से प्राप्त अतरौली–जयपुर गायकी। अप्रचलित या अल्प प्रचलित जोड़–रागों की प्रस्तुति के लिए अतरौली–जयपुर घराना प्रसिद्ध है और मंसूर के गायन में प्रचलित रागों के साथ–साथ ये राग भी प्राणवान् हो उठते थे।

संगीत मंसूर जी के लिए केवल वृत्ति नहीं रहीं, वह उनके जीवन की सांस थी। उसी के माध्यम से वे अपनी आंतरिक भावनाओं को व्यक्त करते थे। वे संगीत में ही जीते थे। धारवाड़ में अपने निवास में बगीचे से पूजा के लिए फूल चुनते समय या सहज ही भ्रमण करते समय भी उनका गुनगुनाना चलता रहता था। मंसूर जी की मान्यता रही कि आवाज लगाने की कोई विशेष प्रक्रिया तो नहीं है, पर एक ही सप्तक में रियाज नहीं करना चाहिए। वे कहते थे ''आज हरकत और तरकीब का गाना रह गया है, गहराई कम है, मूल शिक्षा कम है। यह आवश्यक है कि पहले स्वरसिद्धि की जाय। अभ्यास करने वाले हृदय व बुद्धि का समावेश होना चाहिए, और सिखाने वाले को भी प्यार से सिखाना चाहिए। अलंकार स्वर–शुद्धि को खुद समझना चाहिए। रोज सुबह मंद्र पंचम तक और तार पंचम तक का रियाज करना चाहिए। तानों में रस और स्वर कायम रखने का भी रियाज होना चाहिए।

नये रागों के बारे में मंसूर का कहना था कि कल्याण, तोड़ी, भैरव, नट आदि में ही इतनी बंदिशें हैं कि उन्हें अर्जित करने के लिए एक जिंदगी कम है, फिर नये राग क्यों ? वे चाहते थे कि ऐसा कुछ किया जाय जिससे परम्परागत गायकी सुरक्षित रह सके। उनकी राय थी कि बच्चों के लिए संगीत शिक्षा अनिवार्य कर देनी चाहिए। स्कूल, कॉलेज व विश्वविद्यालयों में शिक्षण से संगीत की समझ ही आ सकती है। संगीत सीखने के उत्साही छात्रों के लिए उपाधि का बंधन नहीं रखना चाहिए। घराना प्रणाली की आज भी प्रासंगिकता है और उसके बिना सच्चे कलाकार नहीं बन सकते। आज संगीत के क्षेत्र में प्रदर्शन व दिखावा ज्यादा हो रहा है और इसमें व्यापार होने लगा है। यह स्वस्थ स्थिति नहीं है। होना तो यह चाहिए कि गाने के बाद लगे कि अभी कुछ शेष है, वही तो प्रगति के लक्षण है।

<u>सम्मान समारोह</u> – पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर को 1961 और 1964 में कर्नाटक राज्य संगीत नाटक अकादमी का पुरस्कार, 1972 और 1982 में राष्ट्रीय संगीत नाकट अकादमी का पुरस्कार, 1970 में पद्मश्री एवं 1975 में पद्मभूषण अलंकरण, 1981 में मध्य प्रदेश सरकार का कालिदास सम्मान, 1986 में विश्वभारती की देशिकोत्तम उपाधि, 1975 में कनार्टक विश्वविद्यालय से डी0लिट उपाधि और 1987 में केन्द्रीय संगीत नाटक अकादमी की फेलोशिप मिली। वे कनार्टक विश्वविद्यालय के संगीत संस्थान के निदेशक रहे, उसके प्रवर्तक व संचालक भी तथा कर्नाटक विधान परिषद् के मनोनीत सदस्य रहे। प्रतिष्ठित गायक पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर को 'पद्मविभूषण' अलंकरण से भी विभूषित किया गया। भोपाल में विभिन्न कलाकारों के साथ बातचीत के दौरान पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर ने कहा था कि ध्रुपद आना चाहिए, क्योंकि राग का सम्पूर्ण स्वरूप उसमें रहता है। गवैया बनने के लिए पहले दो सौ ध्रुपद आने चाहिए, बाद में ख्याल की शिक्षा दी जाती है, ऐसा नियम था। मंजी खॉ साहब, बड़े खॉ साहब (अल्लादिया खॉ साहब), भुर्जी खॉ साहब, सभी को सभी रागों के ध्रुपद सिखाये गये। जब ध्रुपद सुनने वाले लोग कम हो गये, तब उनमें तानें बिछाकर उसका ख्याल बनाया गया। अल्लादिया खॉ साहब ध्रुपद को ही ख्याल बनाकर गाते थे, इसीलिए जयपुर (घराने) में लय का तत्व इतना

ज्यादा है। मंजी खॉ साहब कहते थे कि हमें तान—बान कुछ नहीं सिखायी, हम आलाप करते हैं और उसी की तान करते हैं।

''षड्ज में छह स्वरों को समावेश है, षड्ज अच्छी तरह लगना चाहिए। हम जिस राग का चिंतन मन में करते हैं उसी का लिबाज पहनकर षड्ज आता है। चिल्लाना रियाज नहीं है। षड्ज से ऊपर के षड्ज तक सभी स्वर लगने चाहिए, पूर्ण लगने चाहिए। स्वर से ही प्रभाव है, स्वर में ही परिणामकारक शक्ति है। स्वरालाप नहीं, रागालाप होता है। तानों में भी राग दिखाई देना चाहिए। राग का 'स्ट्रक्चर' मन में होता है। तानों में भी राग दिखाई देना चाहिए। वह बताया नहीं जा सकता, केवल सुनाया जा सकता है।'' ये मननीय विचार है अतरौली—जयपुर घराने के प्रकाश—स्तम्भ रहे पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर के, जिन्हें उस्ताद हाफिज अली खॉ पुरस्कार के लिए चुना गया। उनका यह विनम्र विश्वास रहा कि संगीत में वे जिस ऊँचे स्थान पर पहुॅच पाये हैं वह वास्तव में अप्पास्वामी, शिवबसव स्वामी, सिद्धारूढ़ स्वामी और मृत्युंजय स्वामी जैसे संतों के शुभाशीर्वादों का फल है।

मंसूर जी ने कहा कि हमारे संप्रदाय में इतने राग हैं कि अभी तक सभी को लेकर रियाज—चिंतन हुआ ही नहीं। ऐसे बहुत राग हैं और फिर यदि 'प्रकारों' को ले लें तो कितने हो जाते हैं। उनमें फिर अलग—अलग तालों में निबद्ध बंदिशें भी हैं। हमारे बुजुर्गों ने इतने राग बना रखे हैं कि नये रागों की जरूरत ही नहीं है। उदाहरण देकर इस बात को समझाते हुए हुए पं0 मंसूर ने कहा कि जो राग बने हुए हैं, उन्हीं को ठीक से गाओं, नये राग आप कहॉ से लायेंगे ? यदि आप नये राग बनाते हैं तो जिन रागों से वह राग बनता है, उन्हें सही रूप से बताओ। श्रुति के सही प्रयोग के साथ स्वरों के दर्शन कराना चाहिए। गांधार, मध्यम कहां है, भैरव का ऋषभ कैसा है — यह सब श्रुतियुक्त दर्शाओ। सीखे हुए रागों पर चिंतन—मनन में ही जीवन बीत गया, नया राग क्या बनायें ? नये राग बनाने से हम नाराज नहीं, किन्तु जरूरत क्या है। बड़े खॉ साहब (अल्लादिया खॉ साहब) ने तीस वर्षों तक सब रागों पर चिंतन—मनन किया, वे सभी रागों में सिद्ध थे और फिर कुछ समय पश्चात् इस प्रभावी संगीतज्ञ पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर का 16 सितम्बर, 1992 को निधन हो गया।

2.3.5 केसरबाई केरकर :—

जीवन परिचय — सुरश्री केसरबाई केरकर का जन्म 13 जुलाई, 1892 में गोवा के केर नामक गॉव में हुआ। 8 वर्ष की उम्र में केसरबाई कोल्हापुर चली गई। जहॉ उन्होंने आठ माह अब्दुल करीम खॉ से शिक्षा ग्रहण की। पुनः गोवा लौटकर उन्होंने गायक रामकृष्ण बुआ बात्रे से शिक्षा प्राप्त की। फिर 16 वर्ष की उम्र में केसरबाई मुंबई चली गई जहॉ उन्होंने विभिन्न शिक्षकों से शिक्षा ली। बाद में वे जयपुर—अतरौली घराने के संस्थापक उस्ताद अल्लादिया खॉ की शिष्या बनी। वे गोमांतक मराठा समाज की अनुयायी थी।

सुरश्री केसरबाई केरकर ने कहा है कि 'गायन सीखने के लिए अपना—पराया सब कुछ भुलाना होगा, संगीत जैसी महान विद्या को हासिल करने के लिए जीवन को संगीत के साथ एकाकार करना होगा। जो इस रूप में तपस्या नहीं कर सकते, जो पूरे जीवन को इसके लिये समर्पित नहीं कर सकते, वे संगीत सीखना बंद कर दें। संगीत एक महान विद्या है, मैंने जिस ढंग से

शिक्षा पायी है, वह अपने आप में पूर्ण है। इसके लिये मैंने तपस्या की है, जिनके पास इस प्रकार से तपस्या करने की शक्ति नहीं, अथवा समय नहीं, वे इस झंझट में न पड़े''। ये विचार सुरश्री केसरबाई केरकर ने एक विशेष मुलाकात के समय व्यक्त किये। यह मुलाकात उस समय ली गयी, जब यह 'सिद्ध' गायिका सुरश्री केसरबाई केरकर महाराष्ट्र राज्य की राज्य गायिका बनी।

<u>सम्मान व पुरस्कार</u> — वर्ष (1969) उन्हें भारत सरकार की ओर से 'पद्म भूषण' अलंकरण से विभूषित किया गया। संगीत नाटक अकादमी का पुरस्कार उन्हें 1953 में मिल चुका था। 1975 में उन्हें सुंरसिंगार संसद की 'शारंगदेव फैलोशिप' मिली।

सुरश्री केसरबाई ने बताया कि राग की शुद्धता को कायम रखना गायक—वादक का पुनीत कर्तव्य है। गुरु से जो कुछ जिस प्रणाली से सीखा है, उसी का निष्ठापूर्वक पालन करना आवश्यक है। ख्याल—गायन में 'सरगम' करना केसरबाई को पसंद नहीं था। संगीत की महत्ता और उसकी उदात्त भावना के विषय में केसरबाई का कहना था कि उस सर्वशक्तिमान की अनुकम्पा से ही सब कुछ मिलता है और ज्ञानार्जन के बाद ही ईश्वरानुभूमि के लक्ष्य का पता चलता है और उसके बाद ही आत्मा को शांति मिलती है। जहॉ तक घराने की विशेषता का प्रश्न है, उस्ताद अल्लादिया खॉ की गायकी पुश्त—दर—पुश्त चली आयी है और उसी परम्परा का कड़ाई से पालन हो रहा है। आलापकारी, तानबाजी, गमकयुक्त तान प्रक्रिया उनकी विशेषता है। गुरु उस्ताद ने जो दिया वही सर्वोपरि है।

नये रागों की उद्‌भावना के संबंध में इस तेजस्वी गायिका का कहना है कि परंपरा के अनुसार भारतीय संगीत में जो राग चलते आये हैं, वे ही काफी हैं। संगीतकारों के विषय में उनका कहना था कि वे प्रमुख कलाकार के मार्ग से हटकर अपनी कला में उलझनेवाला सच्चा संगीतकार नहीं, उससे महफिल का रंग बिगड़ता ही है। नये कलाकारों से सुरश्री केसरबाई का कहना है कि जीवन कितना ही व्यस्त क्यों न हो, संगीत साधना के लिए सभी प्रकार के बंधनों से मुक्त रहना पड़ता है। संगीत को ही जीवन में उतारना होगा और कठोर श्रम करना होगा, यानि संगीत के प्रति पूर्ण आत्मसमर्पण जरूरी है। इस विज्ञान युग में जो कलाकार कम समय में लक्ष्य प्राप्ति का प्रयास करते हैं, उन्हें न तो सच्ची विद्या मिलती है और न वे कलाकार ही बन पाते हैं। इधर—उधर का लेकर भानुमति का कुनबा जोड़ना ठीक नहीं। गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा भक्ति और घराने के प्रति गर्व अनुभव करना शिक्षार्थी का परम कर्तव्य है। इस गायिका का स्पष्ट मत रहा है कि घरानों का रूप ज्यों का त्यों रहना चाहिए।

जयपुर—अतरौली घराने के संस्थापक उस्ताद अल्लादिया खॉ ने एक नूतन युग की सृष्टि की थी। आवाज की विशिष्ट आकारयुक्त लगाव, प्रभावी ध्रुपद, आलाप, मीड, बलदार गमक, तान पलटा, स्वरूप की पूर्ण शुद्धता व उसकी प्रभावकारी प्रस्तुति, ताल—वैविध्य व उसमें अद्‌भुत गुम्फन, लयकारी, एक दूसरे से गुथी वर्तुलाकार—सर्पाकार तानें, बोलताल व स्थायी में अद्‌भुत कल्पनाशीलता इस घराने की गायकी की अपनी विशेषताएॅ हैं। इस घराने में अधिकतर अप्रचलित व जोड़ रागों का प्रयोग होता आया है, यह निःसन्देह सत्य है कि यह गायिकी रसिकों को चमत्कृत करने वाली है। यह भी उल्लेखनीय है कि खॉ साहब अल्लादिया खॉ ने राजस्थान में रहते समय पुष्टि मार्गी पदों को बड़ी संख्या में अपनाया और उन पदों की अपनी विशेषता को कायम रखते हुए अपनी गायिकी में और अपने घराने की राग—ताल—प्रणाली के अनुरूप पेश किया। इस घराने की विशेषता है : कलाकार की

प्रत्यक्ष साधना, भरपूर शिक्षण और जोरदार रियाज। एक प्रकार की विशिष्ट तपश्चर्या के बाद ही इस गायिकी में सिद्धि संभव है, जिसे अनुपम उपलब्धि कहा जा सकता है।
इस कठोर तपश्चर्या में सिद्ध गायिका केसरबाई केरकर का जन्म–जीवन उस तपःपूत साधना का प्रतीक रहा और वृद्धावस्था में भी उनके मुखमंडल पर उस तप का तेज बना रहा।

शिष्य तैयार करने के बारे में कठोर तपश्चर्या की प्रतीक केसरबाई ने बड़े रोष में आकर उत्तर दिया ''मैंने निरंतर बीस वर्षों तक एक ही गुरु से शिक्षा पायी है और अलग–अलग अवधि के लिए अन्य गुरुओं से भी तालीम प्राप्त की है। इस प्रकार की तपस्या करने, अपने को संगीत के प्रति समर्पित करने के लिए कौन तैयार है। मैं आज वृद्धावस्था में भी तानपुरा–तबले की पूजा करती हूँ – आज मैं इस कष्ट साध्य संगीत की बारिकियां बता न सकूँ, किन्तु सिखाया उसे जाता है जो इस तप के लिए तैयार हो''।

सुरश्री केसरबाई अपनी साधना से 'स्वयं संगीत' बन चुकी थी। संगीत उनके लिए एक प्रकार का योग था, आध्यात्मिक लक्ष्य की प्राप्ति कर सौंदर्य–बोधी साधन था। उनका कहना यह भी था कि वर्षों तक मैंने भगवान के लिए गाया है, संयोगवश यदि मैंने मेरे रसिक श्रोताओं को आल्हादित किया है तो मेरे लक्ष्य की बहुत अधिक पूर्ति हुई है। इसी संवेदनशील गायिका ने उसी दिन से गायन से सन्यास ले लिया, जिस दिन से उसने अनुभव किया गया कि अब मेरी आवाज साथ नहीं दे रही है। संगीत समीक्षक श्री मोहन नाडकर्णी के अनुसार सुरश्री केसरबाई का संगीत हिन्दुस्तानी संगीत–परंपरा में कीर्ति स्तम्भ था। साढ़े तीन सप्तकों में सहज संचरण में सक्षम की धनी सुरश्री केसरबाई का कोई सानी नहीं रहा। उनकी खुली एवं बुलंद आवाज और तेज गति की तानें व तार सप्तक व मंद्र सप्तक में स्पष्ट स्वर–संचरण के 'दर्शन' से श्रोता चकित हो जाते थे। माइक न रहने पर भी उनके गायन का प्रत्येक स्वर पूरी बुलंदी से सुनायी देता था। उनके गायन में जो पूर्णता आयी थी वह उनकी अनुशासनबद्ध संगीत–साधना का फल था। केसरबाई जयपुर–अतरौली गायिकी की अत्यन्त बोधक्षम गायिक सिद्ध हुयी। स्वर एवं लय के समान अनुपात से समन्वय और ध्रुपद जैसी भव्यता से समृद्ध उनका ख्याल गायन विशाल स्थापत्य की सृष्टि के तुल्य लगता था, जिसमें हिमालयी विशद्‌ता थी। उनकी सांगीतिक प्रतिभा पर संगीत जगत को गर्व होना स्वाभाविक है। उनका अपना श्रोता वर्ग था, किन्तु आने वाली पीढ़ी के लिए उन्होंने कोई परवाह नहीं की, कुछ रिकार्डिंग को छोड़कर अधिक रिकार्डिंग भी नहीं की और न कोई 'योग्य' शिष्य तैयार किया। अधिक मात्रा में संग्रह करने में उनका विश्वास नहीं था।

श्री ओम मिश्र (संगीत, मई 1983) ने लिखा है कि सुरश्री केसरबाई ख्याल–गायन की सशक्त स्तम्भ थी। उनके स्वर ने जयपुर घराने की ख्याल–गायन शैली को सजीव किया था। उनकी गायिकी में गहराई थी, व्यापकता थी। हिन्दुस्तानी संगीत को उच्च स्तर पर प्रतिष्ठित कराने वाली केसरबाई ख्याल–गायन की आत्मा थी। जयपुर घराने की सशक्त स्तम्भ केसरबाई की गुरु भक्ति का ज्वलंत उदाहरण यह है कि उन्होंने अपने गुरु उस्ताद अल्लादिया खॉ को दिया गया वचन अथवा गुरु की शर्त के अनुसार उस्ताद को परब्रहम्‌ माना एवं उस्ताद के जीवित रहने तक सफल कार्यक्रम प्रस्तुत नहीं किया।

प्रो0 बी0आर0 देवधर ने अपने ग्रंथ 'थारे संगीतकार' में सुरश्री केसरबाई केरकर से ली गयी मुलाकात प्रकाशित की है। उसके मुख्य अंश इस प्रकार हैं ''सुरश्री केसरबाई ने बताया, मैं आठ वर्ष की आयु में कोल्हापुर गई और वहां खॉ साहब अब्दुल करीम खॉ से मैंने शिक्षा प्राप्त करना शुरू किया, यह मेरी शुरू की शिक्षा थी। दस माह तक शिक्षण चला, जबकि खॉ साहब ने मुझे अलंकार

याद कराये और दो चीजें सिखायी – 'बना सारी रैन' और 'सुघर बना''। बाद में मैं अपने जन्म स्थल गोवा चली गयी। गोवा जाने के बाद आठ–दस महीनों तक गाने से मेरा संबंध टूट गया। उस समय पं0 वझे बुआ लामगॉव से गोवा आकर रहने लगे। गोवा में संगीत सिखाने वाला और कोई न होने के कारण मैने वझे बुआ से तालीम लेने का निश्चय किया गया। किन्तु वझे बुआ गोवा में अधिक ठहरते नहीं थे, अतः मैं अपनी एक सहेली देवी कपिलेश्वरकर के साथ लामगॉव जाकर वझे बुआ से तालीम लेने लगी। किन्तु बुआ जब भ्रमण पर निकले कि हमारा शिक्षण बंद, और हम पुनः गोवा लौट आते।

यह क्रम मेरी आयु के 10 से 13 वर्ष तक चला। बाद में कुडईकर जमीदार ने अपनी पुत्री को तालीम देने के लिए वझे बुआ को बाड़ोद गॉव में बुला लिया। किन्तु यहॉ भी वझे बुआ वर्षभर ठहरते नहीं थे, पॉच–छः महीने हुए कि वे भ्रमण पर निकल पड़ते। वझे बुआ की तालीम का लाभ उठाने के लिए मैं बाड़ोद जाकर रहने लगी। गायन सीखने की तीव्र इच्छा ही इसका कारण था, जबकि सिखाने वाला कोई नहीं था। बाद में जहॉ से भी जो कुछ मिलता, वहॉ से ग्रहण करने के अलावा और कोई पथ नहीं था। बाद में 16 वर्ष की आयु में, सन् 1909 में, मैं बम्बई (अब मुंबई) रहने आ गयी।

शुरु के छः माह तक संगीत शिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं हुई। प्रायः उसी समय प्रसिद्ध सितारवादक खॉ साहब ने मुझे शिक्षा देना स्वीकार किया। यह शिक्षण पूरे एक वर्ष चला, बाद में पटियाला से खॉ साहब का बुलावा आ गया और इसी समय मेरा शिक्षण भी बंद हो गया। किन्तु सर्दी के दिनों में खॉ साहब मुंबई आते और तीन–चार महीने ठहरते समय मुझे तालीम देते थे। कोल्हापुर के सरदार बाला साहब गायकवाड़ एवं श्रीमत् बापू साहब कागलगर मुंबई आकर दो–देवल के सामने स्थित 'बाली हाउस' में ठहरते थे। उनके साथ खॉ साहब अल्लादिया खॉ भी मुंबई आते थे। सन् 1892 में खॉ साहब मुंबई में आठ महीने रहे। बड़े आग्रह के बाद खॉ साहब मुझे तालीम देने को राजी हुए। उनकी विशिष्ट गायिकी मुझे आती नहीं थी, पहले दिन वे मुझे सिखाते, दूसरे दिन मैं उसे भूल जाती, अतः मुझ पर वे प्रसन्न नहीं थे। किसी प्रकार तीन महीनों तक ऐसा ही चलता रहा। तबियत बिगड़ जाने के कारण खॉ साहब कोल्हापुर चले गये। प्रायः उसी दौरान खॉ साहब बरकतुल्ला खॉ छुट्टी लेकर मुंबई आ गये, किन्तु मुंबई में नहीं रहे और पुणे में सरदार नातू के पास रहने लगे। मेरे आग्रह पर खॉ साहब बरकतुल्ला खॉ केवल शनिवार एवं रविवार को मुंबई आकर मुझे तालीम देने लगे। दो–तीन महीनों तक इसी प्रकार चला, बाद में उन्हें मैसूर में नौकरी मिली। मैसूर व पटियाला में नौकरी, फिर तीन–चार महीने छुट्टी के दौरान मुंबई में, यही उनका कार्यक्रम चला। यह तालीम 1915 तक चली। किसी से भी बराबर शिक्षा नहीं, अतः मन बड़ा उद्विग्न हो गया। तब उस समय मुंबई निवासी पं0 भास्कर बुआ बखले से तालीम लेने का निश्चय किया। यह शिक्षा ठीक साढ़े चार महीने चली और ''भारत–गायन–समाज के संचालन के लिए उन्होंने मुंबई छोड़कर पुणे जाने का निश्चय किया, यहीं मेरा शिक्षण समाप्त हो गया।

1917 में पं0 रामकृष्ण बुआ वझे मुंबई में रहने लगे और उनके पास मैंने सीखना शुरू किया। इतने विद्वान होते हुए भी बुआ साबह किसी एक जगह 10–15 मिनट से अधिक टिकते नहीं थे। आधा घंटा तालीम होते–होते ही अन्यत्र चले जाते, यह शिक्षण भी कुछ ही महीनों में बंद हो गया। 1917 तक इसी प्रकार की स्थिति से मैं बड़ी दुःखी हो गयी थी और नादोपासना ही छोड़ दी, किन्तु 1918 में मैंने निश्चय किया कि गाना सीखना है तो खॉ साहब अल्लादिया खॉ साहब से ही, किन्तु यह आसान नहीं था। इस प्रकार के अचानक निर्णय करने के पीछे एक बड़ा कारण था और इसे

महत्वाकांक्षी भी कहा जा सकता है। पं0 वझे बुआ की तालीम बंद होने के बाद एक वर्ष वैसे ही निकल गया, मैंने भी उसकी विशेष फिक्र नहीं की। उसके बाद 1918 में कोलकाता के लाला दुनीचंद मुंबई आये हुए थे। लालाजी के सम्मान में एक समारोह आयोजित कर उन्हें अच्छा गाना सुनाने का निर्णय उनकी मित्र मण्डली ने किया। उसके लिए गोरेगॉव में एक बंगला बुक किया गया। तीन दिनों तक खाना पीना और रोज सुबह—शाम ताराबाई शिरोडकर का गाना सुनाना, यही कार्यक्रम था। मैं अपनी तीन—चार सहेलियों के साथ उसमें शामिल थी। पहले दिन ताराबाई का गाना बहुत ही अच्छा हुआ। उस समय ताराबाई बड़ी तैयार थी और मुझे भी उस पर अभिमान महसूस हुआ। दूसरे दिन रात को जमी मण्डली में यह निश्चय किया कि सभी थोड़ा—थोड़ा गायें और अंत में ताराबाई का गायन हो। मेरा गायन कैसा, कितना है, उसका मुझे मान था। अतः मैंने गाने के लिए स्पष्टतः इन्कार कर दिया। मेरी सहेलियों ने हॉ—ना करते—करते एक—एक गाना गया। अंत में मण्डली के सभी लोग अड़ गये कि मुझे भी गाना चाहिए, ऐसा सोचकर ही आग्रह शुरु हुआ। कोई गत्यंतर न देखकर मुझे गाना पड़ा, अनबने मन से मैंने तानुपरा हाथ में लिया और खॉ साहब बरकतुल्ला खॉ का सिखाया हुआ राग मियां मल्हार शुरु किया। उस समय मेरे नियमित संगतकार नहीं थे, इसलिए गाना जमा नहीं। मुझे बहुत बुरा लगा, जिस गृहस्थ की मध्यस्थता के कारण खॉ साहब बरकतुल्ला खॉ ने मुझे सिखाया था, वे भी चुप नहीं रहे और सभी के सामने बड़ी तीखें शब्दों में मुझे बुरा—भला सुनाया। यह अपमान में सहन नहीं कर सकी और ऐसा अनुभव होने लगा कि मैं अपना सा मुँह लेकर कहीं भाग जाऊं। रात भर मुझे नींद नहीं आयी और मैं पागल सी हो गयी। इसके पश्चात् मैंने निश्चय किया कि संगीत जगत में नाम कमाना ही है। खॉ साहब अल्लादिया खॉ से तालीम प्राप्त करने का मैंने निश्चय कर लिया था।

सन् 1912 में खॉ साहब ने मुझे तीन महीनों तक शिक्षा दी थी। उनकी गायिकी की कुछ विशेषताएँ थी, उन्हें मैंने जान लिया था। इसके अलावा बड़े—बड़े गायक भी उनकी विद्वता और गायिकी के कायल थे। अतः मैंने निश्चय किया कि सीखना है तो यही गायिकी। इसके लिये मुझे बहुत परिश्रम करना पड़ा। किसी भी स्थिति में खॉ साहब तालीम देने को तैयार नहीं हुए। उनका कहना था कि केसरबाई के लिए मेरी गायिकी उठाना सम्भव नहीं, अतः मैं उसे नहीं सिखाऊँगा। खॉ साहब ने सेठ दुनीचंद के यहॉ कुछ दिन नौकरी भी की थी, अतः खॉ साहब के मन में सेठ के प्रति आदरभाव भी था। सेठजी ने खॉ साहब को मुंबई आने के लिए पत्र और तार भेजे थे, किन्तु खॉ साहब का उत्तर था ''मेरी तबीयत ठीक नहीं, सांगली के आबा साहब साबरे की औषधि चालू है, अतः आपसे मिलने आना सम्भव नहीं''। कोई उपाय न देखकर खॉ साहब से मिलने के लिए करोड़पति सेठजी सांगली गये, फिर भी खॉ साहब ने मुझे तालीम देने से इन्कार कर दिया। दो वर्षों प्रयास के बावजूद खॉ साबह मुझे तालीम देने को तैयार नहीं हुए, किन्तु मेरा भी हठ था कि गाना सीखना है तो खॉ साहब अल्ल्लादिया खॉ साहब से ही। दो वर्षों की निराशा की स्थिति में मैं अभी दुःखी रहने लगी, जिसका प्रभाव मेरे स्वास्थ्य पर भी पड़ा एवं मैं सूखने लगी। मेरी हालत देखकर सेठ विट्ठलदास द्वारकादास ने मुझे आश्वासन दिया कि केसरबाई निराश मत होओ, मैं अंतिम प्रयत्न करता हूँ और मुझे आशा है कि खॉ साहब तुम्हें तालीम देने के लिए राजी हो जायेंगे। सेठ विट्ठलदास और खॉ साहब के अच्छे संबंध थे। दिसम्बर 1920 में सेठजी ने खॉ साहब को तार दिया — ''मैं बहुत बीमार हूँ, जीने की आशा नहीं, मिलना हो तो जल्दी आ जाइये''। तार मिलने पर खॉ साहब तीसरे ही दिन सेठजी के घर आये, किन्तु सेठजी को स्वस्थ्य देखकर हसने लगे। इस प्रकार बुलाने पर खॉ साहब नाराज तो हुए किन्तु शाम तक शान्त होने पर सेठजी खॉ साहब को

घुमाने के लिए चौपाटी ले गये। चौपाटी पर सेठजी से खॉ साहब ने प्रश्न किया कि मुझे गलत सूचना देकर मुंबई क्यों बुलाया गया ? सेठजी ने कहा कि आप मेरी विनती को स्वीकार कर केसरबाई को तालीम दें, यदि आपने मेरी विनती को मान्य नहीं किया तो आपके साथ मैत्री टूट जायेगी। इसका अर्थ है कि यह आखिरी भेंट ? इस पर खॉ साहब ने कहा कि ''1912 में मैंने उसे तीन महीने सिखाया था उसे मेरी गायिकी नहीं आयेगी, दूसरी बात यह है कि मुझे पता चला कि उसने किसी से कहा है कि खॉ साहब को सिखना नहीं आता, इसलिए मैंने उसे सिखाने से इन्कार किया''। यह सुनकर सेठजी बहुत हंसे और बोले – ''खा साहब, आपको सिखाना नहीं आता, ऐसा केसरबाई कह नहीं सकती, ऐसी किसी ने चुगली की है। आपसे सीखने के लिए वह दो वर्षों से 'हठ' किये हुए है, आपका ही जप करती है। अतः केसरबाई को सुनें और उसकी तालीम शुरू करें''।

इस आग्रह के बाद खॉ साहब ने विचार करने के लिए दो–तीन दिन का समय मांगा। तीन दिन के बाद सेठजी के पूछने पर खॉ साहब ने कहा कि इतने आग्रह पर मैं उसे सिखाऊँगा, किन्तु मेरी कुछ शर्तें हैं, उन्हें उसे पालन करना होगा। सेठजी कागज–पेंसिल लेकर शर्तें लिखने लगे (1) निश्चित रकम देकर गंड़ाबंधन (2) मासिक अमुक रुपये की पगार (3) यह तालीम दस वर्षों तक चलनी चाहिए (4) मेरी तबियत ठीक न रहे या काम से मैं कहीं अन्यत्र जाऊॅ तो भी मेरी पगार मिलनी चाहिए (5) मुंबई में मेरी तबियत ठीक नहीं रही और मैं मुंबई से बाहर अन्यत्र जाकर रहूॅ तो उसे वहीं आकर तालीम लेनी होगी। ये सब शर्तें मान्य होने के बाद 1 जनवरी, 1921 को मुंबई में गण्डाबंधन हुआ। तालीम शुरू हुई। एक माह बाद तबियत बिगड़ने के कारण खॉ साहब ने औषधि लेने के लिए सांगली जाने का निश्चय किया, मैं भी वहॉ चली गयी। फरवरी से अप्रैल तक अच्छी तालीम मिली, फिर मैं मुंबई लौट आयी और खॉ साहब भी आ गये। इसके बाद सात महीनों तक बहुत ही उत्तम तालीम मिली। इसके पश्चात् खॉ साहब अपने पुत्र के विवाह हेतु दो महीनों के लिए उजियारा चले गये।

जिस प्रकार देवी सरस्वती की उन पर कृपा थी, उसी प्रकार देवी लक्ष्मी की भी उन पर कृपा थी। इन तथ्यों पर प्रकाश डालने के साथ–साथ प्रो0 देवधर ने लिखा है कि अखिल भारतीय संगीत परिषद कोलकाता ने 1938 में केसरबाई को 'सुरश्री' की उपाधि प्रदान की। इस उपाधि 'सुरश्री' को लेकर यह विवाद है कि यह उपाधि किसने या किस संस्था ने दी। श्री जी0 एन0 जोशी ने अपने ग्रंथ 'डाउन मेलाडी लेन' और सुश्री सुशीला मिश्र ने अपने ग्रंथ 'ग्रेट मास्टर्स ऑफ हिन्दुस्तानी म्यूजिक' में कहा है कि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने केसरबाई को 'सुरश्री' उपाधि प्रदान की। जबकि हमारे संगीत रत्न (हाथरस) के अनुसार कोलकाता के संगीत रसिकों ने उन्हें यह उपाधि प्रदान की जाने की बात स्वीकार की। संगीत समीक्षक एवं लेखक श्री रामकृष्ण बाक्रे ने अपने ग्रंथ 'भिन्न षड्ज' में कहा है कि सुरश्री केसरबाई को 'सुरश्री' की उपाधि 29 फरवरी, 1948 को कोलकाता की 'सज्जन सम्मान समिति' द्वारा प्रदान की गयी। श्री बाक्रे द्वारा प्रदत्त तथ्य सही लगता है। इस संदर्भ में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा कालिपोंग से 29 अप्रैल, 1938 को श्रीमती साहाना देवी को लिखित पूरा पत्र उद्धत करना ठीक होगा।

सन् 1954–55 में केसरबाई ने कुछ 78 आर0पी0एम0 रिकार्ड किये और जब ये रिकार्ड उनकी स्वीकृति के लिए भेजे गये तो उन्होंने दस में से चार को पुनः रिकार्ड करना स्वीकार किया, क्योंकि उनकी दृष्टि में अन्य रिकार्ड उनके स्तर के अनरूप नहीं थे। सुश्री सुशीला मिश्र ने अपने ग्रंथ 'ग्रेट मास्टर्स ऑफ हिन्दुस्तानी म्यूजिक' में लिखा है कि 16 सितम्बर, 1977 को निधन के बहुत

पूर्व केसरबाई ने उस समय गाना बंद कर दिया था जबकि उन्होंने अनुभव किया कि उनकी आवाज उनके स्तर की गायिकी का साथ नहीं दे रही है। 1920 से 1946 तक केसरबाई ने कठोर साधना की वस्तुतः प्रतिदिन दस घंटों से भी अधिक समय का रियाज था, जैसा कि उस्ताद का आदेश था और इस गायिका ने वह स्तर प्राप्त किया जिसे पाने की उसके अंतर में उत्कृष्ट आकांक्षा थी। इससे उनमें भारी आत्मविश्वास जाग्रत हुआ और मंचीय अनुभव भी। इसका कारण यह भी था कि खॉ साहब जब गाने के लिए कार्यक्रमों में जाते तो केसरबाई को अपने साथ ले जाते और उसे महफिल में अपनी संगत में गवाते। उनके अनुसार इनमें सबसे स्मरणीय है, 1944 का मुंबई में विक्रमादित्य सम्मेलन, जबकि केसरबाई ने अपने गुरु के साथ गाया। इस 'गान–महर्षि' उस्ताद अल्लादिया खॉ का 16 मार्च, 1946 को निधन हो गया। उस्ताद के निधन के बाद ही केसरबाई के एकल गायन कार्यक्रम आरम्भ हुए, उनकी कीर्ति पूरे देश में फैल गयी।

दृढ़, लचीली, परिष्कृत व सुशिक्षित आवाज, तीन सप्तकों में सहज संचरण, राग शुद्धि, उत्तम साहित्य, परिष्कृत ध्वनि प्रक्षेपण, संतुलित अलंकरण आदि उनकी सम्पदा थी। केसरबाई के गायन में अल्लादिया खॉ घरान की सभी विशेषताएँ प्रकट होती थी, जैसे व्यवस्थित राग–विस्तार, शब्दों का सार्थक प्रयोग, लय–वैचित्र्य के साथ सुचिंतित स्वर–संयोजन आदि। भावाभिव्यंजना एवं सार्थकता पर उनका ध्यान अवश्य था, परन्तु स्वर–ताल व बोल–समंजन की पूर्णता पर जोर अधिक था। उनके तान–वैचित्र्य की तुलना स्त्रोत से जल के तेज प्रवाह अथवा आतिशाबाजी से की जाती है, जिसमें तीव्र गति है और रंगों की छटा भी। अप्रचलित राग यथा बसंत–केदार, सावनी–नट, नट–बिलावल, सावनी–कल्याण, नट–कामोद की प्रस्तुति में वह अधिक आनन्द अनुभव करती थी। उन्होंने अपने संगीत के साथ कभी समझौता नहीं किया, और इसी प्रक्रिया में संगीत रसिको के समकालीन जगत से इनका विशेष संबंध नहीं रहा। उन्होंने अपने संगीत का वैशिष्ट्य कायम रखा और वह संगीतज्ञों की संगीतज्ञ रही। वह अपने जीवन काल में 'लीजेंड' (प्रवाद–पुरुष) बन गयी।

2.3.6 आचार्य बृहस्पति :–

जीवन परिचय – आचार्य बृहस्पति का जन्म उत्तर प्रदेश के रामपुर जिले में 2 जनवरी 1918 को हुआ था। आपके पिता पं0 गोविन्द राम जी संस्कृत के पंडित तथा शिक्षक थे। आचार्य बृहस्पति के पितामह पं0 अयोध्या प्रसाद भी उच्च कोटि के विद्वान थे। बालक बृहस्पति को केवल 10 (दस) वर्ष की आयु में ही पितृ–स्नेह से वंचित हो जाना पड़ा। अतः आपका जीवन संघर्षमय रहा। लेकिन आपकी माता नर्मदादेवी ने आपका लालन–पोषण करने के साथ–साथ आपके हृदय में बहुत अच्छे संस्कार बद्धमूल कर दिए। माता की प्रेरणा के परिणामस्वरूप इन्होंने संगीत का ज्ञान भी बाल्यावस्था से प्राप्त करना आरम्भ कर दिया तथा वंशपरम्परा के निर्वाह के प्रति भी अपने मन में एक दृढ़ संकल्प लिया। रामपुर दरबार में वे संगीत और ललित कलाओं के संरक्षक भी रहे। देश के विभिन्न विद्वज्जनों का रामपुर के नवाब बड़ा ही आदर और सम्मान करते थे। संगीत के इस वातावरण में बृहस्पति जी के संगीतज्ञ का विकास हुआ। **रामपुर दरबार में संगीतज्ञ सैय्यद मिर्जा नवाब हुसैन संगीत में बृहस्पति जी के गुरू थे।** वे बृहस्पति जी के संगीत तथा उनकी साहित्यिक अभिरूचि से बहुत अधिक प्रभावित थे। अलंकार–शास्त्र की शिक्षा आचार्य जी ने पं0 परमेश्वरानंद शास्त्री से ली थी। दस वर्ष की आयु में ही आपने संस्कृत

श्लोक की रचना कर लोगों को आश्चर्यचकित कर दिया था। श्री बृहस्पति का उच्चारण साढ़े तीन वर्ष की अवस्था में भी पूर्णतया शुद्ध था। पांच वर्ष की आयु में ''चाणक्य नीति'' एवं ''पाण्डव गीता'' के श्लोकों के साथ ''दुर्गा सप्तशती'' के ''कवच'' और ''कीलक'' भी इन्हें कंठस्थ थे। ग्यारहवें वर्ष में उन्होंने ''सवैया'' छन्द में काव्यरचना भी प्रारम्भ कर दी थी। आचार्य बृहस्पति ने विभिन्न विद्वानों से शिक्षा प्राप्त की थी। आपने महामहोपाध्याय परमेश्वरानन्द जी से अलंकार शास्त्र की शिक्षा, हरिशंकर झा से न्याय की शिक्षा, पं0 छेदी झा से व्याकरण की शिक्षा प्राप्त की। लगभग 1937 ई0 से महर्षि भरत एवं आचार्य शारंगदेव बृहस्पति जी के अध्ययन के विषय बने। आचार्य बृहस्पति ने सन् 1965 में आकाशवाणी में चीफ प्रोड्यूसर के रूप में और फिर संगीत, संस्कृत और ब्रजभाषा के सर्वोच्च परामर्शदाता के पद पर नियुक्तियाँ पाई। आकाशवाणी से संस्कृत में समाचारों का आरम्भ तथा 'उभरते स्वर' कार्यक्रम आपके ही अथक प्रयासों का फल है। उनका लिखा नाटक 'मेघ का कवि' आकाशवाणी से समय–समय पर प्रसारित होता रहा।

<u>भारतीय संगीत को देन</u> – सन् 1955 में देश के प्रमुख समाचार पत्रों ने यह समाचार दिया कि सनातन धर्म कालेज, कानपुर में धर्मशास्त्र एवं हिन्दी–साहित्य के प्रोफेसर आचार्य कैलाशचन्द्र बृहस्पति को संगीत के ग्रन्थों में कुछ ऐसे सूत्र मिलें हैं, जिनके आधार पर प्राचीन संगीत को पूर्णतया स्पष्ट किया जा सकता है। यह समाचार संगीत जगत् के लिए उत्सुकता एवं आश्चर्य का विषय था। आचार्य बृहस्पति ने भरत तथा शारंगदेव के प्राचीन सिद्धांतों को जोड़कर संगीत जगत में एक महत्वपूर्ण कार्य किया।

13वीं शताब्दी में शारंगदेव ने संगीत रत्नाकर ग्रन्थ में संगीत जैसे गूढ़ विषय की व्यापक विवेचना की है। परन्तु 13वीं शताब्दी के बाद सारे भारत में विदेशी राज्य धीरे धीरे फैलने लगा। संगीत के विद्वानों ने विदेशियों को अपनी विद्या का रहस्य न बताने के कारण उसे अपने ग्रन्थों में ही छुपा रखा। इसी कारण उस युग से ही वे ग्रन्थ अस्पष्ट होने लगे। प्राचीन काल के संगीत ग्रन्थ अधिकतर संस्कृत में ही हैं। वर्तमान समय में अनेक विद्वानों ने प्राचीन ग्रन्थों को ठीक तरह से न समझ पाने के कारण संगीत सम्बन्धी अनेक तथ्यों पर भ्रामक विचार पैदा कर दिए हैं। ऐसी स्थिति में आचार्य बृहस्पति वर्तमान युग के शारंगदेव सिद्ध हुए हैं। संगीत शास्त्र पर उन्होंने गूढ़ चिन्तन किया तथा अपने विचार विभिन्न सेमीनारों के माध्यम से संगीतकारों तक पहुंचाये।

सन् 1953 ई0 में आकाशवाणी दिल्ली द्वारा आयोजित सेमीनार में आचार्य बृहस्पति ने रस–सिद्धांत पर एक निबन्ध पढ़ा जिसमें संगीत और रस के पारस्परिक सम्बन्ध का विवेचन एवं स्पष्टीकरण किया गया था। भरत की स्वरविधि का स्पष्टीकरण करने के लिए सन् 1957 में आपने 'बृहस्पतिवीणा', 'बृहस्पतिकिन्नरी' और 'श्रुतिदर्पण' जैसे वाद्यों का निर्माण किया। अपने बनाए हुए श्रुति–दर्पण और बृहस्पति वीणा वाद्यों पर अपने भरत पद्धति से स्वरों की स्थापना करके दोनों ग्रामों और बाईस श्रुतियों का सप्रयोग प्रदर्शन बम्बई की एक सभा में किया, जो संगीत नाटक अकादमी की टेप–लाइब्रेरी में आज भी सुरक्षित है। इसके पहले दिल्ली के सेमीनार में भी आपने श्रुति दर्पण नामक वाद्य पर एक ऐतिहासिक भाषण दिया था। उस भाषण में आपने भीष्मदेव वेदी जैसे कलाकार से तन्त्रीवाद्य पर जाति–प्रदर्शन भी कराया, जिनमें वे ऋषभ और गन्धार सारिकाओं पर स्थिर रूप में मिले हुए थे। उनका अस्तित्व वेंकटमुखी के बहत्तर जनक मेलों एवं स्व0 भातखण्डे की ठाट–पद्धति में नहीं है। श्रुति दर्पण में यमन कल्याण एवं दरबारी के पृथक–पृथक ऋषभ तथा तोड़ी एवं पीलू के गन्धार दिखाये गये हैं।

संगीत के ग्रथों पर निरन्तर उनका शोध चलता रहा और उनके अनुसन्धानात्मक लेख पत्र और पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। हिन्दी और संस्कृत का ज्ञान आचार्य जी को पैतृक गुणों से मिला, इसके अलावा रामपुर की संगीत परम्परा और रामपुर के प्रसिद्ध संगीत गुरूओं के संग साथ ने आचार्य जी को उर्दू और फारसी का भी ज्ञान दिया। अतएव अपनी विविध भाषओं के ज्ञान से आपने भारतीय संगीत के सम्पूर्ण इतिहास की प्रामाणिक रूप से छानबीन की। यहाँ तक कि आपने पी–एच0डी0 का विषय ध्रुवपद और उसके विकास पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया। आपका संगीत के प्रायोगिक (Practical) और शास्त्रपक्ष (Theory) दोंनो में सामंजस्य था।

<u>श्रुति तथा स्वर सम्बन्धी विचार</u> – आचार्य बृहस्पति ने श्रुति तथा स्वर पर विशेष चिन्तन किया है। उनके शब्दों में 'जहाँ तक श्रुतियों एवं स्वरों के परिमाणों की परीक्षा का सम्बन्ध है, मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं कि नेशनल लेबोरेट्री जैसी प्रयोगशाला में अधिकारी वैज्ञानिकों के द्वारा मेरे अनुसंधान के परिणामों को पाश्चात्य विज्ञान की कसौटी पर कसा जाए। यदि वह कसौटी खोटी नहीं है, तो महर्षि भरत की स्थापनाएं अपनी सनातनता, सार्वभौमिकता एवं व्यवहार्यता को सिद्ध कर देगी। यह वैज्ञानिक कर्तव्य है, जिससे कि इस सम्बन्ध में फैली हुई अनेक भ्रान्त धारणाओं का निराकरण हो सके और उन क्षेत्रों का मुख–मुद्रण हो जाए, जो महर्षि भरत जैसे आप्त पुरूषों के वाक्यों के विषय में अश्रद्धा का निरन्तर निर्माण करते रहे हैं, या कर रहे हैं।

उनके किसी स्थान पर विभिन्न स्वर सम्बन्धी विचार इस प्रकार हैं – ''यह एक भ्रान्त धारण है कि आधुनिक 'तीव्र मध्यम' प्राचीन माध्यम, ग्रामिक पंचम से अभिन्न है। वस्तुतः 'तीव्र मध्यम' पंचम की दूसरी श्रुति पर तथा 'माध्यमग्रामिक' पंचम की तीसरी श्रुति पर है। दाक्षिणात्य विद्वान हमारे कोमल 'ऋषभ–धैवत' को शुद्ध ऋषभ–धैवत कहते हैं और इन्हीं को महर्षि भरत का 'ऋषभ' और 'धैवत' मान लेते हैं, फलतः 'कोमल ऋषभ' के साथ षड्ज–मध्यम भाव से संवाद करने वाला 'तीव्र मध्यम' उन्हें माध्यमग्रामिक पंचम प्रतीत होता है, परन्तु वास्तविकता यह नहीं है। वस्तुतः कोमल 'ऋषभ' और 'धैवत' त्रिश्रुतिक स्वर नहीं हैं। 'निषाद' के पश्चात् क्रमशः षड्ज की चार और ऋषभ की तीन श्रुतियां होने के कारण निषाद और ऋषभ का अंतर सप्त–श्रुतिक है, अर्थात् ठीक उतना ही है, जितना 'तीव्र गन्धार या पंचम और काकली निषाद' में हैं। इस शास्त्र सिद्ध प्रक्रिया के परिणामस्वरूप प्राप्त होने वाला ऋषभ वह ऋषभ है, जिसे आज दरबारी का ऋषभ कहा जाता है। इसी प्रकार महर्षि भरत का धैवत वह है जो शुद्ध मध्यम से सात श्रुतियों के अन्तर पर उसी प्रकार स्थित है, जिस प्रकार षड्ज की अपेक्षा 'तीव्र गन्धार' स्थित है। यह 'धैवत' 'हमीर' जैसे रागों में प्रयोज्य धैवत है, जो दरबारी में प्रयोज्य ऋषभ के साथ में षड्ज–पंचम भाव से संवाद करता है और यमनकल्याण के ऋषभ के साथ नहीं करता। ''कोमल ऋषभ धैवत दाक्षिणात्यों के अपने शुद्ध ऋषभ धैवत भले ही हो, महर्षि के ऋषभ–धैवत नहीं है। महर्षि के षड्ज ग्राम में 'एक स्वर की एक ही संज्ञा है, मेल पद्धति में एक स्वर की अनेक संज्ञाएं है। दाक्षिणात्यों की मेल पद्धति भरत–सम्प्रदाय से सर्वथा भिन्न है।''

<u>आचार्य द्वारा सम्पादित व लिखित ग्रन्थ</u> – जिस समय आचार्य जी अध्ययन अध्यापन में व्यस्त थे उस समय भारतीय संस्कृति, साहित्य और संगीत का स्तर बहुत गिर रहा था। संस्कृत भाषा में लिखे गए संगीत के ग्रन्थों का पठन–पाठन लुप्त प्राय था। संगीत की शास्त्रीय परम्पराओं पर ईरानी प्रभाव, अवैज्ञानिक धारणाएं, संगीत में मनमानी सिद्धान्तों की दुहाई देना आदि अनके बातों का बोल बाला

था। संगीत के शास्त्र और प्रयोगों में कहीं भी सामंजस्य नहीं था अतएव आचार्यजी ने इन क्षेत्रों पर बहुत कार्य किया। भारतीय संगीत साहित्य और कला के क्षेत्र में भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। नाट्यशास्त्र के संगीत के सैद्धान्तिक विषय स्वर, श्रुतियों, मूर्च्छना, तत, अवनद्ध, घन, सुषिर वाद्यों की विवेचना, भरत के संगीत सिद्धान्तों की विवेचना आदि का पूर्ण विवेचना करते हुए ''भरत का संगीत सिद्धान्त'' जैसे ग्रंथ का लेखन किया। 'नाट्यशास्त्र' के अठाइसवें अध्याय के लिए 'स्वराध्याय' नाम से संस्कृत भाष्य तथा हिन्दी टीका, 'मुसलमान और भारतीय संगीत', प्राचीन जैन ग्रन्थ 'संगीत समयसार' का सम्पादन और व्याख्यान। सेवानिवृत्ति के बाद आपने अनेक ग्रंथ लिखे। संगीत चिन्तामणि, खुसरो, तानसेन व अन्य कलाकार, संगीत चिन्तन, संस्कृत में संजीवनी–भाष्य, हिन्दी भाषा में साधना टीका, जो उनकी दिवंगत पत्नी के नाम से थी।

कुछ लोगों के मतानुसार आचार्य केवल संगीतशास्त्री थे। लेकिन उनकी दूसरी पत्नी श्रीमती सुलोचना बृहस्पति जी ने लिखा है – ''यह ठीक है कि वह स्टेज पर कभी गाते–बजाते नहीं थे लेकिन वह ऐसा कर नहीं सकते थे ऐसी बात नहीं है। 1967–68 में नई दिल्ली में मैक्समूलर भवन में उन्होंने आलाप करके जाति गायन का पूरा कार्यक्रम पेश किया, अगर वे गाते नहीं तो फिर हमें सिखाते कैसे थे।'' आचार्यजी सदारंग और अदारंग की परम्परा से अवगत थे। इसीलिए उन्होंने अनेक रागों का निर्माण किया, जैसे अनंगरंजनी, प्रभातरंजनी। इसके अतिरिक्त उर्दू के ख्यालों की रचना की। आचार्यजी को तबले का गहन ज्ञान था। नृत्य के भी वे ज्ञाता थे। नृत्य के अनेक बोलों को वे तबले पर बजा सकते थे। कत्थक नृत्य से सम्बन्धित अनेक सैद्धान्तिक श्लोक उन्होंने लिखे। हारमोनियम के वे सिद्धहस्त कलाकार थे। एक बार हारमोनियम पर उन्होंने ठुमरी का कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

संगीत की अच्छी शिक्षा के वे पक्षधर थे। उनका कहना था कि संगीत शिक्षा में पहले रागों के रहस्य की जानकरी देना चाहिए फिर उस राग के पल्टे फिर बन्दिश। आचार्यजी एक उत्तम कोटि के वाग्गेयकार थे। उनमें अद्भुत प्रतिभा और मेधा थी। इसके अतिरिक्त संस्कृत, पाली, प्राकृत, हिन्दी, उर्दू और फारसी आदि अनेक भाषाओं के ज्ञाता थे और सभी भाषाओं में उन्होंने उत्कृष्ट कोटि की काव्य रचना की। वे अपने नाम के साथ 'अनंगरंग' उपनाम भी लगाते थे। उनकी रचनाएं 'अनंगरंग' उपनाम से जानी जाती है। अपनी रचनाओं में उन्होंने अनेक नाटक भी लिखे और विशेष रूप से रेडियो–रूपक लिखे। आरम्भ में रेडियो के नाटकों में अभिनय भी किया करते थे। कहा जाए कि आधुनिक समय में संगीत के जितने भी ग्रंथों का शोधपूर्ण लेखन, सम्पादन, व्याख्यान और अनेक सांगीतिक सिद्धान्तों का प्रामाणिक कार्य जितना आचार्यजी ने किया उतना सम्भवतः और किसी ने नहीं किया। ईस्वी पूर्व के महर्षि भरतकृत 'नाट्यशास्त्र' की जितनी विवेचना और जितना प्रामाणिक स्पष्टीकरण आचार्यजी ने किया है उतना आधुनिक संगीतशास्त्र में किसी ने नहीं किया।

1968 में आचार्यजी ने ''उस्ताद ने कहा था'' नामक शीर्षक से उन्नीस रागों के तान–प्रस्तार संगीत नामक मासिक पत्रिका में प्रकाशित कराए थे। उसमें इनका अपना नाम बृहस्पति न देकर 'मुश्तरी रामपुरी' दिया था। इसके अलावा आप 'प्रश्न आपके, उत्तर आचार्य बृहस्पति के' शीर्षक से संगीत की अनेक समस्याओं का समाधान संगीत के माध्यम से करते रहे। मार्च 1975 से लेकर अप्रैल 1978 ई0 तक 'संगीत' मासिक पत्रिका में 'राग चिन्तन' शीर्षक से बारह रागों का राग–रूप व ज्ञान प्रस्तार हुआ। यह राग बारह कौसी, कान्हड़ा–आसावरी तोड़ी, मारूबिहाग, भैरव–एमनी वंसत, अहीर भैरव, गौड़ सारंग, शुद्ध कल्याण, प्रभातरंजनी, भटियार और पूर्वी हैं।

<u>नवीन राग</u> – आचार्य बृहस्पति ने बहुत सी रागों की रचनाएं भी की है। उनमें से मुख्य राग इस प्रकार हैं – **1.प्रभात रंजनी** **2. संजोग** **3. अनंगरंजनी**

<u>पुस्तकें</u> – आचार्य बृहस्पति द्वारा लिखी गई व संपादित पुस्तकों के नाम इस प्रकार है–

1. भरत का संगीत सिद्धान्त
2. संगीत चिंतामणि
3. नाट्यशास्त्र का अट्ठाईसवां अध्याय
4. ध्रुपद और उसका विकास
5. मुसलमान और भारतीय संगीत
6. संगीत समयसार
7. खुसरो, तानसेन तथा अन्य कलाकार
8. ब्रज वल्लरी विलास
9. राग रहस्य
10. मेघ का कवि

इन सभी पुस्तकों के बारे में पिछली कुछ पंक्तियों में विस्तार–पूर्वक बताया गया है।

<u>सम्मान व पुरस्कार</u> – संगीत की सेवाओं के लिए आचार्य बृहस्पति को राष्ट्रपति द्वारा आचार्य बृहस्पति नाटक अकादमी के 'रत्न–सदस्य' के रूप में सम्मानित किया गया। अखिल भारतीय गान्धर्व मंडल में उन्हें 'संगीत महामहोपाध्याय' पदवी देकर सम्मानिक किया। द्वारिकापीठ के शंकराचार्य ने आचार्य जी को अनेक सर्वतोमुखी पांडित्य के कारण 'विद्या मार्तण्ड' की पदवी दी।

<u>मृत्यु</u> – अपने कर्म क्षेत्र में कार्यरत रहते हुए अकस्मात् उनके जीवन की लीला पूरी हो गई और 31 जुलाई सन् 1979 को उन्होंने अपनी नश्वर देह त्याग दिया।

<u>2.3.7 पं0 कुमार गन्धर्व :–</u>

<u>जीवन परिचय</u> – कुमार गन्धर्व का जन्म बेलगाम जिले के सुले भावी ग्राम में 8 अप्रैल 1924 को एक लिंगायत परिवार में हुआ। इनका मूल नाम शिवपुत्र था। अनके पिता श्री कोमकली भी एक अच्छे गायक थे। आयु के पाँचवें वर्ष में ही एक दिन यकायक कुमार की प्रतिभा दृष्टिगोचर हुई। यह बालक उस दिन सवाई गन्धर्व के एक गायन–जल्से में गया था। वहाँ से लौटकर जब घर आया तो सवाई गन्धर्व द्वारा गाई हुई वसन्त राग की बंदिश, तान और आलापों के साथ ज्यों की त्यों नकल करके गाने लगा। यह देखकर इनके पिता जी आश्चर्यचकित रह गए। लोगों ने कहा, 'इस बालक में पूर्वजन्म के संगीत–संस्कार हैं, अतः इसकी संगीत भावना को बल देने के लिए इसे शास्त्रीय संगीत अवश्य सिखाइए। फलस्वरूप कुमार की संगीत शिक्षा प्रारंभ हो गई। दो वर्ष की तालीम में ही कुमार के अन्दर यह विलक्षण शक्ति पैदा हो गई कि बड़े–बड़े गायकों के ग्रामाफोन रिकार्डों की हूबहू

नकल करके गाने लगे। 7 वर्ष की आयु में एक मठ के गुरू ने उन्हें 'कुमार गन्धर्व' की उपाधि प्रदान की। 9 वर्ष की उम्र में कुमार गन्धर्व का सर्वप्रथम गायन जल्सा बेलगांव में हुआ। इसके पश्चात् बम्बई के प्रोफेसर देवधर ने कुमार को अपने संगीत–विद्यालय में रख लिया। फरवरी, सन् 1936 में, बम्बई में एक संगीत परिषद् हुई। उसमें कुमार गन्धर्व की कला का सफल प्रदर्शन हुआ, जिससे श्रोतागण मुग्ध हो गए और इनका नाम संगीतज्ञों तथा संगीत कला प्रेमियों में प्रसिद्ध हो गया।

23 वर्ष की उम्र में अर्थात् मई सन् 1947 ई0 में करांची की एक संगीत निपुण महिला भानुमती से इनका विवाह हो गया। लेकिन उनका देहान्त हो गया और कुमार को दूसरा विवाह करना पड़ा। दुर्भाग्यवश कुछ समय बाद कुमार गंधर्व तपेदिक जैसी बीमारी के शिकार हो गए। वायु परिवर्तन के लिए वे परिवार के साथ मालवा की एक सुन्दर पहाड़ी देवास पर निवास करने लगे। पत्नी ने छाया की तरह साथ रहकर इनकी सेवा की और परिणाम स्वरूप कुमार स्वस्थ हो गए। तब से देवास को ही उन्होंने अपना निवास बना लिया।

<u>संगीत सेवा</u> – पं0 रविशंकर ने वाद्य संगीत के क्षेत्र में जो कार्य किया, वही कार्य कुमारजी ने कण्ठ संगीत में किया है। संगीत के अनके रूपों में उनका योगदान रहा है, वह यथार्थतः आज संगीत जगत् के लिए विरासत के रूप में है। जिस समय कुमार गन्धर्व ने भारतीय संगीत जगत् में पैर रखा, उस समय ख्याल गायकी का लचीलापन लुप्त हो चुका था। तराना, टप्पा, भजन, संगीत के यह रूप अजीब जड़ता के शिकार हो गये थे। कुमार जी पूर्णनिष्ठा और स्वर–संवेदना से ऐकांकी ही इस स्थिति के साथ संघर्षरत हुए। कुमार गन्धर्व जी की क्षमता वातावरण उत्पादन में इस प्रकार विलक्षण है कि जब तक उनका गायन हो रहा है तब तक श्रोतागण उनकी स्वर माधुरी के तन्त्र मन्त्र में पूर्णतः लवलीन रहते हैं।

13 फरवरी 1985 को भोपाल स्थित भारत–भवन में मध्य–प्रदेश संस्कृति विभाग द्वारा प्रख्यात गायक कुमार गंधर्व को दिया जाने वाला, एक लाख रूपये का सर्वोच्च कालिदास सम्मान बहुत महत्वपूर्ण है।

कुमार गन्धर्व की पहली विशेषता तो यही है कि वे भारतीय संगीत के एक नई प्रवृति और नई प्रक्रिया के पहले गायक हैं। घराने की पारंपरिक गायकी का जो शताब्दियों पुराना दर्रा था, उसमें संगीत की परम्परा तो जीवित होती रहती थी, लेकिन गायक के निजी व्यक्तित्व और प्रतिभा का विसर्जन होता जाता था। कुमार गन्धर्व ने संगीत की परम्परा के कठिन अनुशासन में एक व्यक्ति की सम्भावना को स्थापित किया। हमारा शास्त्रीय संगीत जिस स्वरूप का है, उसमें 'परफार्म' करना उसे सिद्ध करना ही गायक की प्रतिभा की कसौटी होती है। पं0 भीमसेन जोशी, पं0 ओमकार नाथ ठाकुर, अमीर खां जैसे गायकों की निजी प्रतिभा परम्परा की इसी सिद्धि पर आधारित रही है। कुमार गन्धर्व इन अर्थों में साधक नहीं, अन्वेशक है। उनकी यह अन्वेशक प्रतिभा ही उन्हें भारतीय संगीत का कबीर बनाती है, तथा उन्हें दूसरे गायकों की तुलना में अधिक स्वतंत्र मुक्त और फक्कड़ साबित करती है।

कुमार गन्धर्व ने रागों, स्वरों और संयोजनों में ही उलट फेर नहीं किया है, उन्होंने संगीत के लिए नई अमर बंदिशें भी खोजी हैं। आदिनाथ, सूर, मीरा, कबीर के उन पदों को उन्होंने पुर्नजीवन दिया है जो कि न सिर्फ भुलाए जा चुके थे, सिर्फ रिसर्च की सामग्री बन कर रह गये थे। कुमार का महत्व ही यह है कि वे परम्परा और प्रयोग, दोनों के तनाव के बीच से अपना संगीत रचते रहे हैं। एक और चीज जो उन्हें महत्वपूर्ण और सबसे अकेला सिद्ध करती है वह है उनके संगीत की लोकोन्मुखता। यानि भरत के नाट्यशास्त्र से लेकर आज के अभिजन संस्कृति जगत में जिस दर्शक

या भावक को अधम कोटि का कुपात्र समझा जाता है, जिसके सामने कला की प्रस्तुति वर्जित थी, जिससे कुमार गंधर्व ने उसकी संवेदना को स्पर्श किया है– उसे अपना भावुक, सहृदय और श्रोता बनाया है। इसीलिए उनका गायन संगीतविदों और कला रसिकों के लिए ही नहीं साधारण मामूली संवेदना और बोध के लोगों के लिए भी है। शायद इसी अनुराग के कारण कुमार गन्धर्व ने कबीर तुलसी जैसे लोक–कवियों के पदों को चुना।

संगीत जगत् के योगदानों में हम सर्वप्रथम कुमार गंधर्व के ख्याल गायकी को ही लें। पुरानी खानदानी विलम्बित ख्याल गायकी में एक तरह की रीति, अनुशासन एवं क्रम को निजी गायकी से पूर्णतः ध्वस्त कर दिया। विलम्बित ख्याल की बंदिश के स्थान पर बोलों की आलापों से उनका ख्याल प्रारम्भ होता है और मध्य में बंदिश का प्रयोग होता है। उन्होंने पारस्परिक गायकी को त्याग कर नयी गायकी का श्रीगणेश किया। यथार्थ में वह अपने गायन में मध्यमलय का ही अधिकतर प्रयोग करते हैं। यही कारण है कि उनके संगीत में ऐसी शक्ति उत्पन्न हो जाती है कि उनका संगीत आरम्भ न होकर भी चलता रहता है। स्वरों के समुद्र में सीधे अवगाहन करने का सुखद अनुभव उनकी ख्याल गायकी में उपलब्ध है। उनके आलाप अंग लघु और द्रुत होते हैं। कुछ राग जैसे देसकार, भूप, मालकौंस में उन्होंने विवादी स्वरों का जानबूझ कर माधुर्य लाने के लिए प्रयोग किया है। उन्होंने मारवा, मुल्तानी, रामकली आदि रागों के गायन में कभी–कभी स्वरों के ध्वन्यात्मक मूल्यों के परिवर्तन कर डाली हैं। कुमार जी के कथनानुसार उन्हें दो प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। प्रथम तो स्वयं की जानलेवा बीमारी से और दूसरी स्वयं प्रस्थापित की हुई पारम्परिक गायकी से। अपनी सृजनशीलता और असाधारण प्रतिभा से उन्होंने संगीत में नये–नये आयाम प्रस्तुत किये हैं। उन्होंने एक ही स्वर और लय में भी अलग–अलग और नये रूपों को देखा और यहीं उनकी गायकी है।

उन्होंने शास्त्रीय संगीत में जो परिवर्तन किए हैं वह भारतीय संगीत के इतिहास में एक बेजोड़ घटना है। जिससे श्रोता एक ताजगी का अनुभव करते हैं। वह एक मात्र भारतीय संगीतज्ञ हैं, जिन्होंने स्वयं अपने रागों का संकलन प्रकाशित किया है। उनका इस प्रकार का एक स्वनिर्मित राग लगन गन्धार लाँग प्ले रिकार्ड के रूप में सुलभ है। यह राग शिवरंजनी के निकट है। इस राग के माध्यम से वे एक बिछुड़े हुए प्रेमी की भावनाओं को संगीत द्वारा प्रतिपादित कर सके हैं। सहेली तोड़ी सदृश राग की अवतारणा उन्होंने की, कोई अन्य इस प्रकार नहीं कर सकता था। इसके अतिरिक्त गाँधी मल्हार, जिसमें तीव्र गन्धार का प्रयोग गांधी जी के व्यक्तित्व की कोमल–करूण व्यन्जना को प्रस्तुत करता है। वे किसी भी राग के वादी और संवादी स्वरों से छुटकारा पा लेते हैं। स्वर वैचित्र के लिए सम पर जरा देर से आते है। मालवती राग में उन्होंने दो रचनायें निर्मित की हैं, एक विलम्बित और एक द्रुत क्रमशः "चल जा रे बदरा" और "मंगल दिन आज बना घर आये"। आपके गायन में संवेदना के अनेक स्तर हैं। भावात्मक रूप मर्मस्पर्शी है तो बौद्धिक स्तर पर विचलित भी करता है।

1947 से 1952 तक वे देवास में लम्बी बीमारी में लगभग बिस्तर पर ही थे। उसी दौरान उनका ध्यान आस पास के ग्रामवासियों के लोक–गीतों के स्वरों की ओर आकर्षित हुआ। कान में पड़ने वाले प्रत्येक लोक गीतों को वे ध्यान से सुनते, उसे संजोकर रखते और मन ही मन गुनगुनाते। यही अंकुर आगे चलकर विकसित हुआ और नये राग, नयी बंदिशों की प्रेरणायें मिली, जिससे भारतीय संगीत इतना समृद्ध हो गया। उन्होंने लोक प्रिय लोक धुनों को शास्त्रीय गरिमा के मध्य जो सम्बन्ध स्थापित किया वह उनकी कला का जीवंत उदाहरण है। लोक गीतों का उन्होंने महफिल

गायकी के एक प्रतिष्ठित अंग के रूप में मान्यता प्रदान कराने का बीड़ा बनाया। मालवी लोक धुनों का एक समूचा कार्यक्रम भी आपने तैयार किया। जो शास्त्रीय संगीत के इतिहास में एक नवीन वस्तु है। आपके गाये कबीर, मीरा आदि के स्वरों में शास्त्रीय रागों के साथ लोक संगीत का भी पुट मिलता है। उनके मतानुसार लोक धुनों ही राग संगीत का आधार है। दस बारह जो राग हैं वे उससे बने हैं। अपने गुरू प्रो0 वी0आर0 देवधर की शिक्षण–पद्धति के अतिरिक्त उन्होंने अन्य संगीतज्ञों की अलग–अलग विशिष्ताओं को ग्रहण किया। ध्वनि के प्रयोग के सम्बन्ध में वे अब्दुल करीम खां की पद्धति पर अधिकशितः निर्भर करते हैं। इसके अतिरिक्त पं0 ओंकार नाथ ठाकुर की ध्वनि को ऊँचे, नीचे और मन्द्र उपयोग के दौरान इच्छानुसार घटा बड़ा सकने का लचीलापन, शब्दों को इस तरह उच्चारित करना है कि व हमें सामान्य बोल–चाल की तात्कालिता का स्वाद देने लगे।

अच्छे स्वर में गाना एक बात है और उसे व्यक्त करना अलग। एक भजन है **'माया महा ठगिनि हम जानी** कबीर का। यह भजन जिसमें कुमार जी ने स्वर के माध्यम से वहीं भाव व्यक्त किये हैं। निरगुन की यथार्थ आत्मा अकेलेपन की सृष्टि करती है, जिसे कुमार जी के अतिरिक्त भला कौन व्यक्त करेगा। **'युगन–युगन हम योगी; 'हम यहुरी अकेला'** शायद अकेलेपन का अनुभव श्रोता को भी साथ–साथ करा डालते हैं। उनकी कला आध्यात्मिक है। भक्ति कालीन कवियों के विद्रोही पदों का चयन कर जिस करूणा और वैराग्य का स्पर्श उन्होंने अपने गायन द्वारा प्रदान किया, वह इस बात का पर्याप्त प्रमाण है कि कुमार जी सर्वाधिक जनोन्मुख गायक रहे। देखिएः

"हिरना समझ–बूझ वन चरना,
एक वन चरना, दूजे वन चरना,
तीजे वन पग नहीं धरना,
तेरे खाल का करेंगे बिछौना
तोए मार तेरी मास बिकावै"

उसी प्रकार **'नैय्या मोरी नीके–नीके चालन लागी रे, ''अपनी मढ़ी में आप ही डोले''** आदि उनके भजनों से वैराग्य हमारे अन्दर एक हलचल पैदा करता है। लिखा या छपा हुआ निर्जीव शब्द कितना अधिक जीवन्त, कितना सघन और पारदर्शी हो सकता है, अकेले कुमार जी की गायकी ने इसे प्रमाणित कर दिया है।

उनके सृजनात्मक कार्य हैं : गीत हेमंत, गीत–बसंत, मालवा की लोक–धुनें, तावें गीत रजनी, तुलसीः एक दर्शन, गौड़ मल्हार का प्रकार होरी दर्शन, तुकारामःएक दर्शन आदि अत्यधिक परिणाम में निर्मित और वह भी भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में, संगीत के इतिहास में अभी तक किसी अन्य को उपलब्ध नहीं हैं। विशेषता यह है कि उन्होंने स्वतः को किसी घराने से संयुक्त नहीं किया। घराना–परम्परा से उन्होंने विद्रोह किया है। उनके मतानुसार संगीत का अस्तित्व घरानों के कारण से नहीं है, बल्कि इसके कारण संगीत पीछे रह गया है। कलाकार होने के लिए घरानों से पृथक संगीतज्ञ को स्वयं सोचना होगा। जीवन में आनन्द वृद्धि कि लिए सभी ललित कलाओं का उपयोग है। संगीत उन सभी कलाओं में मनुष्य से अत्यधिक निकट है। संगीत जीवन में शांति और आनन्द के लिए है। इस दृष्टि से जो प्रयोग और परिवर्तन कुमार जी ने किए हैं, उन्हें घरानों द्वारा अनुशासन में बांध पाना संभव नहीं है। कुमार गन्धर्व केवल मधुर गायक की ही नहीं अपितु एक प्रखर कल्पनाशील कलाकार थे। नवीन रागों के निर्माण में इनके द्वारा निर्मित राग अहिमोहिनी, मालवती, सहेली, तोड़ी, निदियारी, भावमतभैरव, लग्नगांधार आदि विशेष उल्लेखनीय है। इनकी रचनाओं का संकलन इनके ग्रंथ **'अनूपराग विलास'** के नाम से प्रकाशित हुआ। लोक गीतों में शास्त्रीय संगीत का मधुर मिश्रण करके

कुमार ने परम्परा की लीक से हटकर एक नई शैली को जन्म दिया जो श्रोताओं को भाव विभोर करती थी।

मृत्यु – 12 जनवरी, 1992 को कुमार गन्धर्व जी का देहावसान हो गया।

2.3.8 किशोरी अमोणकर :–

जीवन परिचय – किशोरी अमोणकर का जन्म 10 अप्रैल 1931 को हुआ। उन्होंने बाल्यकाल से ही अपनी माता श्रीमती मोधूबाई, जो अल्लादिया खां की शिष्या थी से शिक्षा ली। बस फिर क्या था, घर में संगीत का वातावरण होने के कारण उनका संगीतशिक्षण तथा संगीत अभ्यास अच्छा चला। बाद में किशोरी जी ने श्री बालकृष्ण बुवा पर्वतकर और श्री मोहनराव पालेकर से भी गायन की शिक्षा ली। किशोरी अमोणकर ने गाने का बहुत रियाज किया। आवाज साधने की बात पर उन्होंने साक्षात्कार में एक स्थान पर कहा था कि 'मैं यह मानने के लिए तैयार नहीं हूँ कि किसी का गला कुछ ऐसा वैसा है, तो उसे गाना नहीं चाहिए।

वास्तव में माध्यम में ही सौन्दर्य है, माध्यम में ही अनुरणन है। वह अगर तुम्हारे गले में है तो गाना आ ही जाएगा। आपको तो बस स्वरसाधना करनी है वरना केसरबाई जी तो कभी गा ही नहीं सकती थी। केसरबाई तो तीसरे काले में गाती थी। वे मर्दों की आवाज में गाती थी। फिर भी केसर बाई क्या चीज थी, यह सब जानते हैं। यह जरूरी नहीं कि तुम्हारी आवाज में माधुर्य हो। अगर सही स्वर लगता है तो संगीतात्मकता है, वहाँ सब कुछ है। अतः हिन्दुस्तान में अलग 'वॉइस कल्चर' को कोई आवश्यकता नहीं है। वास्तव में म्यूजिक कल्चर करो। इसके साथ आवाज खुल जायेगी। सबसे कठिन संगीत कंठ संगीत है, वाद्य संगीत नहीं। कंठ से सीधा सम्पर्क उस शक्ति से होता है। सही स्वर लगाने के लिए किन–किन चीजों की जरूरत है, उसे गुरू से सीख लो।

संगीत अभ्यास के बारे में उनका कहना है कि सरगम रियाज है। वह सुनाने की चीज नहीं है। "सरगम" स्वरों को पहचानने के लिए है, गाने के लिए नहीं क्योंकि स्वरों में अक्षर नहीं है। स्वर और ताल समय–विभाजन है। अभ्यास के 'सा रे ग म प ध नि सा' एक सौ आठ बार पहले किया जाए, फिर एक हजार अस्सी बार फिर दस हजार आठ सौ बार। पहले 'सा' पर अधिकार किया जाए, यह मूल बात है। किशोरी अमोणकर बच्चों को शिक्षा देते समय पहले अलंकार सिखाती है। पांच हजार चालीस अलंकार हैं। इनका अभ्यास किया जाए। वे राग भो सिखाती हैं लेकिन उनका कहना है कि यदि मींड, खटका, मुरकी और गमक आदि पर अधिकार कर लिया जाय तो राग स्वतः ही आ जायेगी। श्रीमती किशोरी अमोणकर की मान्यता है कि घराने विशेष से चिपके रहना अथवा सुन्दर चीज लेने पर प्रतिबन्ध लगाना, संगीत के विकास और अपनी विशिष्ट चीजें बनाने में बाधक है।

प्रगतिशील विचारधारा की किशोरी अमोणकर सदैव सौन्दर्य की उपासक रहीं। स्वर और श्रुतियों डूब कर उन्हें मूर्त कर लेने को ही वे संगीत सच्ची उपासना मानती हैं। अन्य शैलियों से अच्छी चीजें ग्रहण कर लेने को दोष नहीं मानती। श्रीमती अमोणकर ने सभी घराने सुने हैं। सबकी अपनी–अपनी विशेषताएं हैं, किन्तु उन्हें जयपुर घराना विशेष पसन्द हैं। उनके कथनानुसार

बोल–तान करना तथा शब्दों को लय के साथ बिठाना हार पिरोने के समान होना चाहिए और दोहरी तान में भी सौंदर्य कायम रहना चाहिए।

<u>भारतीय संगीत को देन :–</u>

<u>कार्यक्रम</u> – किशोरी अमोणकर ने अपने जीवन में कार्यक्रम देने की शुरूआत सन् 1957 से की। उनका प्रथम कार्यक्रम अमृतसर शहर में हुआ जो काफी सफल रहा। सन् 1952 से आप आकाशवाणी पर गा रही है। कोल्हापुर, पूना और बम्बई आदि शहरों में आपके गायन का स्वागत हुआ है। इसके अतिरिक्त आप देश के विभिन्न संगीत सम्मेलनों में भी अपना गायन प्रस्तुत करती रही हैं।

संगीत चिन्तन – किशोरी अमोणकर की दृष्टि में संगीत की साधना परम शक्तिमान की आराधना है। उनके शब्दों में – *संगीत अन्तर की भाषा है। उसे प्रकट करने का माध्यम भी उतना ही सक्षम, सबल होना चाहिए और वह है भी। इसके लिए साधना करनी पड़ेगी, क्योंकि भीतर देखने के लिए साधना के सिवाय और कोई रास्ता नहीं है।* सौन्दर्य की उपासिका किशोरी अमोणकर सर्वथा इस खोज में रहती है कि स्वर उनके सामने मूर्त हों। इसी दृष्टि से वह अपनी साधना को आध्यात्मिक स्तर पर ध्यानरथ अवस्था तक ले जाने के पक्ष में हैं। श्रीमती अमोणकर की मान्यता है कि एक स्वर में सारा संगीत समाया हुआ है। उनके शब्दों में *"स्वरों के माध्यम से आनन्द की अनुभूति होती है। हमें आनन्द प्राप्ति की ओर अग्रसर होना है। हमें उसका अनुभव पाना है। जब हमें ऐसी अनुभूति होगी तभी हम सच्चे अर्थ में शास्त्रीय संगीतज्ञ कहलायेंगे।"*

किशोरी अमोणकर की मान्यता है कि *"यदि संगीत सीखना है तो स्वर और लय का अंदाज आत्मसात् करना होगा। साथ ही साथ यह भी समझना होगा कि लय में स्वर कहाँ रहता है और स्वर में लय कहाँ विद्यमान है। स्वर संभालकर गाना ही ठीक है। इसी से रस निष्पत्ति होती है।"* किशोरी अमोणकर का राग के विषय में कहना है कि प्रत्येक राग की एक चौखट होती है किन्तु उसके साथ ही मुझे यह भी पता चला कि राग का अपना भाव है, अपना रस है। मै उसी के आधार पर इस खोज में लगी हूँ कि स्वरों के रस तथा भाव क्या होते हैं? असल में लोग स्वरों के बारे में सोचते ही नहीं हैं। मैं भी अब तक पूरी तरह समझ नहीं पाई हूँ किन्तु इसे मैं प्रत्यक्ष अनुभव करना चाहती हूँ। रास्ता दुर्गम है फिर भी मैं उस पर अडिग हूँ क्योंकि मैं जानती हूँ कि मेरा रास्ता सही है। मैनें पहले भी कहा है कि गुरू तो केवल रास्ता दिखाता है, चलना खुद को पड़ता है, यानी यह स्वानुभव की चीज है। गायन के अलावा संगीत शास्त्र का अध्ययन तथा मनन करना भी आपका ध्येय है।

प्राचीन संगीतशास्त्र का अध्ययन भी आप करती हैं। इन ग्रन्थों के पढ़ने से ही उनकी यह मान्यता प्रबल हुई है कि हमारा संगीत ध्यान स्तर तक जाना चाहिए। जैसे कला में सौन्दर्य तत्व होता है, उसी प्रकार नीति तत्व भी होता है। किसी भी डॉक्टर को सभी प्रकार की दवाइयों के प्रयोग का ज्ञान तो होता है लेकिन उसे यह अधिकार नहीं होता कि मरीज की जान ले ले। प्रत्येक क्षेत्र का अपना नीतितत्व है। संगीत का भी एक नीतितत्व था जिसे ऋषि मुनियों ने देखा था। वह आज हमारे पास है ही नहीं। वह यह था कि स्वरों का असर अगर हृदय पर होता है तो वह हर जगह हो सकता है और होता रहेगा। यह बात तर्कसंगत है और इसे पुराने लोगों ने देखा है तथा लिखकर रखा है। इसी दृष्टि से स्वरों की ओर देखना होगा।

<u>गायन शैली</u> – किशोरी अमोणकर का स्वरलगाव भावपूर्ण तथा वजनदार है। आलाप की सुन्दर प्रस्तुति करना तथा उसे बोलतान के अनुकूल बनाना आपकी गायकी की विशेषता है। शास्त्रीय गायन के अलावा आप मराठी सुगम संगीत, हिन्दी फिल्म संगीत तथा मीरबाई के भजन भी बड़ी ही कुशलता पूर्वक प्रस्तुत करती हैं।

अभ्यास प्रश्न

क. लघु उत्तरीय प्रश्न :–

प्र01 शारंगदेव का जन्म कब हुआ था?
प्र02 पं0 शारंगदेव के प्रसिद्ध ग्रंथ का नाम क्या है?
प्र03 संगीत रत्नाकर ग्रंथ किस शताब्दी में लिखा गया?
प्र04 पं0 शारंगदेव के शुद्ध एवं विकृत स्वरों की संख्या कितनी थी?
प्र05 संगीत रत्नाकर ग्रंथ के कितने अध्याय हैं?
प्र06 बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर का जन्म कब हुआ?
प्र07 बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर के पिता का क्या नाम था?
प्र08 बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर गायकी के किन अंगों के कलावंत थे?
प्र09 बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर ने बम्बई में किस समाज की स्थापना की और कौन–सा मासिक पत्र चलाया?
प्र010 बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर को किस पदवी से जाना गया?
प्र011 बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर की मृत्यु कब हुई?
प्र012 पं0 जसराज का जन्म कब हुआ?
प्र013 पं0 जसराज के पिता का क्या नाम था?
प्र014 पं0 जसराज ने गायन की शिक्षा किनसे ली?
प्र015 पं0 जसराज का विवाह कब और किससे हुआ?
प्र016 पं0 मल्लिकार्जुन का जन्म कब और कहां पर हुआ था ?
प्र017 पं0 मल्लिकार्जुन किस घराने के प्रवर्तक थे ?
प्र018 पं0 मल्लिकार्जुन जी के गुरु जी का क्या नाम था ?
प्र019 पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर ने गणेशोत्सवों में कब से गाना प्रारम्भ किया था ?
प्र020 पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर को कर्नाटक संगीत नाटक अकादमी का पुरस्कार कब मिला था ?
प्र021 पं0 मल्लिकार्जुन मंसूर को राष्ट्रीय संगीत नाटक अकादमी का पुरस्कार कब मिला था ?
प्र022 पं0 मल्लिकार्जुन जी को केन्द्रीय संगीत नाटक अकादमी की फेलोशिप कब मिली थी ?
प्र023 पं0 मल्लिकार्जुन की मृत्यु कब हुई ?
प्र024 सुरश्री केसरबाई केरकर का जन्म कब और कहॉ हुआ ?
प्र025 सुरश्री केसरबाई केरकर ने संगीत की शिक्षा किनसे प्राप्त की ?
प्र026 सुरश्री केसरबाई केरकर राज्य गायिका कब बनी ?
प्र027 केसरबाई केरकर को 'पद्म भूषण' कब मिला?
प्र028 केसरबाई केरकर को संगीत नाटक अकादमी का पुरस्कार कब मिला?
प्र029 केसरबाई केरकर को सुरसिंगार संसद् की 'शारंगदेव–फैलोशिप' कब मिली ?
प्र030 केसरबाई केरकर को सुरश्री की उपाधि कब और किसने दी ?

प्र031 सुरश्री केसरबाई केरकर की मृत्यु कब हुई ?
प्र032 कुमार गन्धर्व का जन्म कब हुआ?
प्र033 कुमार गन्धर्व का मूल नाम क्या था?
प्र034 कुमार गन्धर्व को कब और किसके द्वारा कुमार गन्धर्व की उपाधि दी गई?
प्र035 कुमार गन्धर्व का सर्वप्रथम गायन–जल्सा कहाँ और किस उम्र में हुआ?
प्र036 कुमार गन्धर्व के प्रसिद्ध ग्रंथ का नाम क्या है?
प्र037 कुमार गन्धर्व की मृत्यु कब हुई?
प्र038 आचार्य बृहस्पति का जन्म कब और कहाँ हुआ?
प्र039 आचार्य बृहस्पति जी के द्वारा लिखित कौन सा नाटक आकाशवाणी से समय–समय पर प्रसारित होता रहा?
प्र040 आचार्य बृहस्पति जी ने अलंकार–शास्त्र की शिक्षा किन से ली थी?
प्र041 आचार्य बृहस्पति जी ने किन–किन वाद्यों का निर्माण किया?
प्र042 आचार्य बृहस्पति जी की मृत्यु कब हुई?
प्र043 किशोरी अमोणकर का जन्म कब हुआ?
प्र044 किशोरी अमोणकर जी ने गायन की शिक्षा किन किन से ली?
प्र045 किशोरी अमोणकर ने अपने जीवन में कार्यक्रम देने की शुरूआत किस सन् से की?
प्र046 किशोरी अमोणकर का प्रथम कार्यक्रम कहाँ हुआ?
प्र047 किशोरी अमोणकर ने शास्त्रीय संगीत के अलावा किस–किस संगीत में अपनी प्रस्तुति दी?

2.4 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है कि संगीत के महत्व को संगीतज्ञों एवं श्रोताओं दोनों ने स्वीकार किया है, तभी दोनों इसका रसास्वाद करते हैं। अनेक महान संगीत साधक हुए जिनकी साधना ने अनेक सोपान पार किए जिनका योगदान अमूल्य है। संगीत कला संगीतज्ञों के व्यक्तित्व को महानता प्रदान करती है। हमारे देश में अनेक प्रसिद्ध एवं विद्वान संगीत विभूतियाँ हुई हैं जिनके अमर योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता है। जब संगीतज्ञ का व्यक्तित्व उसके कलात्मक प्रतिभा के फलस्वरूप प्रतिष्ठित हो जाता है तो वह किसी भी वातावरण में अपने प्रोज्जवल व्यक्तित्व द्वारा संगीत प्रदर्शन को सर्वोत्कृष्ट बनाने में सक्षम हो जाता है। इस इकाई में आप जान चुके हैं संगीतज्ञ कला में पूर्ण आनन्द का अनुभव करता है। संगीत साधना के लिए समय, कर्ता, स्थान, अभ्यास, उचित ासंगीतिक शिक्षा आत्मविश्वास आदि गुणों का होना आवश्यक है तभी संगीतज्ञ अपनी कला द्वारा इच्छा पूर्ति कर सकेगा।

2.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क. लघु उत्तरीय प्रश्न :—

उ01. पं0 शारंगदेव का जन्म 1210 ई0 में हुआ।

उ02. पं0 शारंगदेव के प्रसिद्ध ग्रंथ का नाम है **संगीतरत्नाकर।**

उ03. संगीत रत्नाकर ग्रंथ 13वीं शताब्दी में लिखा गया।

उ04. पं0 शारंगदेव के शुद्ध स्वर सात, विकृत स्वर ग्यारह थे।

उ05. संगीत रत्नाकर ग्रंथ के सात अध्याय हैं — 1. स्वराध्याय 2. रागविवेकाध्याय 3. प्रकीर्णाध्याय 4. तालाध्याय 5. वाद्याध्याय 6. रागाध्याय 7. नर्तनाध्याय

उ06. बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर का जन्म सन् 1849 ई0 में कोल्हापुर के पास चंदूर नामक ग्राम में हुआ।

उ07. बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर के पिता का नाम रामचन्द्र बुआ था और ये स्वयं एक अच्छे गायक थे।

उ08. ध्रुपद—धमार ख्याल और टप्पा इन चारों अंगों में बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर कलावंत थे।

उ09. इन्होंने बम्बई में 'गायन—समाज' की स्थापना की और 'संगीत—दर्पण' नामक एक मासिक पत्र भी चलाया।

उ010. बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर को इचलकरंजी नामक रियासत में स्थायी रूप से राज—गायक की पदवी स्वीकार की।

उ011. सन् 1926 ई0 में इचलकरंजी में ही बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर स्वर्गवासी हो गए।

उ012. 20 जनवरी 1930 ई0 को हिसार में हुआ।

उ013. पं0 जसराज के पिता का नाम 'मोतीराम' था।

उ014. पं0 जसराज ने अपने बड़े भ्राता पं0 मणिराम जी से गायन शिक्षा प्राप्त की।

उ015. पं0 जसराज का विवाह 1962 में श्री शांताराम की पुत्री 'मधुरा' से हुआ।

उ016. पं0 मल्लिकार्जुन का जन्म सन् 31 दिसम्बर, 1911 को कर्नाटक के धारवाड़ जिले के मंसूर गॉव में हुआ था।

उ017. पं0 मल्लिकार्जुन अतरौली–जयपुर घराने के प्रवर्तक थे।
उ018. पं0 मल्लिकार्जुन जी के गुरु जी का नाम 'पं0 नीलकंठ बुआ' था।
उ019. सन् 1933–34 में मंसूर मुंबई में गाना प्रारम्भ किया।
उ020. सन् 1961 और 1964
उ021. सन् 1972 – 1982
उ022. सन् 1987 में
उ023. 16 सितम्बर 1992 में इनका निधन हो गया।
उ024. सुरश्री केसरबाई केरकर का जन्म 13 जुलाई, 1982 को गोवा के केर नामक गॉव में हुआ।
उ025. सुरश्री केसरबाई केरकर ने खॉ साहब अल्लादिया खॉ साहब से ही संगीत शिक्षा प्राप्त की।
उ026. सुरश्री केसरबाई केरकर 1969 में महाराष्ट्र राज्य की राज्य गायिका बनी।
उ027. 1969 में ही सुरश्री केसरबाई केरकर को भारत सरकार की ओर से 'पद्म भूषण' अलंकरण से विभूषित किया गया।
उ028. सुरश्री केसरबाई केरकर को 1953 में संगीत नाटक अकादमी के पुरस्कार की प्राप्ति हुई।
उ029. 1975 में केसरबाई केरकर को सुरसिंगार संसद् की 'शारंगदेव–फैलोशिप मिली।
उ030. अखिल भारतीय संगीत परिषद कोलकाता ने 1938 में केसरबाई को 'सुरश्री' की उपाधि प्रदान की।
उ031. 16 सितम्बर, 1977 को सुरश्री केसरबाई केरकर जी का निधन हो गया।
उ032. कुमार गन्धर्व का जन्म 8 अप्रैल, 1924 में हुआ।
उ033. कुमार गन्धर्व का मूल नाम **'शिवपुत्र'** था।
उ034. 7 वर्ष की आयु में एक मठ के गुरू के द्वारा इन्हें कुमार गन्धर्व की उपाधि दी गई।
उ035. कुमार गन्धर्व का सर्वप्रथम गायन–जल्सा 9 वर्ष की उम्र में **'बेलगांव'** में हुआ।
उ036. कुमार गन्धर्व के प्रसिद्ध ग्रंथ का नाम है **'अनूपरागविलास'**।
उ037. कुमार गन्धर्व की मृत्यु 12 जनवरी, 1992 को हुई।
उ038. आचार्य बृहस्पति का जन्म उत्तर प्रदेश के रामपुर जिले में 2 जनवरी 1918 को हुआ।
उ039. आचार्य जी के द्वारा लिखित नाटक 'मेघ का कवि' आकाशवाणी से समय–समय पर प्रसारित होता रहा।
उ040. अलंकार–शास्त्र की शिक्षा आचार्य जी ने पं0 परमेश्वरानंद शास्त्री से ली थी।
उ041. 1957 में आचार्य जी ने 'बृहस्पतिवीणा', 'बृहस्पतिकिन्नरी' और 'श्रुतिदर्पण' जैसे वाद्यों का निर्माण किया।
उ042. 31 जुलाई, 1979 को आचार्यजी ने अपनी नश्वर देह त्याग दी।
उ043. किशोरी अमोणकर का जन्म 10 अप्रैल 1931 को हुआ।
उ044. किशोरी अमोणकर जी ने सर्वप्रथम अपनी माता श्रीमती मोधूबाई कुर्डीकर तथा बाद में बालकृष्ण बुवा पर्वतकर और श्री मोहनराव पालेकर से गायन की शिक्षा प्राप्त की।
उ045. किशोरी अमोणकर ने अपने जीवन में कार्यक्रम देने की शुरूआत सन् 1957 से की।
उ046. किशोरी अमोणकर का प्रथम कार्यक्रम अमृतसर शहर में हुआ।
उ047. किशोरी अमोणकर ने मराठी सुगम संगीत, हिन्दी फिल्म संगीत तथा मीराबाई के भजन भी प्रस्तुत किए हैं।

2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. माथुर, श्री रामलाल (1997), *भारतीय संगीत और संगीतज्ञ*, बोहरा प्रकाशन, जयपुर।
2. बहोरे, श्री रवीन्द्र नाथ (2005), *भारतीय संगीत के प्रमुख स्तम्भ*, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
3. जौहरी, श्रीमती सीमा (2003), *संगीतायन*, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
4. गर्ग, डॉ0 लक्ष्मीनारायण (1984), *हमारे संगीत रत्न*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
5. साभार गूगल।
6. वसंत, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
7. टाक, तेजसिंह, संगीत जिज्ञासा व समाधान।
8. शर्मा, डा0 स्वतंत्र, पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति एवं भारतीय संगीत।
9. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, राग परिचय भाग 2।
10. चक्रवर्ती, डॉ0 कविता, भारतीय संगीत को महान संगीतज्ञों की देन।

2.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पं0 कुमार गन्धर्व व पं0 जसराज जी के जीवन पर प्रकाश डालिए।
2. शारंगदेव व आचार्य बृहस्पति के सांगीतिक योगदान पर चर्चा कीजिए।

इकाई 3 – संगीत के प्रसिद्ध ग्रन्थों (संगीत रत्नाकर, चतुर्दण्डीप्रकाशिका, नारदीय शिक्षा, संगीत मकरंद, संगीत चिन्तामणि, संगीतांजलि एवं संगीत–पारिजात) का सामान्य अध्ययन

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 विभिन्न कालों के सांगीतिक ग्रंथ
3.4 संगीत रत्नाकर ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
3.5 चतुर्दण्डीप्रकाशिका ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
3.6 नारदीय शिक्षा ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
3.7 संगीत मकरंद ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
3.8 संगीत चिन्तामणि ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
3.9 संगीतांजलि ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
3.10 संगीत पारिजात ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
3.11 सारांश
3.12 शब्दावली
3.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.15 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.16 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, चतुर्थ सेमेस्टर (एम0पी0ए0एम0वी0–606) पाठ्यक्रम की तीसरी इकाई है। इससे पहले की इकाई के अध्ययन के बाद आप भारतीय संगीत के लिए समर्पित विद्वान संगीतज्ञों के जीवन चरिचय तथा संगीत के प्रति उनके योगदान जान चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में संगीत के ग्रन्थों के बारे में बताया गया है। वैदिक काल के अन्तिम काल खण्ड तक संगीत से सम्बन्धित कोई स्वतंत्र ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। वेदों में ऋग्वेद में गीत, वाद्य और नृत्य के विषय की चर्चा मिलती है। सामवेद में सबसे अधिक गायन से सम्बन्धित चर्चा की गई है। इसके पश्चात संगीत से सम्बन्धित अनेक ग्रन्थों की रचना हुई। प्राचीन एवं मध्यकालीन ग्रंथकारों ने भारतीय संगीत पद्धति के विविध पक्षों को अपने विशिष्ट सांगीतिक ज्ञान से किस प्रकार उजागर किया है यह भी इस इकाई में वर्णित है। मध्यकाल के प्रमुख ग्रंथकारों जैसे नारद, पं0 शारंगदेव, पं0 अहोबल, पं0 श्रीनिवास, पं0 व्यंकटमुखी, पं0 रामामात्य आदि ने विशेष रुप से संगीत के विविध पक्षों को अपने ग्रन्थों में स्थान देकर यह सिद्ध किया है कि प्राचीन एवं मध्यकाल में भी संगीत के विविध पक्ष विकसित अवस्था में थे। इस इकाई में नारदीय शिक्षा, संगीत–मकरंद, चतुर्दण्डीप्रकाशिका, संगीत–रत्नाकर, संगीत–पारिजात, संगीतांजलि, संगीत–चिन्तामणि ग्रन्थों का अध्ययन प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप प्राचीन, मध्य एवं आधुनिक कालीन ग्रंथों के महत्व को समझ सकेंगे तथा इन ग्रंथों में उपलब्ध सामग्री का समयक विश्लेषण कर सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- बता सकेंगे कि प्राचीन एवं मध्यकालीन समय में संगीत का क्या अस्तित्व था?
- बता सकेंगे कि वर्तमान में स्वर, राग, जाति, ताल इत्यादि मूल सांगीतिक तत्वों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि क्या है?
- समझा सकेंगे कि संगीत के अन्तर्गत स्वर, राग, गायन शैलियों का स्वरूप किस प्रकार शनै–शनै विकसित हुआ है।
- गायन, वादन एवं नृत्य के विषय में प्राचीन संगीत मनीषियों के ज्ञान एवं विचारों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- समझा सकेंगे कि ग्रन्थों के अन्तर्गत संस्कृत साहित्य में संगीत के विकास की कड़ियाँ स्पष्ट रूप से पाई जाती हैं।

3.3 विभिन्न कालों के सांगीतिक ग्रंथ

भारतीय संगीत की उत्पत्ति किस समय हुई यह बतलाना कठिन है। संगीत की उत्पत्ति के विषय में अनेक किवदन्तियाँ सुनने में आती हैं। अनेक प्रकार के मत भी सामने आते हैं जिनमें कुछ ने ब्रह्मा जी तथा कुछ ने शिव, सरस्वती को संगीत का अविष्कारक माना है। संगीत अनादिकाल से चला आ रहा है। जिसका उद्देश्य आत्म उत्थान एवं ईश्वर प्राप्ति माना गया है। संगीत सदा संस्कृति का संगी रहा है। संगीत के इतिहास को संस्कृति के इतिहास से अलग नहीं किया जा सकता है। भरत, नारद, मतंग, शारंगदेव, पं0 व्यंकटमुखी, पं0 अहोबल तथा रामामात्य आदि की कृतियाँ संगीत की दृष्टि से महत्वपूर्ण रही हैं। भरत कृत 'नाट्यशास्त्र' संगीत एवं नाट्य का विश्वकोश है। स्वर के सूक्ष्मतम रूप श्रुति की व्याख्या सर्वप्रथम इसी ग्रन्थ में पायी जाती है। इसके पश्चात मतंग कृत 'बृहद्देशी' में विभिन्न प्रदेशों में प्रचलित संगीत शैलियों पर प्रकाश डाला गया है तथा वर्तमान संगीत में महत्वपूर्ण 'राग' नामक वस्तु का विवेचन भी सर्वप्रथम इसी ग्रंथ में पाया गया है। इसके पश्चात शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर ग्रंथ उत्तरी एवं दक्षिणी संगीत दोनों के लिए महत्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है। गायन, वादन, नृत्य इन तीनों कलाओं का पूर्ण विवरण इस ग्रंथ में मिलता है।

मध्यकाल तक सभ्यता के सभी युगों में संगीत की उन्नत अवस्था का परिचय प्राप्त होता है जिसमें गायन, वादन, नृत्य और नाट्य को आवश्यकतानुसार महत्व एवं प्रश्रय प्राप्त था। अतः विभिन्न कालों में लिखित ग्रन्थों में जो संगीत के सिद्धान्त और नियम बताए गए हैं वे अब भी मान्य हैं।

3.4 संगीत रत्नाकर ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

संगीत—रत्नाकर भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्राचीन ग्राम—मूर्च्छना प्रणाली से सम्बन्धित संगीत विद्या का प्रतिपादक, अन्तिम आधार ग्रन्थ है। इसके रचयिता आचार्य शारंगदेव हैं। इसका रचनाकाल सन् 1210 से 1247 ई0 के मध्य का माना जाता है। शारंगदेव के पूर्वज कश्मीर के मूल निवासी थे जो कालान्तर में आव्रजन द्वारा जैत्रपद (दक्षिण भारत) में बस गए। जैत्रपद के राजा सिंधण के संरक्षण में इन्हें संगीत—विद्या को पुष्पित—पल्लवित करने का अनुकूल वातावरण प्राप्त हुआ। संगीत—रत्नाकर' में निम्नलिखित सात अध्याय हैंः—

1. स्वराध्याय, 2. रागविवेकाध्याय, 3. प्रकीर्णाध्याय, 4. प्रबन्धाध्याय, 5. तालाध्याय, 6. वाद्याध्याय और 7. नृत्याध्याय।

संगीत—रत्नाकर में वर्णित सातों अध्यायों का विवरण निम्नवत् हैः—

<u>**1 स्वराध्याय**</u> — स्वराध्याय को आठ प्रकरणों में विभक्त किया गया है। पदार्थ संग्रह नामक खण्ड के प्रारम्भिक 14 श्लोकों में लेखक ने अपना एवं अपने आश्रयदाता का परिचय दिया है। इसके बाद संगीत की परिभाषा 'गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते' देकर संगीत के दो भेद 'मार्गी' और 'देशी' कहे गए हैं।

<u>**श्रुति**</u> — श्रुतियाँ बाईस होती हैं। हमारे शरीर में बाईस—बाईस नाड़ियाँ जो हृदय, कण्ठ और मूर्धा में होती हैं, उनसे वायु टकराती हुई बाईस श्रुतियों को उत्पन्न करती हैं। सारणा—चतुष्टयी द्वारा श्रुतियों

को नवीन विधि से संगीत–रत्नाकर में समझाया गया है। **स्वर**– षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत, निशाद आदि सात स्वर हैं जिनको व्यवहार में सा, रे, ग, म, प, ध, नि संज्ञाएँ दी गई हैं। स्वर की परिभाषा देते हुए शारंगदेव का कथन है कि–'श्रुत्यनन्तर भावी, स्निग्ध, श्रोताओं के चित का स्वयं रंजन करने वाला नाद, स्वर कहलाता है।' चौथी, सातवीं, नौवीं, तेरहवीं, सत्रहवीं, बीसवीं, और बाइसवीं श्रुतियों पर सा, रे, ग, म, प, ध, नि शुद्ध स्वर स्थापित (स्थित) हैं। बारह विकृत स्वरों का वर्णन किया गया है

ग्राम–मूर्च्छना – ग्राम की परिभाषा देते हुए कहा गया है कि–

'ग्रामः स्वरसमूहः स्यानमूर्च्छनोदेः समाश्रयः।'

अर्थात् स्वरों का वह समूह जो मूर्च्छनाओं का आश्रय है ग्राम कहलाता है। पृथ्वी पर दो ही ग्राम – 'षड्ज–ग्राम' व 'मध्यम–ग्राम' कहे गए हैं। शारंगदेव ने संगीत–रत्नाकर में नारद के मत से गांधार–ग्राम का भी वर्णन किया है। तीनों ग्रामों की 21 मूर्च्छनाएँ हैं। उनके नाम उत्तरमन्द्रा, रजनी आदि दिए गए हैं।

2. राग विवेकाध्याय – इस अध्याय में दो सौ चौसठ रागों का वर्णन किया गया है। सर्वप्रथम पाँच प्रकार के ग्राम–राग हैं जो गीतियों पर आधारित हैं। इन गीतियों के नाम इस प्रकार हैंः– शुद्धा, भिन्ना, गौड़ी, बेसरा और साधारणी। ग्राम–राग और देशी–राग में ग्राम–राग के अन्तर्गत 30 ग्राम–राग, 8 उपराग, 20 राग, 96 भाषा, 20 विभाषा और 4 अन्तरभाषा हैं। भाषा, विभाषा और अन्तरंभाषा इनको पन्द्रह जनक भाषाओं में वर्गीकृत किया गया है। दूसरे प्रकरण में रागाम्, भाषाम्, क्रियाम् और उपांग कहे गए हैं।

3. प्रकीर्णाध्याय – इस अध्याय में उन पारिभाषिक शब्दों को रखा गया है जो किसी अन्य अध्याय में नहीं वर्णित किए जा सकते थे। जैसे गायक के गुण–दोष, शब्द के गुण–दोष, गमक के पन्द्रह प्रकार, स्थाय भेद, आलप्ति, वृन्दगान आदि ग्यारह पारिभाषिक शब्दों को इस अध्याय में स्थान दिया गया है। संगीत–रत्नाकर में आवाज के गुण–दोष को आयुर्वेद के धातुओं से समझाया गया है कि वात, पित्त, कफ़ और सन्निपात इन चार धातुओं के सन्तुलन से शरीर स्वस्थ रहता है।

4. प्रबन्धाध्याय – संगीत–रत्नाकर के इस अध्याय में प्रबन्ध का वर्णन है। प्रबन्ध यानी बन्दिश, जिसे वस्तु या रुपक भी कहा गया है। किसी भी बन्दिश के गेय भाग को धातु और पद (गीत) भाग को अंग कहा गया है। छह अंगों से लेकर दो अंगों वाले प्रबन्ध की पाँच जातियाँ – मेदिनी, आनन्दिनी, दीपनी, भावनी और तारावली दी गई हैं। दो धातु वाले, तीन धातु वाले या चार धातु वाले प्रबन्धों के तीन भेद दिए गए हैं। शारंगदेव ने प्रबन्धों के तीन वर्ग बताए हैं – सूड, आलिक्रम, विप्रकीर्ण।।

आलिक्रम के प्रबन्ध में चौबीस प्रकार कहे गए हैं, साथ ही सूड के आठ प्रकारों को मिलाकर बत्तीस संख्या भी दी गई है।

5. तालाध्याय – इस अध्याय के मार्गताल और देशीताल ये दो भाग किए गए हैं। मार्गताल पाँच कहे गए हैं– 1. चच्चत्पुट, 2. चाचपुट 3. षटपितापुत्रक, (इसके दो और भी नाम हैं– पंचपाणि और उत्तर),

4. उद्‌धट् और 5.सम्पक्वेश्टाक। इनके एककल, द्विकल और चतुश्कल का सम्बन्ध क्रमशः चित्र, वार्तिक और दक्षिण मार्ग से जोड़ा गया है। चौदह गीतकों का विस्तृत वर्णन दिया गया है।

6. वाद्याध्याय – वाद्याध्याय के अन्तर्गत वाद्य के चार भेद बताए गए हैं – 1. तत वाद्य, 2. सुषिर वाद्य, 3. अवनद्य वाद्य और 4. घनवाद्य।

7. नृत्याध्याय – पण्डित शारंगदेव ने नृत्य का विशद विवेचन किया है। नृत्याध्याय के अन्तर्गत निम्न बिन्दुओं पर विचार किया गया है – नाट्य की उत्पत्ति, अभिनय के भेद, नृत्य एवं नृत का लक्षण, आडिक अभिनय के भेदों में : सिर के चौदह, हाथ के सरसठ, वक्ष के पाँच, पार्श्व के पाँच, कटि के पाँच एवं चरण के तेरह भेदों का उल्लेख किया गया है। इसी प्रकार अन्य सभी अंगों के भी अलग–अलग मुद्राओं का विस्तृत वर्णन किया है। जैसे ग्रीवा के नौ, बाहु के बावन, दृष्टि के छत्तीस भेद आदि।

हमारा विषय नृत्य नहीं है। यहाँ मूल ग्रन्थ संगीत रत्नाकर के नृत्याध्याय की विषय–सूची के आधार पर परिचय मात्र दिया गया है। आचार्य शारंगदेव ने संगीत–रत्नाकर नामक विशाल ग्रन्थ इतने विश्वास से लिखा है कि उसमें कहीं भी सन्देह नहीं है। इसलिए शारंगदेव अपने आपको निःशंक कहते हैं। उन्होंने संगीत सम्बन्धी ज्ञान ऐसा प्रस्तुत किया कि यह ग्रन्थ परवर्ती ग्रन्थकारों का आधार ग्रन्थ बन गया। आज भी संगीत सम्बन्धी ग्रन्थ बिना संगीत–रत्नाकर की सहायता के लिखा ही नहीं जा सकता।

3.5 चतुर्दण्डीप्रकाशिका ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

कर्नाटक संगीत का यह सर्वोत्तम ग्रन्थ माना जाता है। इसकी रचना सन् 1620 ई0 में हुई थी। इसके रचनाकार पं0 व्यंकटमुखी है। यह ग्रन्थ अपने रचनाकाल से ही संगीत जगत में छा गया था जिससे इसकी महत्ता स्वतः सिद्ध है। 72 मेलों और विकृत स्वरों की अधिकतम संख्या की स्पष्ट अवधारणा के कारण चतुर्दण्डीप्रकाशिका विद्वानों के मध्य प्रारम्भ से ही सम्मान पाता रहा है। पं0 भातखण्डे जी भी चतुर्दण्डीप्रकाशिका से बहुत प्रभावित थे। जिस प्रकार इस ग्रन्थ के माध्यम से दक्षिणी संगीत व्यवस्थित हुआ है उसी प्रकार पं0 भातखण्डे जी उत्तरी–संगीत भी व्यवस्थित करना चाहते थे। भातखण्डे जी ने थाट–राग वर्गीकरण, सप्तक में सात शुद्ध–स्वरों और पाँच विकृत–स्वरों की अवधारणा व्यंकटमुखी से ही प्राप्त की है।

जिस समय इस ग्रन्थ की रचना हुई उस समय संगीत के मुख्य चार आधार माने जाते थे जिन्हें दण्ड कहा जाता था। इस ग्रन्थ में उन चार दण्डों पर विधिवत प्रकाश डाला गया है, इसीलिए पं0 व्यंकटमुखी ने इसका नाम चतुर्दण्डी रखा। वे चार दण्ड थे – आलाप, ठाय (स्थाय), गीत व प्रबन्ध। गोपाल नायक के एक ध्रुपद में कहा गया है – ''चारों दंड बाँध लाए'' अर्थात् गोपाल नायक को इन चारों दण्डों पर पूर्ण अधिकार था।

इस ग्रन्थ में दस अध्याय या प्रकरण हैं जो इस प्रकार हैं – 1 वीणा—प्रकरण, 2 श्रुति—प्रकरण, 3 स्वर—प्रकरण, 4 मेल—प्रकरण, 5 राग—प्रकरण, 6 आलाप—प्रकरण, 7 ठाय—प्रकरण, 8 गीत—प्रकरण, 9 प्रबन्ध—प्रकरण और 10 ताल—प्रकरण।

1. वीणा—प्रकरण – वीणाएँ तीन प्रकार की कही गई हैं:—

1. शुद्धमेल—वीणा, 2. मध्यमेल—वीणा, 3. रघुनाथेन्द्र—वीणा।

वीणा पर चार तार लगाने का विधान किया है। शुद्ध मेल वीणा के विषय में कहा है—बाएं ओर से प्रथम तार मन्द्र—षड्ज में, दूसरा मन्द्र—पंचम में, तीसरा मध्य—षड्ज और चौथा मध्य—मध्यम में मिलाने का निर्देश है। इन चार तारों के अतिरिक्त तीन और तार पार्श्व में कहे गए हैं जिनको क्रमशः तार—षड्ज, मध्य—पंचम और मध्य—षड्ज में मिलाने का विधान दिया है।

2. श्रुति—प्रकरण – सर्वप्रथम श्रुति और स्वर के भेद का स्पष्टीकरण किया गया है। स्वर्ण और उससे बने आभूषणों में जो अन्तर है, वही श्रुति और स्वर में कहा गया है। प्राचीन ग्रन्थकार भरतादि के अनुसार व्यंकटमुखी ने बाइस श्रुतियाँ स्वीकार की हैं। बाइस श्रुतियों में स्वरों का विभाजन करते हुए कहा है कि षड्ज से तीसरी श्रुति पर शुद्ध—ऋषभ, शुद्ध—ऋषभ से दूसरी श्रुति पर शुद्ध—गांधार, शुद्ध—गांधार से मध्यम की चार श्रुतियाँ हैं, जिनमें से प्रथम पर साधारण—गांधार, साधारण—गांधार से दूसरी श्रुति पर अन्तर—गांधार और अन्तर—गांधार से एक श्रुति पर शुद्ध—मध्यम कहा है। शुद्ध—मध्यम से चार श्रुति का पंचम विद्वानों ने माना है, जिनमें से तीसरी श्रुति पर वराली—मध्यम, वराली—मध्यम से एक श्रुति पर पंचम, पंचम से तीसरी श्रुति पर शुद्ध—धैवत, शुद्ध—धैवत से दूसरी श्रुति पर शुद्ध—निशाद है। षड्ज चार श्रुति का कहा गया है, जिसमें पहली श्रुति पर कैशिक—निशाद, कैशिक—निशाद से दूसरी श्रुति पर काकली—निशाद और काकली—निशाद से एक श्रुति पर स्वयं षड्ज विद्यमान है।

3. स्वर—प्रकरण – यह अध्याय सबसे महत्वपूर्ण है। व्यंकटमुखी ने स्वर प्रकरण में मुखारी राग के स्वरों को शुद्ध माना है। जिसके स्वर हिन्दुस्तानी संगीत के अनुसार सा रे रे म प ध ध सां होता है। उसका श्रुति विभाजन करते हुए कहा है—

चतुश्चतुश्चतुश्चैव षड्ज मध्यम पंचमाः।।
द्वे—द्वे निशादगांधारो तिस्त्री ऋषभधैवतो।

अर्थात् षड्ज, मध्यम, पंचम की चार—चार, गांधार, निशाद की दो—दो एवं ऋषभ, धैवत की तीन—तीन श्रुतियाँ हैं। सात शुद्ध व पाँच विकृत स्वर ग्रन्थकार ने माने हैं। लेखक का कथन है कि संगीत—रत्नाकर में 12 विकृत स्वर माने गए हैं। रामामात्य और सोमनाथ जो कि चतुर्दण्डी प्रकाशिका के पूर्व के ग्रन्थकार हैं, का नाम लिए बिना चतुर्दण्डी में कहा गया है कि कुछ लोग सात विकृत स्वर मानते हैं पर चतुर्दण्डी प्रकाशिका में कुल पाँच ही विकृत स्वर माने गए हैं, जिनके नाम है – 1. साधारण—गांधार, 2. अन्तर—गांधार, 3. वराली—मध्यम, 4. कैशिक—निषाद, 5. काकली—निशाद।

शुद्ध—गांधार जब नौवीं श्रुति से एक श्रुति ऊँचा होकर दसवीं श्रुति पर जाता है तो साधारण—गांधार हो जाता है और वही दो श्रुति और ऊँचा होकर बारहवीं श्रुति पर अन्तर—गांधार कहलाता है, गांधार के ये दो विकृत—रुप हुए। मध्यम का एक विकृत—रुप है जो कि पंचम की तीसरी

श्रुति पर तथा शुद्ध–मध्यम से तीन श्रुति ऊँचा है एवं आरम्भ से सोलहवीं श्रुति पर है। इसे इन्होंने एक नया नाम वराली–मध्यम दिया।

4. मेल–प्रकरण – इस प्रकरण में व्यंकटमुखी ने एक सप्तक में 72 मेल दिए जो कि अब तक के किसी भी ग्रन्थ में उल्लिखित मेलों से अधिक हैं। इन्हीं 72 मेलों के कारण यह ग्रन्थ अधिक ख्याति प्राप्त कर सका है। पं0 भातखण्डे जी ने भी इन्हीं 72 मेलों में से उत्तरी भारतीय संगीत पद्धति के लिए उपयुक्त दस थाट स्वीकार किए हैं।

पूर्वांग के प्रत्येक अर्धमेल के साथ उत्तरांग के सभी छहों अर्धमेलों को क्रमानुसार मिलाने पर छह पूर्णमेल तैयार होंगे।। इसी प्रकार क्रमशः दूसरे, तीसरे, चौथे आदि के प्रत्येक पूर्वांग के साथ उत्तरांग के अर्धमेलों को जोड़ने से 6×6=36 पूर्णमेल तैयार हो जाएँगे। इन सभी मेलों में 'शुद्ध–मध्यम' है। अब यदि 'शुद्ध–मध्यम' के स्थान पर 'तीव्र–मध्यम' कर दिया जाए तो पुनः 36 और नवीन मेल तैयार हो जाएँगे। अतः इस प्रकार कुल 36+36=72 मेल तैयार हो सकेंगे।

5. राग–प्रकरण – उस समय में प्रचलित रागों को 72 में से केवल 19 मेलों में वर्गीकृत किया गया है। जिस प्रकार उत्तर में अधिकतम 32 थाट हो सकते हैं पर प्रयोग में केवल 10 थाट ही आते हैं उसी प्रकार व्यंकटमुखी ने 72 में से केवल 19 मेलों को ही माना है।

6. आलाप–प्रकरण – इस अध्याय में राग विस्तार में आने वाले शब्दों पर विचार किया गया है, जैसे– आलाप, तान, करण, आक्षिप्तिका, वर्धनी, विदारी, मुक्तायि आदि। सम्पूर्ण, षाडव और औडव जातियों के स्वरों की संख्या के विषय में परम्परा से हट कर सात, छह और पाँच स्वर के स्थान पर आठ, सात और छह स्वर कहा गया है।

7. ठाय (स्थाय) प्रकरण – यह अध्याय चतुर्दण्डी–प्रकाशिका का सबसे संक्षिप्त अध्याय कहा जा सकता है, क्योंकि इस अध्याय में कुल सात श्लोक हैं। 'ठाय' का अर्थ है 'स्थाय'। राग का विस्तार करते समय भिन्न–भिन्न स्वरों को स्थायी मान कर किसी कल्पित स्थायी स्वर से चार स्वर आरोह में तथा चार ही स्वर अवरोह में, को प्रयोग करते समय चार–चार तानें बनाना ठाय (स्थाय) कहलाता था।

8. गीत–प्रकरण – व्यंकटमुखी ने संगीत में वर्णित प्रबन्धों के दो भाग करके गीत और प्रबन्ध नामक दो अध्याय बना दिए हैं। प्रबन्धों के सालग सूड, जो कि सूड के दो प्रकार कहे गए हैं उनमें से सालग को अलग कर दिया जिसे गीत–प्रकरण कहा गया है। छायालग नाम का रुपान्तर ही सालग है। इस अध्याय में सात प्रकार के गीत गिनाए गए है, जिनके नाम इस प्रकार हैं– 1. ध्रुव, 2. मट्ठ, 3. प्रतिमट्ठ, 4. निसारुक, 5. अट्टताल, 6. रास और 7. एकताली। इन सब गीत–प्रकारों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

3.6 नारदीय शिक्षा का सामान्य अध्ययन

प्राचीन कालीन के इन प्राप्त शिक्षा ग्रन्थों में से नारद रचित नारदीय शिक्षा का अपना विशिष्ट स्थान है। प्रायः सभी शिक्षा ग्रन्थों में वैदिक साहित्य के पठन व उच्चारण सम्बन्धी शिक्षा के उल्लेख प्राप्त होते हैं। परंतु नारदीय शिक्षा का वैशिष्ट्य यह है कि सामवेद से सम्बद्ध होने के कारण इस ग्रन्थ में वैदिक मन्त्रों के उच्चारण के अतिरिक्त उनके गान से सम्बद्ध तत्वों का भी उल्लेख किया गया है। अतः इस ग्रन्थ में प्राप्त होने वाले सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह हैं कि इसमें वैदिक संगीत के अतिरिक्त लौकिक संगीत की भी चर्चा प्राप्त होती है।

नारद द्वारा रचित पूर्वोक्त सभी संगीत विषयक ग्रन्थों में, 'नारदीय शिक्षा' ग्रन्थ प्राचीनतम् ग्रन्थ है तथा प्रस्तुत पुस्तक इसी ग्रन्थ में वर्णित विभिन्न सांगीतिक तथ्यों पर आधारित है।

<u>वैदिक संगीत</u> – नारदीय शिक्षा ग्रन्थ मूलतः दो भागों में विभक्त है– 'प्रथम प्रपाठक' तथा 'द्वितीय प्रपाठक'। प्रथम प्रपाठक मुख्यतया लौकिक संगीत एवं वैदिक संगीत से सम्बद्ध है तथा द्वितीय प्रपाठक में मुख्य रुप से वैदिक स्वर उच्चारण से सम्बद्ध तत्व निहित हैं। नारदीय शिक्षा का प्रत्येक प्रपाठक पुनः आठ–आठ उपखण्डों में विभक्त है जो 'कण्डिका' कहलाते हैं। इस ग्रन्थ के प्रथम प्रपाठक की प्रथम कण्डिका में ग्रन्थकार ने सर्वप्रथम तीन वैदिक स्वरों उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित का उल्लेख किया है। तत्पश्चात् शिक्षाकार ने, वैदिक गान अर्थात् साम गान करने वाली भिन्न–भिन्न वैदिक शाखाओं द्वारा प्रयुक्त किए जाने वाले वैदिक स्वरों का उल्लेख किया है। ये वैदिक स्वर पूर्वोक्त उदात्तादि वैदिक स्वरों से पृथक् हैं। द्वितीय कण्डिका में शिक्षाकार ने स्वर–मण्डल का उल्लेख करने के पश्चात् सप्त लौकिक स्वरों का नामोल्लेख तथा तीन ग्राम व इक्कीस मूर्च्छनाओं का वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त इसी कण्डिका में सप्त लौकिक स्वरों का, विभिन्न जीवों का प्रियत्व का भी उल्लेख किया गया है। तृतीय कण्डिका में पूर्ण रुप से गान के दस गुणों तथा चौदह गीति दोषों का वर्णन किया गया है। चतुर्थ कण्डिका में सप्त लौकिक स्वरों के रंगों व वर्ण–धर्म जाति तथा सप्त ग्रामरागों की चर्चा की गई है। पंचम कण्डिका में शिक्षाकार ने सर्वप्रथम वैदिक संगीत अर्थात् साम गान के स्वरों तथा लौकिक स्वरों की तुलना की है। उसके पश्चात् विभिन्न जीवों से सप्त लौकिक स्वरों की उत्पत्ति तथा शरीरगत स्थानों से सप्त लौकिक स्वरों की उत्पत्ति का वर्णन किया है। तत्पश्चात् इसी कण्डिका मे सप्त लौकिक स्वरों की व्युत्पत्ति का भी उल्लेख किया गया है। इसके अतिरिक्त इन्हीं स्वरों के गायकों तथा देवताओं का भी इस कण्डिका में उल्लेख किया गया है। शष्ठी कण्डिका में शिक्षाकार ने गात्र वीणा का उल्लेख करने के पश्चात् श्रुति पर भी कुछ वर्णन तथा कुछ इतर सांगीतिक तत्वों की भी चर्चा की है। सप्तमी कण्डिका में साम स्वर की शरीरगत स्थानों से उत्पत्ति, उनकी गात्र वीणा पर स्थिति, उनसे विभिन्न जीवों की सम्पुष्टि तथा पांच प्रकार की श्रुतियों अथवा श्रुति जातियों के वर्णन प्राप्त होते हैं। प्रथम प्रपाठक की अंतिम अष्टमी कण्डिका में शिक्षाकार ने आर्चिक के तीनों स्वरों का नामोल्लेख करने के पश्चात् वैदिक वर्णोच्चार का वर्णन किया है।

नारदीय शिक्षा का द्वितीय प्रपाठक पूर्णतया वैदिक वर्णोच्चार का ही ज्ञान कराता है। परंतु इस प्रपाठक की कुछ कण्डिकाओं में इससे इतर सांगीतिक तत्वों के वर्णन भी प्राप्त हो जाते हैं जिनका संगीत से सीधा सम्बन्ध तो नहीं है परंतु संगीत में उनकी कुछ उपयोगिता अवश्य है।

<u>श्रुति स्वर</u> – शिक्षाकार ने नारदीय शिक्षा में, यद्यपि श्रुति की परिभाषा अथवा व्याख्या नहीं दी है तथापि उन्होंने भी श्रुति को महत्व दिया है। इसी प्रकार यद्यपि शिक्षाकार ने श्रुति–संख्या का भी उल्लेख नहीं किया। तथापि ग्रामोल्लेख, साधारण स्वरोल्लेख तथा पंचम व धैवत की ह्रास एवं वृद्धि विषयक उल्लेखों से आभास होता है कि शिक्षाकार को बाईस श्रुतियों का ज्ञान था।

शिक्षाकार ने पांच श्रुति जातियों का भी नामोल्लेख किया है, परंतु वे श्रुति–जातियाँ अधिक स्पष्ट नहीं हैं। शिक्षाकार ने श्रुति जातियों पर चर्चा करते हुए कहा है कि आयता जाति का प्रयोग नीचे के स्वरों में, मृदु जाति का उसके विपरित अर्थात् उच्च स्वरों में तथा मध्या जाति का प्रयोग अपने स्वर में अर्थात् समान स्वरों में होता है। इस कथन से तात्पर्य यह भी हो सकता है कि अनुदात्त स्वरों में आयता, उदात्त में मृदु तथा स्वरित स्वरों में मध्या श्रुति–जाति का प्रयोग होता है। परंतु श्रुति जातियों का प्रयोजन एवं उनके वास्तविक लक्षण अथवा स्वरुप के वर्णन प्राप्त न होने के कारण शिक्षाकारोक्त श्रुति–जातियाँ स्पष्ट नहीं हो पाती। शिक्षाकार ने वैदिक स्वरों के अन्तर्गत भी श्रुति–जातियों का उल्लेख किया है। इसके अंतर्गत शिक्षाकार ने द्वितीय स्वर (वेणु का गान्धार) की श्रुति जातियाँ–मृदु, मध्या तथा आयता बताई हैं। यदि वैदिक संगीत का द्वितीय स्वर, लौकिक संगीत का गान्धार है, जैसा सामान्यतया माना जाता है, तब यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि गान्धार स्वर द्विश्रुतिक स्वर है। इस प्रकार उपरोक्त कथन में यह भी स्पष्ट नहीं होता कि द्वितीय स्वर गान्धार है अथवा लौकिक संगीत का द्वितीय स्वर–ऋषभ।

नारदीय शिक्षा में वर्णित स्वरोल्लेखों के इस अध्ययन से ज्ञात होता है कि तत्कालीन संगीत दो भिन्न–भिन्न धाराओं – वैदिक संगीत तथा लौकिक संगीत में प्रचलित था। तत्कालीन समाज में इन दोनों प्रकार की संगीत शैलियों का प्रचार था तथा लौकिक संगीत को प्राचीन गौरवमय वैदिक परम्परा से सम्बद्ध करने की प्रथा का चलन था। इसी क्रम में वैदिक संगीत के स्वरों तथा लौकिक संगीत के स्वरों की नारदीय शिक्षा में तुलना की गई। इसी प्रकार लौकिक स्वरों की जातियों, उनके वर्ण, गायक, शरीरगत उत्पत्ति स्थान, देवता आदि उल्लेखों से भी यही संकेत प्राप्त होते हैं।

<u>ग्राम–मूर्च्छना</u> – नारदीय शिक्षा में वर्णित ग्राम, मूर्च्छना तथा तान के अध्ययन से ज्ञात होता है कि यद्यपि शिक्षाकार ने तीन ग्रामों का नामोल्लेख किया है, तथापि उनका स्वरुप वर्णन व ग्राम की परिभाषा का उल्लेख, शिक्षाकार ने नहीं किया है। परंतु स्वरों के देवता का वर्णन करते हुए उन्होंने जिस प्रकार से, पंचम व धैवत स्वरों का वर्णन प्रस्तुत किया है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षाकार ने षड्ज व मध्यम ग्रामों के मूल भेद को विस्तृत रुप में वर्णित न कर, सांकेतिक रुप से वर्णित कर दिया है। इस तथ्य से बोध होता है कि शिक्षाकार को षड्ज व मध्यम ग्रामों का पूर्ण बोध था तथा ये दोनों ग्राम तत्कालीन संगीत में प्रचलित थे। यद्यपि नारदीय शिक्षा में किसी ग्राम की श्रुति–स्वर व्यवस्था का उल्लेख नहीं किया गया है तथापि ऐसा आभास होता है जिस रुप में उनके परवर्ती विद्वानों ने, इन्हें वर्णित किया है।

शिक्षाकारोक्त मूर्च्छना के उल्लेखों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि शिक्षाकार ने षड्ज व मध्यम ग्राम की सभी मूर्च्छनाओं का उल्लेख नहीं किया है। उन्होंने षड्ज ग्रामिक पांच मूर्च्छनाओं व मध्यम ग्रामिक दो मूर्च्छनाओं का ही वर्णन किया है। अतः यहाँ आभास होता है कि षड्ज व मध्यम ग्राम की मूर्च्छनाओं की प्राथमिक व आरम्भिक जानकारी हेतु, परवर्ती ग्रन्थकारों के लिए, नारदीय शिक्षा, आधार ग्रन्थ रहा होगा। शिक्षाकारोक्त ऋषि ने मूर्च्छनाओं की संख्या बढ़ा कर ही, परवर्ती काल में

संगीत कार्य किया गया हो तो आश्चर्य नहीं। इसके अतिरिक्त मकरंदकार नारद, नान्यभूपाल व पं0 शारंगदेव जैसे परवर्ती विद्वानों के लिए गान्धार ग्रामिक मूर्च्छनाओं की जानकारी प्राप्त करने का स्रोत भी, नारदीय शिक्षा ग्रन्थ ही रहा है। मात्र 'तान' के विषय में शिक्षाकार व परवर्ती ग्रन्थकारों के मतों में भेद दिखता है परंतु स्वयं शिक्षाकार ने भी 'तान' विषय पर अधिक चर्चा नहीं की है।

<u>ग्राम—राग</u> – शिक्षाकार ने सात ग्राम—रागों, पंचम, मध्यम ग्राम, षड्ज ग्राम, साधारित, कैशिक मध्यम तथा कैशिक का उल्लेख किया है तथा संक्षिप्त रुप में उनके स्वरुप का भी वर्णन किया है। परंतु शिक्षाकार द्वारा वर्णित सप्त ग्राम—रागों के स्वरुप वर्णनों से यह सप्त ग्राम—राग स्पष्ट नहीं हो पाते। शिक्षाकार के परवर्ती ग्रन्थकारों ने भी इन्हीं नामों से विभिन्न रागों का उल्लेख किया है किन्तु शिक्षाकार व परवर्ती ग्रन्थकारों के मतों में अन्तर दृष्टिगोचर होता है, जिसके विभिन्न कारण हो सकते हैं। सम्भवतः शिक्षाकारोक्त ग्राम—राग व परवर्ती आचार्यों द्वारा वर्णित शुद्ध राग या राग की पृथक्—पृथक् गायन शैलियाँ रहीं हों तथा उनमें केवल नाम की ही समानता रही हो अथवा शिक्षाकारोक्त 'ग्राम—राग' ही अपनी प्राथमिक अवस्थाओं में परिष्कृत व परिमार्जित होकर परवर्ती काल में 'शुद्ध राग' के रुप में तथा बाद में 'राग' के रुप में स्थापित हो गए हों। परंतु स्पष्ट साक्ष्य प्राप्त न होने के कारण ग्राम—रागों के स्वरुप के विषय में दृढ़ता से निर्णय नहीं लिए जा सकते है। किन्तु इस अध्याय में 'ग्राम—राग' विषयक अध्ययन करने के कुछ अन्य तथ्य स्पष्ट हो जाते हैं। शिक्षाकार ने जिन सात ग्राम—रागों का वर्णन किया है उनका ज्ञान परवर्ती ग्रन्थकारों को भी रहा है। 'ग्राम—राग' परवर्ती काल में प्रचलित हुई विधाओं, जाति व राग से पृथक् गायन विधा थी तथा वे जाति व राग से भी प्राचीन हैं। इस आधार पर व याष्टिक आदि पूर्वाचार्यों के कथनों के आधार पर भी आभास प्राप्त होता है कि जहाँ स्वर से ग्राम व मूर्च्छना की उत्पत्ति हुई वहीं सम्भवतः ग्राम से ही आदिम गायन शैली 'ग्राम—राग' का भी उद्भव हुआ। इस अध्याय में ग्राम—राग के अध्ययन से यह भी संकेत प्राप्त होते हैं कि जिस प्रकार मूर्च्छना से जाति व जाति से रागों की उत्पत्ति मानी गई है उसी प्रकार कुछ रागों की उत्पत्ति में ग्राम—राग भी सहायक रहे हैं।

शिक्षाकार ने नारदीय शिक्षा ग्रन्थ में संगीत से सम्बद्ध जिन तत्वों का समावेश किया है, प्रायः उनका प्रयोग गायन के संदर्भ में ही होता है। इस ग्रन्थ में वादन तथा नर्तन संगीत से सम्बद्ध विषयों के उल्लेख प्राप्त नहीं होते। अतः शिक्षाकार ने गायन अथवा गान को ही आधार मानकर गान के विविध गुणों तथा गीत के विभिन्न दोषों की चर्चा भी, अपने ग्रन्थ में की है।

शिक्षाकार ने नारदीय शिक्षा में गान के दस गुणों पर विस्तृत चर्चा करने के पश्चात् गीति के दोषों का भी उल्लेख किया है। शिक्षाकार ने गीति के दोषों का विस्तृत वर्णन नहीं किया है अपितु उनके नामोल्लेख मात्र कर दिए हैं। नारदीय शिक्षा में गीति के चौदह दोषों का नामोल्लेख प्राप्त होता है।

नारदीय शिक्षा के प्रथम प्रपाठक की आठ कण्डिकाओं में कुल 124 श्लोक संग्रहीत हैं तथा द्वितीय प्रपाठक की आठ कण्डिकाओं में कुल 113 श्लोक संग्रहीत हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण नारदीय शिक्षा ग्रन्थ में कुल 238 श्लोक संकलित हैं। नारदीय शिक्षा में संकलित सभी श्लोक प्रायः उसी रुप में है जैसे बृहन्नारदीय पुराण या महानारदीय पुराण में भी वर्णित किए गए हैं। कुछ आधुनिक विद्वानों का मत है कि नारदीय शिक्षा ग्रन्थ, नारदीय पुराण में से ही उदधृत किया गया है परंतु इस विषय पर साक्ष्य उपलब्ध नहीं होते हैं।

3.7 संगीत मकरंद ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

आठवीं शताब्दी में नारद का एक और ग्रंथ 'संगीत मकरंद' प्रकाश में आया। इस ग्रंथ में प्रथम बार पुरुष राग, स्त्री राग और नपुंसक रागों का वर्गीकरण मिलता है। परन्तु यह ध्यान देने की बात है कि उन्होंने 'रागिनी' शब्द का प्रयोग नहीं किया है। इसमें 20 पुरुष राग, 24 स्त्री राग और 13 नपुंसक राग गिनाए हैं। रागों के इस वर्गीकरण का आधार उनका रस है। उनका कहना है कि रौद्र, अद्‌भुत तथा वीर रस के लिए पुरुष राग, श्रृंगार तथा करुण के लिए स्त्री राग और भयानक, हास्य तथा शांत रस की उत्पत्ति के लिए नपुंसक रागों को प्रयोग में लाना चाहिए। इस ग्रंथ में राग की जातियाँ (संपूर्ण, षाडव व औडव) तथा गान–समय भी बताया गया है। राग–रागिनी वर्गीकरण की प्रक्रिया पाँच–दस वर्ष तक सीमित नहीं है। लगभग 8वीं–9वीं शताब्दी में लिखे गए 'संगीत–मकरन्द' से लेकर 19वीं शताब्दी के अन्त तक के एक सहस्र वर्षों से भी अधिक इसका क्रम चलता रहा। इसके रहते मेल राग वर्गीकरण और रागांग वर्गीकरण भी अस्तित्व में आ चुके थे। लेकिन यह प्रक्रिया फिर भी अपना सम्मान बनाए रही, यह कम महत्व की बात नहीं है।

संगीत मकरन्द में छह राग, छत्तीस रागिनियाँ का वर्णन है। इसी में एक अन्य मत के अनुसार आठ पुरुष राग, तीन–तीन स्त्रियाँ राग बताए गए हैं। ग्रंथ में स्वर, मूर्च्छना, राग, ताल आदि विषयों को लिया गया है। स्वर ही संगीत का पर्याय है, इसलिए 'स्वर' के साथ जिन पशु–पक्षियों के सम्बन्धों की चर्चा प्राचीन और अर्वाचीन विद्वानों ने की है वह भी एक प्रकार से उपर्युक्त कारणों से जुड़ी हुई है। षडजादि 'स्वरों' से जिन पक्षियों और पशुओं की ध्वनियों का सम्बन्ध जोड़ा गया है उसे इसी कारण न तो कोरी कल्पना कहा जा सकता है और न ही इन विचारों को किसी अन्य दृष्टि से निराधार कहा जा सकता है।

संगीत मकरंद में नारद ने षडजादि स्वरों के साथ पक्षियों या पशुओं की ध्वनि का सम्बन्ध बताया है उन सब में समानता अधिक है और भिन्नता कम। षडज, पंचम और निषाद इन तीन स्वरों के साथ मोर, कोयल और हाथी की ध्वनियों के सम्बन्ध में तो इस वर्ग के सभी विद्वान एकमत हैं। शेष स्वरों में भी कोई बहुत बड़ा मतभेद नहीं है। संगीत मकरन्द में मयूर, चातक, अजा, क्रौंच, पिक, अश्व, गज की ध्वनियों का वर्णन स्वरों के सम्बन्ध में किया गया है।

संगीत मकरंद में ग्राम–सम्बन्धी उल्लेख भी हैः–

ग्रामः स्वरसमूहः स्यान्मूर्च्छना तु स्वराश्रया।
षडजमध्यमगान्धारग्राम त्रयमुदाहृतम्।।

ग्राम–सम्बन्धी धारणा में दो बातों का मुख्य रुप से उल्लेख हुआ है। शारंगदेव के पूर्ववर्ती आचार्यों ने ग्राम को केवल मात्र विशिष्ट स्वर समूह कहा है, लेकिन उन्होंने उसे (ग्राम को) मूर्च्छनाओं को समाश्रय भी कहा है। संगीत–मकरंद की ग्राम सम्बन्धी परिभाषा भी लगभग ऐसी ही है। यह ग्रन्थ रत्नाकर का पूर्ववर्ती माना जाता है। इसके अनुसार यह कहा जा सकता है कि रत्नाकरकार को संगीतकार–मकरंद की तथाकथित धारणा ने प्रभावित किया होगा। लेकिन रत्नाकरकार जैसे स्वतन्त्र चिन्तक के विषय में अत्यन्त निर्णयात्मक ढंग से यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने अपनी ग्राम–सम्बन्धी धारणा संगीत–मकरन्द से प्रभावित होकर निर्धारित की होगी। मूर्च्छना के मूलभूत स्वरुप पर कोई विशेष मतभेद नहीं है। प्रत्येक मूर्च्छना सात स्वर की होनी चाहिए, उसमें स्वर क्रमानुसार होने

चाहिए, दोनों ग्रामों का प्रत्येक स्वर एक–एक मूर्च्छना का मूल स्वर हो सकता है। सभी मूर्च्छनाएं जातियों व रागों की जननी है।

नारद, भरत और अन्य सभी परवर्ती विद्वानों ने जिन तान प्रकारों का उल्लेख किया है उनका सम्बन्ध औड़व–षाड़व रुपों से है। इसलिए उन्हें औड़विता तथा षाड़विता तानें भी कहते हैं। इसी षाड़व–औड़वकरण के जो नियम बनाए गए उनके अनुसार दोनों ग्रामों की तानों की संख्या भी निर्धारित की गई। ये सब यदि मूर्च्छना के मूल प्रकार मान लें तो सुचारु सिद्धांत प्रक्रिया में मतभेद की गुंजाइश हो जाती है। हमारी मान्यता है कि मूर्च्छनाएं गेय नहीं हैं। यदि तान प्रकारों को मूल मूर्च्छना प्रकार मान लिया जाता है तो यह धारणा जो कि निर्भ्रान्त है, आपत्तिजनक हो जाती है। सभी ने मूर्च्छनाओं के बाद तानों का उल्लेख किया है। इसका कारण तो सिद्धांतों का क्रमबद्ध विवेचन है। इसको आधार मानकर इन तान प्रकारों को मूर्च्छनाएं नहीं कहा जा सकता।

श्रुतियों के नाम प्रचलित परंपरा से भिन्न हैं। भरत मुनि ने जहाँ तैंतीस अलंकारों का वर्णन किया है, वहाँ इस ग्रंथ में केवल उन्नीस अलंकारों का निरुपण है। नखज, वायुज, चर्मज, लोहज और शरीरज नाम से नाद के पाँच भेदों का उल्लेख है तथा वीणा के अठारह भेदों का वर्णन है। कहा जाता है कि इसी के आधार पर आगामी ग्रंथकारों ने राग–रागिनी–वर्गीकरण किए हैं।

संगीत मकरन्द में ताल के सम्बन्ध में जो कुछ उल्लेख मिलते हैं, वे अर्थ की दृष्टि से लगभग एक जैसे हैं। ताल के भाव को स्पष्ट करने के लिए दोनों में कहने की शैली मात्र को भिन्न कहा जा सकता है :–

ताल शब्दस्य निशपत्ति प्रतिशठार्थेन धातुना।
गीतं वाद्यं च नृत्यं च भातिताले प्रतिष्ठितम्।।

ताल की इस धारणा में 'धातु' शब्द का प्रयोग आया है जो कला, क्रिया आदि अन्य शब्दों की ओर संकेत कर सकता है। '

संगीत मकरन्द के अनुसार संगीत के त्रितत्वयुक्त स्वरुप में ताल का मूर्धन्य स्थान है, इसमें कोई सन्देह नहीं। इसकी पूर्णता के ज्ञान हेतु उन पारिभाषिक शब्दों का उल्लेख पर्याप्त सहायक हो सकता है जो इस तत्व के अनिवार्य अंग हैं। इनके सम्बन्ध में सूत्रमूलक श्लोक इस प्रकार है–

कालमार्ग क्रियांगनि ग्रहजातिकलालयाः।
यतिप्रस्तारक चैव तालप्राणा दश स्मृताः।।

उपरोक्त श्लोक के अनुसार पहला स्थान काल को दिया गया है। ताल लय की एक ऐसी सुनिर्धारित इकाई है जो स्वर और पद को सक्रियता ही नहीं, अपितु सौष्ठव भी प्रदान करती है। ये दोनों काल से जुड़े हुए हैं। दूसरे शब्दों में अखण्ड काल प्रवाह का सुन्दर विभाजित रुप ही ताल या लय है। यह सर्वविदित है कि काल की जो विभाजन क्रियाएं मनुष्य ने निर्धारित की हैं, वह उसने अपनी सुविधा को ध्यान में रखकर, काल की अखण्डता को सखण्डता में रखकर निर्धारित की है। ताल ही नहीं, जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी काल की सबसे छोटी मापन क्रिया से लेकर विशाल मापन क्रिया तक के अनेक मानक हैं। जीवन के व्यावहारिक रुप में निमेष से लेकर सहस्त्रशाब्दियों या युगों तक इसकी विशालतम सीमाएं हैं।

3.8 संगीत चिन्तामणि ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

संगीत चिन्तामणि ग्रन्थ सन् 1966 में प्रकाशित हुआ, जिसकी रचना प्रकाण्ड संगीत–शास्त्र ज्ञाता आचार्य बृहस्पति ने की। 1976 में इसका द्वितीय संस्करण एवं सन् 1987 में इस ग्रंथ का दूसरा भाग प्रकाशित हुआ। ग्राम एवं सप्तक के विषय में संगीत चिन्तामणि के प्रथम भाग में वर्णित है कि सप्तक वस्तुतः सात स्वरों का वह मूल समूह रहा होगा जिसने ग्राम के शास्त्र सम्मत को जन्म दिया। आज जिस प्रकार हम किसी भी स्वर सप्तक को, अंग्रेजी के स्केल का अनुवाद करते हुए 'ग्राम' कह देते हैं, उस अर्थ में प्राचीनों ने ग्राम शब्द का प्रयोग नहीं किया है। यों तो प्रत्येक मूर्च्छना एक स्वतन्त्र सप्तक है किन्तु उसे शास्त्रीय दृष्टि से ग्राम नहीं कहा सकती। ग्राम तो वही स्वर समूह है जिसे अन्य मूर्च्छना प्रयोग के लिये आधारभूत मान लिया गया हो।

सप्तक स्केल का अनुवाद हो सकता है, ग्राम का पर्याय नहीं। ग्राम की कुछ मूल विशेषताएं होती हैं जिनके फलस्वरुप एक विशिष्ट सात स्वरों का समूह बनता है। संगीत चिन्तामणि के अनुसार – सप्तक के शेष चार स्वर तो ग्राम सम्बन्धी प्रमुख विशेषताओं के कारण स्वतंत्र ग्राम नहीं बन सकते। व्यावहारिक रुप से यदि ग्राम व्यवस्था को देखा जाए तो ग्राम में एक ग्राम के सभी निवासी मुखिया नहीं होते, मुखिया तो एक ही होता है। यह बात दूसरी है कि उन सबको उनके कार्यक्षेत्र के अनुसार वांछित स्थान दिया जाता है। केवल सात स्वर बना लेना भी तो ग्राम नहीं है। ग्राम निर्माण के लिए यदि यही एकमात्र नियम है तो फिर ग्राम के पश्चात् मूर्च्छनाओं और जातियों के निर्माण की आवश्यकता ही क्या है। शेष चारों स्वर ग्राम क्यों नहीं रहे, इसका एक स्पष्ट कारण निम्नोधृत ग्राम सम्बन्धी वे विशेषताएं हैं जिन्हें आचार्य बृहस्पति ने निर्धारित किया है और जो कदाचित् अभिनव गुप्त द्वारा भी विवेचित हैं। इस समस्त चर्चा का सारांश यह है कि:

1. ग्रामणी स्वर परिमाण में किसी भी अन्य स्वर की अपेक्षा न्यून नहीं होना चाहिए। अर्थात् ग्रामणी स्वर का चतुःश्रतिक होना अनिवार्य है।
2. एक सप्तक में ग्रामणी स्वर से नौ और तेरह श्रुतियों के अन्तर पर दो स्वर अवश्य होने चाहिए।
3. ग्रामणी स्वर से अगला स्वर त्रिश्रुतिक अवश्य होना चाहिए।

मूर्च्छनाओं से सम्बन्धित अभिनव गुप्त के दृष्टिकोण को समझाते हुए संगीत चिन्तामणि में वर्णित है कि हर उदार और मूलभूत विषय अनादि होता है। उसे यदि स्वयंभू कह दिया जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। मूर्च्छना कुछ–कुछ ऐसा ही आधारभूत सिद्धांत है। इसकी जड़ें वेदकाल में यदि मिल जाती हैं तो आश्चर्य की कोई बात नहीं। आचार्य अभिनव गुप्त ने मूर्च्छना के सम्बन्ध में स्थान–स्थान पर काफी विस्तारपूर्वक विचार व्यक्त किये हैं। वह एक भाष्यकार हैं अतः किसी शब्द का सूत्रमूलक स्वरुप उन्हें अभीष्ट नहीं है। लेकिन फिर भी वह भरत–मतंग आदि परम्परागत मूर्च्छना सिद्धांतों की व्याख्या इस रुप में करते हैं जिससे उनकी तद्विषयक निजी धारणा भी सम्मिलित हो जाती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए अभिनव गुप्त का मूर्च्छना सम्बन्धी दृष्टिकोण भरत और मतंग से भिन्न नहीं है। उन्हीं के शब्दों से यह बात उदधृत की जा सकती है कि मूर्च्छना का सम्बन्ध ऋक, गाथा आदि से जुड़ा हुआ है :–

मूर्च्छनातानानां ऋग्गाथा सामभ्यंआनीय यदि प्रकर्षेण।
योजनं स्थानानां विशेषरक्तिदायिनां प्राप्त्यर्थम।

अर्थात् 'ऋक, गाथा और साम से ग्रहण करके मूर्च्छना और तानों का प्रकर्षपूर्वक योजन विशेष रक्तिदायक स्थानों की प्राप्ति के लिए है।

राग वर्गीकरण के अन्तर्गत संगीत चिन्तामणि भाग एक में उल्लेख है कि थाट, रागों में प्रयुक्त होने वाले स्वरों को याद रखने हेतु एक तात्कालिक प्रबन्ध मात्र है। ''मेल–पद्धति, ठाठ–पद्धति 'राग' के शरीर पर विचार करती है। वह हमें यह नहीं बताती कि किस राग में किन–किन स्वरों का किस–किस मात्रा या किस–किस परिमाण में प्रयोग किस–किस भाव की अभिव्यक्ति में सहायक होकर कौन से प्रधानभाव का परिपोश करता है। इसलिए आज का गायक 'वैचित्रय' के पीछे पड़ा हुआ है, तैयारी उसका लक्ष्य है और वह अपनी तैयारी से श्रोताओं को आतंकित या चकित कर देना चाहता है''।

संगीत चिन्तामणि ग्रंथ में निम्न उल्लेख भी प्राप्त होता हैः–

- शुद्ध स्वरावलि, प्राकृतिक स्वरावलि तथा आधार स्वरावलि।
- स्वरों की शुद्धता और सार्थकता, षड्जग्रामीय शुद्ध सप्तक और काफी ठाठ, भातखण्डे जी के मूल स्वर, .महाभारत के सांगीतिक स्वर।
- वाद्यों की उत्पत्ति, वाद्यों के प्रकार, गीत अनुकरण के प्रकार, वृत्ति, वीणा के प्रकार, वंश का महत्व, अवनद्य वाद्यों के प्रकार, घनवाद्यों के प्रकार।
- ख्याल और उसका विकास।
- निबद्धगान, तानसेन के ध्रुवपद, सदारंग की रचनाएं, नई बंदिशें, स्व0 भातखण्डे जी के विचार, भातखण्डे जी की दृष्टि में गीत रचना के सिद्धांत।
- संगीत में धमार, वैष्णव संतों के धमार पद, सदारंग परम्परा के पखावजी, रामपुर–दरबार के तन्त्री–वादक, धमार ताल की मात्राओं का विभाजन, मुगल दरबार तथा अन्तःपुर की होली, सदारंग की रचनाएँ।
- प्राचीन वाङ्मय में कथक शब्द, नृत्य और नाट्य, कथक शब्द का अर्थ तथा पर्याय, तेरहवीं शती ई0 में कथक रीति का उल्लेख, चौदहवीं शती ई0 के उत्तरार्द्ध में सम्प्रदायों का पुनरुद्धार।
- भारतीयों का उच्चारण–नैपुण्य, भारत ज्ञान–कोष, ब्राहमणों की विद्वता और श्रेष्ठता, भारतीय संगीत की श्रेष्ठता।
- अरब के संगीत की अपेक्षा भारतीय संगीत की श्रेष्ठता, विदेशियों के लिए भारतीय संगीत की अगम्यता, भारतीय संगीत की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए अमीर खुसरो के प्रयत्न।
- गीत का लक्षण, रसास्वाद, नाट्य में रस–परिपाक की प्रक्रिया।
- वेद और गान ,'ऋग्वेद' प्राचीनतम ग्रन्थ, गेय रुप सामवेद, सामगान में स्वरों का प्रयोग।
- दरबार और संगीत, हज़रत अमीर खुसरो।
- तानसेन विषयक ऐतिहासिक तथ्य, तानसेन एवं हरिदास।
- उत्तम गान, गायक की प्रमुखता, गायन में राग, ताल तथा बंदिश का महत्व, वाग्गेयकार, गायन में भाषा का महत्व।

3.9 संगीतांजलि ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

संगीतांजलि ग्रंथ की रचना सन् 1938 में संगीत मार्तण्ड पं0 ओमकार नाथ ठाकुर ने की। इसके पश्चात् निरन्तर इसके सात भाग प्रकाशित हो चुके हैं। क्रियात्मक दृष्टि से संगीत के अन्तर्गत सभी स्तर के शिक्षार्थियों के लिए यह ग्रंथ अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि विस्तृत रुप से संगीतशास्त्र के साथ इस ग्रंथ के छः भागों में लगभग समस्त प्रचलित एवं मूल रागों का सम्पूर्ण वर्णन मिलता है। संगीतांजलि ग्रंथ सात भागों में विभाजित है। इन सात भागों में मुख्य रुप से रागों का समय निर्धारण, निबद्ध—अनिबद्ध गान, रागांग वर्गीकरण, संगीत शास्त्र ग्रंथों का परिचय, साम—गान का उल्लेख, ग्राम मूर्च्छना, चतुर्सारणा एवं सांगीतिक ध्वनि का वैज्ञानिक अध्ययन आदि विभिन्न तत्वों का उल्लेख प्राप्त होता है। इन सात भागों में विभिन्न रागों का सम्पूर्ण विवरण एवं उनमें प्रयुक्त सूक्ष्म स्वर तथा सौन्दर्यात्मक तत्वों का उल्लेख प्राप्त होता है। इनमें कुछ राग हैं—भूपाली, हंस ध्वनि, दुर्गा, सारंग, देश, खमाज, काफ़ी, शंकरा, विहाग, हमीर, बागेश्वरी, भैरवी, छायानट, मल्हार, विभास, दरबारी, मालगुंजी आदि। संगीतांजलि ग्रंथ के सात भागों में निम्न उल्लेख प्राप्त होता है।

संगीतांजलि ग्रंथमाला के प्रथम भाग में "संगीत" की परिभाषा, 'संगीत" के मुख्य तत्व या उपकरण, स्वर सम्बन्धी विषय, नाद—आहत और अनाहत, नाद के तीन गुण सप्तक और अष्टक, शुद्ध विकृत स्वर, स्वर संवाद, वर्ण, अलंकार या पलटा, राग के मुख्य तत्व, राग—जाति, लय और उसके तीन भेद आदि की विस्तार से व्याख्या की गई है।

प्रथम भाग में जो नौ राग दिये हैं, उनके क्रम में भी एक विशेषता है। प्रथम भाग में सप्त स्वरों के परिचय के बाद उन स्वरों में से म—नि और म—ध, ग—नि और ग—ध, रे—ध और रे—प, इन स्वर जोड़ियों को निकाल कर भूप, हंसध्वनि, दुर्गा, सारंग, तिलंग और भिन्नशड्ज इन रागों की उत्पत्ति की गई थी और इन्हीं रागों के स्वरों में रे—ध और ग—ध की स्वर जोड़ियों के प्रयोग से खमाज और देश कैसे बनता है, इसका बोध दिया गया था। सारंग, तिलंग, देश और खमाज में निशाद कोमल का परिचय तो विद्यार्थी पा ही चुके थे, किन्तु गान्धार कोमल का नूतन परिचय कराने के लिये उन्हें काफी राग सिखाया गया था। इस भाग में उसी शैली और उसी क्रम का अनुगमन किया गया है।

इस भाग में दिए हुए रागों के बँधे हुए आलाप—तानों के अभ्यास से एक विशेष घराने की परिपाटी का अल्प—परिचय होगा, जिससे सुन्दरता और मधुरता के साथ नये—नये विधान कैसे किए जाएँ और सम पर कैसे आया जाए, उसका ठीक—ठीक बोध हो सकेगा।

इस भाग में कुछ ध्रुवपद और धमार भी दिये हुए हैं। ख्याल—गायन के पूर्व ध्रुपद और धमार का परिचय पा लेना, उसकी लय की बांट को समझ लेना, द्विगुन, तिगुन, चौगुन और आड़ को आत्मसात् कर लेना और स्वर को स्थैर्य प्राप्त करना अत्यावश्यक है।

संगीतांजलि ग्रंथमाला के प्रथम भाग में रागों का परिचय देते हुए प्रायः पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है। दूसरे भाग में रागों के परिचय में ग्रह, अंश, न्यास ऐसे कई पारिभाषिक शब्द आए हैं। यहाँ शुरु में इस भाग के पहल संस्करण से 'कुछ शास्त्रीय शब्दों की व्याख्या' इस शीर्षक में जो कुछ कहा गया है, उसे और राग—परिचय की भाषा को यदि एक साथ रखकर देखें तो पाठकों को सहज ही यह ध्यान में आएगा कि इस ग्रंथमाला के लेखक ने राग—परिचय में प्राचीन पारिभाषिक शब्दों का पुनर्रुद्धार करना चाहा है।

राग—संबंधी पारिभाषिक शब्दों का इतिहास स्वर—व्यवस्था के इतिहास के साथ जुड़ा है। इसलिए ऊपर लिखे शब्दों के इतिहास को अलग करके नहीं देखा जा सकता है। प्राचीन स्वर—व्यवस्था की चर्चा इस ग्रंथमाला के चौथे भाग से ही थोड़ी—थोड़ी शुरु हुई है, इसलिए इस भाग में राग—संबंधी शब्दों की पूरी व्याख्या देना मूल लेखक ने जरुरी नहीं समझा होगा। तीसरे भाग में 'कुछ पारिभाशिक शब्दों की व्याख्या' इस शीर्षक से पृष्ठ 12—15 पर 'वादी—संवादी' और 'ग्रह—अंश' आदि की कुछ विस्तार से व्याख्या की गई है।

'संगीतांजलि' के क्रमिक पाठ्य—क्रम के तीसरे भाग में उस ख्याल—गायकी की शिक्षा का आरंभ करना उचित माना है। ख्याल गायकी के भिन्न—भिन्न घरानों की परंपरा का उल्लेख यहाँ आवश्यक नहीं समझा है, परन्तु हमारी अपनी ख्याल गायकी की परंपरा के अंगों को यहाँ समझाना विशेष रुप से समुचित माना है।

संगीतांजलि के प्रथम दो भागों में चौताल, झपताल, सूलताल, धमार, तेवरा आदि ध्रुवपद अंग के तालों में गीत, पूर्व—उल्लिखित लय की बाँट सहित विद्यार्थियों को अवगत कराये गए हैं। इस भाग में नौ रागों के ख्याल, उनके तालबद्ध आलाप, बोलतानें और तानें दी गई हैं।

अभ्यास और विकास के लिये मुक्त आलाप और मुक्त तानें प्रथम दो भागों में भी दिए गए हैं और इस भाग में विशेष विस्तार से दिये गए हैं। मुक्त आलाप और मुक्त तानों का अभ्यास करके विद्यार्थी अपनी बुद्धि से उन रागों के पदों में स्वयं उनका उपयोग कर सकें, और स्वनिर्मित आलाप—तान से गीत को अलंकृत कर सकें, इसीलिये उनका समावेश किया गया है। तालबद्ध आलाप, बोलतान और तानें इसलिये दी गई हैं कि इससे विद्यार्थी किस ढंग से आलाप का क्रमिक विस्तार करें, बोलतान को निबद्ध करें, तान का प्रस्तार करें और तिहाइयों से गीत को सजा कर रंजकता बढ़ाएं, इन सब बातों में उनका मार्गदर्शन हो सके।

पाँचवें भाग में दो खण्ड हैं— प्रथम खण्ड में इस पाठ्यक्रम के अन्तर्गत शास्त्रीय विभाग है और द्वितीय खण्ड में प्रयोगगत क्रिया से संबंधित विषय रखे गए है। परिशिष्ट में इस पाठ्यक्रम के उपांग—स्वरुप चार राग दिए गए हैं।

शास्त्रीय खण्ड के आरम्भ में भारतीय संगीत के शास्त्र—ग्रन्थों का अल्प परिचय दिया है, गान्धर्व वेद, भरत नाट्यशास्त्र, बृहद्देशी, 'संगीत रत्नाकर' इत्यादि प्रमुख ग्रन्थों की विषय—सूची इस प्रकरण में दी गई है। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों की रुचि बढ़ाना, प्राचीन साहित्य के अध्ययन के प्रति उनकी जिज्ञासा जाग्रत करना और ऐसे अध्ययन की अनिवार्य आवश्यकता सिद्ध करना ही है।

शास्त्र—ग्रन्थ परिचय के बाद प्रस्तुत पाठ्यक्रम के अन्तर्गत पूरे स्वर—प्रकरण के विषयों का समावेश किया गया है। भरत का विषय यहाँ नहीं लिया गया है। राग—शास्त्र के विषयों के साथ उसका उल्लेख आगामी शष्ठ भाग में किया है। क्योंकि यह विषय राग से ही संबंधित है। स्वर, श्रुति, ग्राम, मूर्च्छना इत्यादि विषयों का परस्पर अविच्छेद संबंध, एक को समझे बिना दूसरे को समझना असंभव—सा है।

इस ग्रन्थ में अनिवार्य रुप से 'संगीत रत्नाकर' जैसे ग्रन्थ के प्रणेता निःशंक शारंगदेव के दिए हुए श्रुति—स्वर सम्बन्धी विधानों से सम्मत न हो सकने के कारण जहाँ—जहाँ आवश्यक प्रतीत हुआ, उतने अंश पर निर्भीकता से विचार प्रकट किए हैं, विशेष रुप से विकृत स्वर—प्रकरण की ओर। 'प्रणव—भारती' के तृतीय अध्याय में रत्नाकरोक्त विकृत स्वरों का जो विवरण दिया गया है, उससे भिन्न

विचारधारा का यहाँ उल्लेख करना पड़ा है। इतने विशाल ग्रन्थ के रचयिता की ओर से श्रुति, स्वर, सारणा इत्यादि के सम्बन्ध में कोई बड़ी भूल हो सकती है, ऐसे विचार प्रकट करना किसी की राय में दु:साहस भी माना जा सकता है। संभव है कि इसी आतंक के कारण लोग स्पष्टीकरण से विरत रहे हों, किन्तु मध्ययुग से आज तक संगीत के शास्त्र–ग्रन्थों में जो भ्रम–जाल दिखाई देता है, जिससे हम भी पूर्ण मुक्त नहीं रह पाए थे, उसका क्रियादंश में निराकरण करने का विषय ग्रंथमाला के इस भाग में प्रयत्न किया गया है। सतत परीशीलन से जो आलोक प्राप्त हुआ उसे अपने तक सीमित न रखने की कर्तव्य–बुद्धि से प्रेरित होकर ही यथा स्थान 'रत्नाकर' सम्बन्धी उल्लेख इस भाग में दिए गए हैं।

3.10 संगीत पारिजात ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

इस ग्रन्थ के लेखक पण्डित अहोबल हैं। लेखक ने अपने तथा रचना–काल के विषय में कुछ नहीं कहा है पर वर्णित सामग्री को देखते हुए काल व स्थान का किसी हद तक निर्धारण किया जा सकता है।

<u>काल</u> – संगीत–परिजात के उद्धरण पं0 श्रीनिवास और भावभट्ट ने दिए हैं। भावभट्ट ने श्रीनिवास को भी उद्धृत किया है। भावभट्ट का रचना–काल सत्रहवीं शताब्दी का अन्तिम दशक है, अतः कहा जा सकता है कि पं0 अहोबल ने संगीत–पारिजात की रचना सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में की होगी। अधिकांश संगीत के ग्रन्थों में संगीत–पारिजात का समय सन् 1650 ई0 दिया गया है। हमारे विचार से इसका रचनाकाल एक–दो दशक और पहले का होना चाहिए ।

<u>स्थान</u> – यद्यपि संगीत–पारिजात उत्तर भारत का ग्रन्थ है पर विषय वस्तु को ध्यान से देखने पर ज्ञात होता है कि पं0 अहोबल उत्तर व दक्षिण दोनों पद्धतियों के जानकार थे या सम्भव है कि वे दक्षिण से आ कर उत्तर में बसे हों। संगीत–पारिजात में भी मुखारी मेल (हिन्दुस्तानी सा रे रे म प ध ध सां) दक्षिण वाले स्वरों में ही मिलता है। अहोबल ने और भी कुछ रागों में दक्षिण की भाँति कोमल–ऋषभ व शुद्ध–ऋषभ, एक के बाद एक का प्रयोग रागों के वर्णन में दिया है। अतः कहा जा सकता है कि अहोबल पर दक्षिणी–संगीत का प्रभाव था। वैसे सम्पूर्ण ग्रन्थ उत्तर भारत के संगीत का ही विवेचन करता है।

<u>शुद्ध–सप्तक</u> – संगीत–पारिजात का शुद्ध–सप्तक वर्तमान काफी के समान था। अर्थात वर्तमान उत्तरी–संगीत के अनुसार अहोबल के शुद्ध–सप्तक में गांधार व निषाद कोमल तथा शेष सभी स्वर शुद्ध लगते थे। इसकी पुष्टि के लिए दो तर्क दिए जा सकते हैं। प्रथम तो यह कि वह प्राचीन ग्रन्थकारों अपने शुद्ध स्वरों को षड्ज–ग्राम के स्वर कहते है जो चौथी, सातवीं, नौवीं, तेरहवीं, सत्रहवीं, बीसवी, और बाईसवीं श्रुतियों पर षड्ज, ऋषभ आदि सातों स्वरों को स्थापित करने का विधान है। षड्ज–ग्राम के स्वर आधुनिक काफ़ी के लगभग समान कहे जा सकते हैं। अन्तर केवल यह है कि षड्ज–ग्राम की अपेक्षा काफ़ी में ऋषभ और धैवत तीन के स्थान पर चार श्रुतियों के होते हैं। गांधार और निशाद भी अपने स्थान से एक–एक श्रुति ऊँचे होते है। दूसरे तर्क के अनुसार वीणा पर स्वरों की स्थापना से तो निश्चित रुप से वर्तमान काफ़ी के ही स्वर, अहोबल के शुद्ध स्वर सिद्ध होते हैं। अतः कहा जा सकता है कि संगीत–पारिजात का शुद्ध–सप्तक वर्तमान काफ़ी के समान था।

<u>विकृत–स्वर</u> – संगीत–पारिजात ने विकृत स्वरों की संख्या 22 मानी है जो सम्भवतः किसी भी ग्रन्थकार के विकृत स्वरों की संख्या से कहीं अधिक है। संगीत–रत्नाकर में पं0 शारंगदेव ने विकृत

स्वर 12 माने हैं। यह संख्या भी पर्याप्त थी पर अहोबल ने तो विकृत स्वर 22 मान कर अपने विकृत स्वर सर्वाधिक सिद्ध कर दिए।

<u>शुद्ध अवस्था से स्वरों को ऊँचा करके</u> – षड्ज–पंचम के अतिरिक्त कोई भी शुद्ध–स्वर जिसे एक श्रुति ऊँचा होने पर तीव्र, दो श्रुति ऊँचा होने पर तीव्रतर, तीन श्रुति ऊँचा होने पर तीव्रतम और चार श्रुति ऊँचा होने पर अतितीव्रतम कहा जाएगा। ध्यान केवल यह रखना होगा कि जो स्वर चढ़ रहा है वह आगामी स्वर से आगे न निकल जाए।

<u>शुद्ध अवस्था से स्वरों को नीचा करके</u> – वर्तमान में ऋषभ, गांधार, धैवत, निषाद स्वर, शुद्ध अवस्था से नीचे होने पर कोमल होते हैं। अहोबल के यही चार स्वर शुद्ध अवस्था से एक श्रुति नीचे होने पर कोमल और यही चारों स्वर अपनी शुद्ध अवस्था से दो श्रुति नीचे होने पर पूर्व–विकृत कहलाते थे। जैसे सातवीं पर अहोबल का शुद्ध–ऋषभ, छठी पर कोमल–ऋषभ और पाँचवीं पर पूर्व–ऋषभ है। नौवीं श्रुति पर शुद्ध–गांधार, आठवीं पर कोमल–गांधार और सातवीं पर पूर्व–गांधार है। इसी प्रकार धैवत और निषाद भी एक–एक श्रुति घटने पर कोमल और दो–दो श्रुति घटने पर पूर्व–विकृत कहलाते थे। अतः चार कोमल और चार ही पूर्व कुल आठ विकृत–स्वर अपने शुद्ध अवस्था से नीचे होने पर बनते थे। इस प्रकार अहोबल ने 14 तीव्र और 8 कोमल मिलाकर 22 विकृत–स्वर कहे हैं और उन्होंने इनमें सात शुद्ध स्वरों को मिला कर कुल 29 स्वरों का उल्लेख संगीत–पारिजात में किया।

<u>मूर्च्छना व मेल</u> – मूर्च्छना तो तीनों ग्रामों की सात–सात कही हैं पर सम्पूर्ण के साथ–साथ मूर्च्छना के शाडव व औडव भेद भी कहे हैं। षड्ज–ग्राम की मूर्च्छनाओं की संख्या 18948 कही गई है।

मूर्च्छना व मेल में अन्तर यह है कि मेल, राग में लगने वाले स्वरों को बताता है तो मूर्च्छना, राग के चलन का भी बोध कराती है। मूर्च्छना में आरोह व अवरोह का होना आवश्यक है। किसी एक मेल में समान स्वरों वाली दो मूर्च्छनाओं के आरम्भिक–स्वर के अलग होने के कारण वे भिन्न–भिन्न मानी जाती हैं।

<u>वीणा पर लम्बाई के आधार पर स्वरों की स्थापना</u> – पं0 अहोबल ने वीणा के तार की लम्बाई पर स्वरों की स्थापना करके स्वरों को श्रव्य के साथ–साथ दृश्य भी बना दिया, जिससे स्वरों की स्थिति में कोई संशय नहीं रहा।

स्वरों की स्थापना के लिए अहोबल ने तार के दो या तीन भाग करके शुद्ध व विकृत सभी स्वरों को स्थापित किया है। उन्होंने पूरे खुले तार के बीच में तार–षड्ज, मध्य–षड्ज और तार–षड्ज के बीच में मध्यम, पूरे तार के तीन भाग करके मेरु की ओर से प्रथम भाग पर पंचम, मध्य–षड्ज और पंचम के तीन भाग करके मेरु की ओर से पहले भाग पर ऋषभ, मध्य–षड्ज और पंचम के बीच गांधार (वर्तमान कोमल–गांधार), पंचम और तार–षड्ज के बीच धैवत, पंचम और तार–षड्ज के तीन भाग करके पंचम की ओर से दूसरे भाग पर निषाद (वर्तमान कोमल–निषाद) की स्थापना की।

विकृत स्वरों के लिए उन्होंने षड्ज और धैवत के बीच तीव्र–गांधार, षड्ज और ऋषभ के तीन भाग करके मेरु की ओर से दूसरे भाग पर कोमल–ऋषभ, गांधार एवं तार–षड्ज के तीन भाग करके गांधार की ओर से पहले भाग पर तीव्र–मध्यम, पंचम और तार–षड्ज के तीन भाग के पंचम की ओर से पहले भाग पर कोमल–धैवत, धैवत और तार–षड्ज के तीन भाग करके धैवत की ओर से दूसरे भाग पर तीव्र–निषाद (वर्तमान शुद्ध–निषाद) की स्थापना की।

<u>रागों का विवेचन</u> – संगीत–पारिजात में 122 रागों का वर्णन दिया गया है। प्रत्येक राग के स्वर, आरोह–अवरोह, ग्रह, न्यास, मूर्च्छना के स्वर दिए गए हैं। मूर्च्छना का अर्थ, राग के स्वरकरण की प्रथम तान है। उदाहरणार्थ यहाँ राग धनाश्री का विवरण दिया जा रहा है :–

"आरोहे रि–ध–हीना स्यात् पूर्णाशुद्धस्वरैर्युता।
गांधारस्वरपूर्वा स्याद्धनाश्रीर्मध्यमान्तका इति धनाश्रीः।"

ग म प नि सां, रें सां नि ध प म, ग म प म ग रे सा,
ग म प नि प नि सां, रें सां नि सां नि ध प म इति स्वर करणम्।

इस विवरण को देखने से ज्ञात होता है कि वर्तमान धनाश्री से पर्याप्त मात्रा में अहोबल का धनाश्री मिलता है। क्योंकि अहोबल के शुद्ध गांधार–निशाद हमारे कोमल गांधार–निशाद ही हैं।

<u>रागों का रसों से सम्बन्ध</u> – रागों का रसों से सम्बन्ध तो सभी प्राचीन ग्रन्थकारों ने जोड़ा ही है पर अहोबल ने एक नवीन विधि से रागों को रसों से सम्बन्धित किया है।

श्रुतियों की दीप्ता, करुणा, मध्या, मृदु व आयता ये पाँच जातियाँ कही गई हैं। जो श्रुति जिस राग में अंश बनती है, उस श्रुति की जो जाति है वही राग का रस होता है।

22 श्रुतियों में तीव्रा, कुमुद्धती, मन्दा, छन्दोवती आदि श्रुतियों के नाम कहे गए हैं। इन श्रुतियों की पाँच जातियाँ दीप्ता, आयता, मध्या, करुणा व मृदु जातियाँ सभी प्राचीन ग्रन्थकार कहते चले आए हैं। पं0 अहोबल ने इन जातियों का सम्बन्ध रागों के रसों से जोड़ा है। दीप्ता जाति की श्रुतियाँ तीव्रा, रौद्री, वज्रिका और उग्रा हैं। आयता जाति की कुमुद्वती, क्रोधा, प्रसारिणी, सन्दीपनी व रोहिणी हैं। करुणा जाति की दयावती, आलापिनी व मदन्ती हैं। मृदु जाति की मन्द्रा, रक्तिका, प्रीति व क्षिति हैं। मध्या जाति की छन्दोवती, रंजनी, मार्जनी, रक्तिका, रम्या व क्षोभिणी हैं।

अभ्यास प्रश्न

---

1. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए :–

(क) नारदीय शिक्षा में........................ प्रपाठक हैं।
(ख) संगीत मकरंद में 6 राग एवं........................रागिनियाँ बताई गई हैं।
(ग) संगीत रत्नाकर में कुल...................अध्याय हैं।
(घ) चतुर्दण्डी प्रकाशिका ग्रंथ सन्.......................ई0 में लिखा गया।
(ड.) संगीत परिजात का शुद्ध सप्तक आधुनिक............................के समान था।
(च) संगीतांजलि ग्रंथ कुल.......................भागों में विभाजित है।

2. सत्य/असत्य बताइए :–

(क) नारदीय शिक्षा ग्रंथ में कुल 208 श्लोक संकलित हैं।
(ख) नारद ने संगीत मकरंद ग्रंथ दसवीं शताब्दी में लिखा था।
(ग) संगीत रत्नाकर में 14 विकृत स्वरों का वर्णन किया गया है।
(घ) चतुर्दण्डी ग्रंथ में तीन प्रकार की वीणा का उल्लेख प्राप्त होता है।

(ड.) संगीत पारिजात में कुल 122 रागों का वर्णन मिलता है।
(च) संगीतांजलि ग्रंथ के तीसरे भाग में रागों का समय निर्धारण किया गया है।

3. अति लघु उत्तरीय प्रश्न :–

(क) नारदीय शिक्षा में कितने ग्राम रागों का उल्लेख प्राप्त होता है ?
(ख) संगीत मकरंद में षड्ज स्वर की किस पक्षी से तुलना की गई है ?
(ग) संगीत रत्नाकर में कुल कितने रागों का वर्णन मिलता है ?
(घ) पं0 व्यंकटमुखी ने सर्वाधिक कितने मेल बताए हैं ?
(ड.) पं0 अहोबल के शुद्ध एवं विकृत मिलाकर कुल कितने स्वर बताए हैं ?
(च) संगीत चितांमणि के अनुसार ग्रामणी स्वर का किस श्रुति पर होना अनिवार्य है ?

4. लघु उत्तरीय प्रश्न :–

(क) नारदीय शिक्षा में वर्णित श्रुति व्यवस्था को संक्षेप में बताइये।
(ख) संगीत रत्नाकर के प्रबन्धाध्याय का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
(ग) पं0 व्यंकटमुखी के स्वर प्रकरण को संक्षेप में समझाइये।
(घ) संगीत पारिजात में वर्णित शुद्ध एवं विकृत स्वरों को बताइये।
(ड.) संगीत मकरंद में स्वरों की तुलना किन पशु–पक्षियों से की गई है ? बताइए।
(च) संगीत चिंतामणी में वर्णित भारतीय वाद्य परम्परा को संक्षेप में समझाइये।

3.11 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके हैं कि धरती पर सदियों वर्ष पूर्व से लेकर भरत काल तक एवं छठी–सातवी शताब्दियों से मध्यकाल तक सभ्यता के सभी युगों में संगीत की उन्नत अवस्था का परिचय प्राप्त होता है, जिसमें गायन, वादन, नृत्य और नाट्य को आवश्यकतानुसार महत्व एवं प्रश्रय प्राप्त था। अतः विभिन्न कालों में लिखित ग्रन्थों में जो संगीत के सिद्धान्त और नियम बताए गए हैं वे अब भी मान्य हैं। परन्तु इस पद्धति का विस्तृत पालन वर्तमान में नहीं होता है। प्राचीन कालीन ग्रंथ नारदीय शिक्षा एवं संगीत मकरंद में संगीत शास्त्र से संबंधित मूलभूत तत्वों तथा सामगान का विशेष उल्लेख है। मध्यकालीन ग्रंथ संगीत रत्नाकर एवं चर्तुदण्डिप्रकाशिका एवं संगीत–पारिजात में प्राप्त सामग्री का वर्तमान से जुड़े विभिन्न सांगीतिक तत्वों से विशेष रुप से संबंध स्थापित किया जा सकता है। आधुनिक कालीन ग्रंथ संगीतांजलि एवं संगीत चिन्तामणि प्रयोगात्मक दृष्टि से वर्तमान में सभी स्तर के शिक्षार्थियों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। संगीत शास्त्र सम्बन्धी विशिष्ट जानकारी जो हमें प्राचीन एवं मध्यकालीन ग्रन्थों में प्राप्त होती है उन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर आज भी पूरी सांगीतिक व्यवस्था टिकी हुई है। प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इकाई में दिए गए संगीत ग्रन्थों में वर्णित संगीत सम्बन्धित पहलुओं से भी अवगत हो चुके होंगे।

3.12 शब्दावली

1. **नादात्मक** – मधुर स्वर से परिपूर्ण ध्वनि।
2. **द्विश्रुतिक, त्रिश्रुतिक एवं चतुर्श्रुतिक** – भारतीय शास्त्रीय संगीत में सात स्वर विभिन्न श्रुतियों पर स्थापित माने गये हैं। प्राचीन समय से 22 श्रुतियों का प्रचलन था। प्रत्येक स्वर की श्रुतियाँ भिन्न–भिन्न हैं। जैसे षड़ज एवं पंचम, चतुर्श्रुतिक है; गन्धार एवं निशाद, त्रिश्रुतिक तथा धैवत एवं ऋषभ, द्विश्रुतिक है।
3. **जाति गायन** – जिस प्रकार वर्तमान में राग गायन प्रचलित है, उसी प्रकार प्राचीन समय में जाति गायन का प्रचलन था।
4. **श्रुति** – कानों से सुनी जा सकने वाली सूक्ष्म ध्वनि।
5. **ग्राम–मूर्च्छना** – निश्चित सप्तक के सात स्वर समूहों के भाग को ग्राम कहते हैं। सप्तक में क्रमानुसार पॉच, छः या सात स्वरों का विशेष क्रमयुक्त प्रयोग मूर्च्छना कहलाता है।
6. **गन्धर्व एवं गान** – यह मार्ग–देशी संगीत का प्राचीन स्वरूप है। प्रथम ईश्वर प्राप्ति तथा दूसरा जन–रंजन के लिए है।
7. **ग्रह एवं अंश स्वर** – संगीत रचना का सबसे प्रारम्भिक स्वर ग्रह स्वर है तथा इसके पश्चात महत्वपूर्ण स्वर अंश स्वर है।

2.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए :–

(क) नारदीय शिक्षा में..........**2**............. प्रपाठक हैं।
(ख) संगीत मकरंद में 6 राग एवं............**36**...........रागिनियाँ बताई गई हैं।
(ग) संगीत रत्नाकर में कुल........**सात**...........अध्याय हैं।
(घ) चतुर्दण्डी प्रकाशिका ग्रंथ सन्......**1620**................ई0 में लिखा गया।
(ड.) संगीत परिजात का शुद्ध सप्तक आधुनिक......**काफ़ी**......................के समान था।
(च) संगीतांजलि ग्रंथ कुल.......**6**................भागों में विभाजित है।

2. सत्य/असत्य बताइए :–

(क) नारदीय शिक्षा ग्रंथ में कुल 208 श्लोक संकलित हैं।	**असत्य**
(ख) नारद ने संगीत मकरंद ग्रंथ दसवीं शताब्दी में लिखा था।	**असत्य**
(ग) संगीत रत्नाकर में 14 विकृत स्वरों का वर्णन किया गया है।	**असत्य**
(घ) चतुर्दण्डी ग्रंथ में तीन प्रकार की वीणा का उल्लेख प्राप्त होता है।	**सत्य**
(ड.) संगीत पारिजात में कुल 122 रागों का वर्णन मिलता है।	**सत्य**
(च) संगीतांजलि ग्रंथ के तीसरे भाग में रागों का समय निर्धारण किया गया है।	**सत्य**

3. अति लघु उत्तरीय प्रश्न :–

(क) सात
(ख) मयूर

(ग) 264
(घ) 72
(ङ.) 29
(च) चतुश्श्रुतिक

3.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. चौधरी, सुभाष रानी, *संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त*(2002), कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
2. परांजपे, डॉ0 शरच्चन्द्र श्रीधर, *संगीत बोध*(1992), मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3. गर्ग, डॉ0 लक्ष्मी नारायण, *राग विशारद भाग–1*(2001), संगीत कार्यालय, हाथरस।
4. भातखण्डे, पं0 विष्णु नारायण, *उत्तर भारतीय संगीत का संक्षिप्त इतिहास*(1966), संगीत कार्यालय, हाथरस।
5. ठाकुर, पं0 ओमकारनाथ, *संगीतांजलि*(1938), पं0 ओमकार नाथ मेमोरियल ट्रस्ट, मुम्बई।
6. बृहस्पति, आचार्य, *संगीतचिन्तामणि*(1966) भाग–1, बृहस्पति पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।

3.15 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. बसन्त, संगीत विशारद(1997), संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. गोबर्धन, डॉ0 शान्ति, संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2 (1989), पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. पाठक, पं0 जगदीश नारायण, संगीत शास्त्र प्रवीण(1995), पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।

3.16 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पण्डित अहोबल रचित संगीत पारिजात ग्रंथ का विस्तार पूर्वक विवेचन कीजिए।
2. मध्यकालीन ग्रन्थ 'संगीत–रत्नाकर' के विषय में एक निबन्ध लिखिये।

इकाई 4 – संगीत संबंधी विषयों पर निबन्ध लेखन

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 निबन्ध की व्याख्या
4.4 निबन्ध के अवयव
    4.4.1 भूमिका
        3.4.1.1 संगीत शिक्षा विषय की भूमिका
    4.4.2 विषय वस्तु
        4.4.2.1 गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा
        4.4.2.2 संगीत संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षा
        4.4.2.3 विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में संगीत शिक्षा
    4.4.3 उपसंहार –संगीत शिक्षा विषय पर
4.5 सारांश
4.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.7 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, चतुर्थ सेमेस्टर (एम0पी0ए0एम0वी0–606) पाठ्यक्रम की चौथी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को जान चुके होंगे। आप भारतीय संगीत के ग्रन्थों का ज्ञान भी प्राप्त कर चुके होंगे।

इस इकाई में निबन्ध लेखन के विषय में आपको कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों से अवगत कराया जाएगा। निबन्ध लिखते समय किन–किन बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है यह भी इस इकाई में वर्णित है।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप निबन्ध लेखन की विधि तथा निबन्ध लेखन के अवयवों से परिचित होंगे। आप किसी भी विषय पर निबन्ध लिखने में सक्षम हो सकेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- निबन्ध लेखन के अवयवों का सही प्रयोग कर सकेंगे।
- अपनी लेखन शैली का विकास कर सकेंगे।
- किसी भी विषय में आप व्यवस्थित रूप से निबन्ध प्रस्तुत कर सकेंगे।

4.3 निबन्ध की व्याख्या

निबन्ध के विषय में आपने पूर्व में काफी सुना है तथा प्राथमिक कक्षाओं से ही निबन्ध लेखन का अभ्यास कराया जाता है। प्रत्येक स्तर पर निबन्ध का स्तर भी पृथक होता है। निबन्ध किसी विषय विशेष की समग्र रूप में व्यवस्थित व्याख्या है। निबन्ध में विषय से सम्बन्धित समस्त पहलुओं पर विचार प्रस्तुत किये जाते हैं। अतः निबन्ध में विषय की व्याख्या का स्वरूप व्यापक हो जाता है। विषय से सम्बन्धित पूर्व की उपलब्ध जानकारी को निबन्ध में समाहित कर उसका विश्लेषण किया जाता है और लेखक समालोचना के लिए भी स्वतंत्र रहता है। निबन्ध के माध्यम से लेखक व्याप्त भ्रान्तियों को भी दूर करने की चेष्टा करता है। इसी सन्दर्भ में निबन्ध और लेख के अन्तर को भी समझने की आवश्यकता है।

लेख प्रायः समस्या को लेकर आरम्भ किया जाता है एवं समस्या का निराकरण ही किसी लेख का मूल उद्देश्य रहता है। विद्यालय स्तर पर आपको दृश्यों का ऑखों देखा वर्णन निबन्ध के रूप में लेखन का अभ्यास करवाया गया है। परन्तु विश्वविद्यालय स्तर पर निबन्ध, विषय से ही सम्बन्धित रहता है और उस विषय के बारे में आपको समस्त जानकारी और यदि आवश्यक हो तो गुण–दोष के साथ प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। लेख सामान्य विषय पर वक्तव्य रूप में रहता है। निबन्ध लेखन अभ्यास से ही आप लेख लिखने एवं शोध पत्र लिखने में भी सक्षम हो जाते हैं। अतः निबन्ध लेखन के अभ्यास से आपकी लेखन क्षमता बढ़ती है और आप अपने विचारों को कलम के माध्यम से प्रस्तुत करने की तकनीक भी विकसित कर पाते हैं। इस इकाई में स्नातकोत्तर स्तर के विषयों के निबन्ध की लेखन विधि पर चर्चा की जाएगी।

4.4 निबन्ध के अवयव

किसी भी विषय पर निबन्ध को प्रायः निम्न भागों में बॉटकर विषय की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं:

1. भूमिका 2. विषयवस्तु 3. उपसंहार

<u>3.4.1 भूमिका</u> – इसके अन्तर्गत विषय के बारे में जानकारी देते हुए व्याख्या के अन्तर्गत आने वाले सन्दर्भों के बारे में बताते हैं। भूमिका के माध्यम से निबन्ध का स्वरूप पता चल जाता है। व्याख्या किन–किन बिन्दुओं पर केन्द्रित होनी है इसका संक्षिप्त परिचय भी भूमिका के माध्यम से दिया जाता है। भूमिका में विषय प्रवेश प्रस्तुत किया जाता है अर्थात विषय क्या है एवं विषय पर निबन्ध के माध्यम से हम विषय के सन्दर्भ में क्या–क्या चर्चा करेंगे।

उदाहरण के रूप में संगीत शिक्षा विषय के माध्यम से आपको निबन्ध की लेखन शैली से परिचित कराएंगे।

<u>4.4.1.1 संगीत शिक्षा विषय पर भूमिका</u> – प्राचीन काल से ही संगीत का सन्दर्भ हमें सामवेद से प्राप्त होता है तथा वैदिक समय में ऋचाओं के गान की शिक्षा गुरूमुख से देने की परम्परा थी और इस परम्परा का निर्वाह काफी समय तक रहा। संगीत का वास्तविक स्वरूप क्रियात्मक है। अतः इसकी शिक्षा भी क्रियात्मक रूप में देने से ही संगीत का स्वरूप स्पष्ट हो पाता है। यद्यपि संगीत से सम्बन्धित अवयवों की व्याख्या समय–समय पर विभिन्न संगीत मनीषियों के द्वारा दी जाती रही है परन्तु संगीत को क्रियात्मक स्वरूप में प्रस्तुत करने के लिए शिष्य को गुरूमुख से ही शिक्षा ग्रहण करनी होती थी, जिसके लिए गुरूकुल की व्यवस्था रहती थी। वर्तमान में संगीत शिक्षा का स्वरूप

बदल चुका है जिसकी चर्चा आगे की जाएगी। संगीत को विषय के रूप में समझा जाने लगा है जिससे उसकी शिक्षा भी उसी के अनुरूप होने लगी है। जबकि संगीत को कला के रूप में ही समझने की आवश्यकता है। वर्तमान में संगीत हेतु शिक्षा के विभिन्न माध्यमों का अध्ययन कर उनके गुण दोष पर इस निबन्ध के माध्यम से विचार किया जाएगा।

संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध की भूमिका उदाहरण स्वरूप आपके लिए प्रस्तुत की गई है जिससे आप किसी भी विषय पर निबन्ध हेतु भूमिका लिखने में सक्षम हो पाएंगे।

4.4.2 विषयवस्तु – भूमिका के पश्चात निबन्ध के विषय की विषयवस्तु प्रस्तुत की जाती है जिसमें विषय से सम्बन्धित सभी सन्दर्भों को प्रस्तुत किया जाता है। किसी विषय पर विषयवस्तु किस प्रकार लिखी जाती है इसका ज्ञान संगीत शिक्षा विषय पर उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत विषयवस्तु से जान सकेंगे।

संगीत शिक्षा विषय की विषयवस्तु – पहले संगीत की शिक्षा गुरूमुख से ही प्राप्त की जाती थी। परन्तु बाद में संगीत शिक्षा के नये स्वरूप भी स्थापित हुए। संगीत शिक्षा के स्वरूप निम्न प्रकार से हैः

1. गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा।
2. संगीत संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षा।
3. विद्यालयों एव विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत शिक्षा।

4.4.2.1 गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा – संगीत की शिक्षा शिष्य द्वारा गुरू के पास रहकर ही प्राप्त की जाती थी। इस शिक्षा पद्धति में शिष्य को अनुशासित होकर शिक्षा प्राप्त करनी होती थी। गुरू द्वारा शिष्य की लगन, धैर्य आदि को परखकर शिष्य को स्वीकार किया जाता था। गुरू द्वारा शिष्य को स्वीकार करने के पश्चात शिष्यत्व की औपचारिक घोषणा 'गंडा रस्म' अदायगी के साथ होती थी। इसमें गुरू और शिष्य एक दूसरे को 'धागा' बाँधकर प्रतिबद्धता का संकल्प लेते थे। इस प्रकार की शिक्षा में कोई निश्चित पाठ्यक्रम नहीं होता था और न ही संगीत शिक्षा की समयावधि निश्चित होती थी। गुरू द्वारा शिष्य की क्षमता के आधार पर ही शिक्षा दी जाती थी। एक ही गुरू के कई शिष्य होते थे, परन्तु यह आवश्यक नहीं था कि सबको एक ही शिक्षा दी जाए। दी हुई संगीत शिक्षा का अभ्यास भी गुरू के निर्देशन में ही होता था। संगीत शिक्षा के अतिरिक्त संगीत सुनने का मार्ग निर्देशन का उद्देश्य यह था कि शिष्य अपना विवेक एवं धैर्य ना खो बैठे। इस प्रकार की शिक्षा में धैर्य का बहुत महत्व था और लगन से गुरू द्वारा दिये गये अभ्यास के नियमों से कठिन अभ्यास करने की आवश्यकता होती थी। गुरू जब तक शिष्य को कार्यक्रम प्रस्तुत करने के अनुकूल नहीं समझता था तब तक शिष्यों को कार्यक्रम प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं होती थी। बल्कि शिष्य को कार्यक्रम के योग्य समझने के पश्चात ही शिष्य को संगीतकारों के मध्य प्रस्तुत किया जाता था जिससे वह सभी संगीतज्ञों का आशीर्वाद प्राप्त करें। इस प्रकार की संगीत शिक्षा में शिष्य, गुरू के सानिध्य में संगीत के गूढ़ रहस्यों को जानता था। संगीत में घराने स्थापित हुए एवं घरानों की शिक्षा इस संगीत शिक्षा पद्धति में ही सम्भव थी। शिष्य अपने गुरू के घराने से सम्बन्धित हो जाता था और उस घराने का प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में अपना गौरव समझता था।

<u>4.4.2.2 संगीत संस्थानों द्वारा संगीत शिक्षा</u> – आधुनिक समय में संगीत संस्थानों का महत्व बढ़ गया है। पंडित विष्णु नारायण भातखण्डे एवं विष्णु दिग्बर पलुस्कर ने संगीत शिक्षा का प्रचार इस प्रकार किया जिससे संगीत क्रियात्मक रूप में विकसित होने लगा। गुरूमुख शिक्षा पद्धति में बहुत कम लोग ही शिक्षा प्राप्त कर पाते थे। अतः दो संगीत मनीषियों ने संगीत के अधिक प्रचार एवं प्रसार हेतु संगीत संस्थानों की कल्पना की। पंडित विष्णु नारायण भतखण्डे द्वारा लखनऊ में 'मैरिस कालेज आफ म्यूजिक' एवं विष्णु दिगम्बर पलुस्कर द्वारा पूना में 'गन्धर्व मंडल' की स्थापना की गई जिसके अन्तर्गत देश के कई शहरों में 'गन्धर्व संगीत महाविद्यालय' के नाम से संगीत शिक्षण संस्थान खोले गये। यह संगीत शिक्षण की औपचारिक व्यवस्था का आरम्भ था। इन संस्थानों में प्रत्येक वर्ष के लिए पाठ्यक्रम निश्चित किये गये तथा वर्ष के अन्त में परीक्षा की भी व्यवस्था की गई। इन संस्थानों में संगीत के गुणीजन, गुरू अथवा उस्तादों को संगीत शिक्षा हेतु आमंत्रित किया गया और इनके लिए किसी प्रकार के औपचारिक प्रमाण–पत्रों की बाध्यता नहीं रखी गई।

संगीत के विद्यार्थियों को परीक्षा में सफल होने पर औपचारिक प्रमाण–पत्र देने की व्यवस्था भी की गई। संगीत की हर विधा और हर अंग के लिए विशेषज्ञ रखे गये। प्रतिदिन संगीत शिक्षा का समय भी निर्धारित किया गया तथा अन्य संस्थानों की भाँति इन संस्थानों में भी उत्सव एवं त्यौहारों पर अवकाश का प्रावधान था। जबकि गुरूमुख शिक्षा पद्धति में इस प्रकार की व्यवस्था नहीं रहती थी और शिष्य को गुरू के पास रहकर ही सीखना होता था और गुरू द्वारा शिष्य को किसी समय भी शिक्षा के लिए बुला लिया जाता था जिसमें शिष्य को उपस्थित होना आवश्यक होता था। संगीत संस्थानों की शिक्षा में शिष्य, गुरू के सानिध्य में निश्चित समय के लिए ही रहता है और प्राप्त की गई शिक्षा का अभ्यास स्वयं घर पर ही करता है। संगीत संस्थानों की शिक्षा पद्धति में गुरू का शिष्य के ऊपर नियंत्रण गुरूमुखी शिक्षा पद्धति की अपेक्षा कम रह पाता है। प्रारम्भ में इन संस्थानों में संगीत की शिक्षा हेतु पाँच–छः वर्षो का पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया। संस्थानों में पाँच–छः वर्ष की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त भी यह माना गया कि इसके पश्चात भी शिष्य को गुरू के सानिध्य की निरन्तर आवश्यकता रहती है। इन दो संस्थानों की स्थापना के पश्चात प्रयाग (इलाहाबाद) में 'प्रयाग संगीत समिति' एवं पंजाब के चंडीगढ़ क्षेत्र में प्राचीन कला संगीत संस्थान की स्थापना हुई। इन सभी संस्थानों ने देश के भिन्न–भिन्न शहरों में अपने केन्द्र स्थापित किये और इन केन्द्रों पर शिक्षा का प्रचार हुआ एवं विद्यार्थियों को प्रमाण–पत्र मिलने लगे।

गुरूमुखी शिक्षा में गुरू एवं शिष्य दोनों का ही लक्ष्य कलाकार बनना तथा बनाना होता था जिसके लिए शिष्य द्वारा अनुशासित अभ्यास किया जाता था और संगीत ही एकमात्र लक्ष्य रहता था। संगीत संस्थानों में ऐसे भी विद्यार्थी शिक्षा लेते थे जिनका लक्ष्य केवल संगीत ही नहीं होता था बल्कि वे संगीत की शिक्षा शौकिया रूप में लेते थे। अतः संगीत संस्थानों में संगीत के विद्यार्थियों को समूह में एकरूपता नहीं रहती थी। गुरू द्वारा भी एक ही कक्षा के समस्त विद्यार्थियों को लगभग एक जैसी ही शिक्षा दी जाती थी जो कि संस्थानों के शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता एवं सीमा भी थी। अतः संगीत संस्थानों से शिष्य उस प्रकार की शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते थे जिस प्रकार की शिक्षा गुरू–शिष्य परम्परा पद्धति में प्राप्त होती थी। संगीत संस्थानों का उद्देश्य संगीत शिक्षा के माध्यम से संगीत का प्रचार एवं प्रसार था और यह सामान्य रूप से संस्थानों के उद्देश्य के बारे में कहा जाता था कि संस्थान तानसेन नहीं तो कानसेन तो बना ही देते हैं। अर्थात संगीत कलाकार ना भी बन पायें तो संगीत का एक अच्छा श्रोता तो बन ही जाता है। इन संगीत संस्थानों ने विभिन्न शहरों में अपने परीक्षा केन्द्र खोले जहाँ पर संगीत शिक्षा देने का भी प्रावधान किया गया तथा विद्यार्थी इन केन्द्रों से

संगीत सीखकर प्रमाण—पत्र प्राप्त करने लगे। इन प्रमाण—पत्रों को सरकार के शिक्षा निदेशालय द्वारा मान्यता भी प्रदान की गई।

विद्यालयों में बिना इन संस्थानों के प्रमाण—पत्र के नियुक्तियाँ नहीं होती हैं। विद्यालय स्तर पर शिक्षक के लिए अन्य विषयों में बी. एड. अनिवार्य अर्हता है परन्तु संगीत विषय में शिक्षक होने के लिए बी.एड. के स्थान पर 'संगीत विशारद' एवं 'संगीत प्रभाकर' होना आवश्यक है जो कि इन संस्थानों द्वारा दिया गया प्रमाण पत्र है। इस व्यवस्था से इन केन्द्रों पर संगीत के प्रमाण—पत्र प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों की भीड़ बढ़ गई। इन संगीत संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात कलाकार बनने के इच्छुक विद्यार्थियों को गुरू—शिष्य परम्परा के अन्तर्गत ही शिक्षा लेना अनिवार्य रहता है। इन संस्थानों द्वारा सामान्य संगीत के जिज्ञासु एवं विद्यार्थियों ने संगीत के प्रचार—प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

4.4.2.3 विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत शिक्षा – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत विषय अन्य विषयों की भाँति पाठ्यक्रम में शामिल किया गया। विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में संगीत विषय का पाठ्यक्रम तैयार कर समय—सारिणी में इसका वादन (पीरियड) शिक्षण के लिए निश्चित किया गया। इनमें शिक्षण पाठ्यक्रम के अनुसार ही दिया जाता है और अध्यापक द्वारा सब विद्यार्थियों को समान रूप से ही अध्यापन कराया जाता है। स्नातक स्तर तक एक वादन प्रायः 45 मिनट का होता है जो कि संगीत की व्यवहारिकता के अनुकूल नहीं है क्योंकि 45 मिनट के अन्दर ही वाद्यों को स्वर में करना सम्भव नहीं हो पाता है। अतः देखा जा रहा है कि विश्वविद्यालय स्तर पर भी संगीत की मूल आवश्यकता वाद्यों को स्वर में करना विद्यार्थी पूर्ण रूप से नहीं सीख पाते हैं। स्नातक स्तर तक विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों को संगीत विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों का भी अध्ययन करना होता है अतः विद्यार्थी संगीत के प्रति पूर्ण समर्पित नहीं हो पाता है। संगीत के लिए अधिक समय की आवश्यकता होती है, जिसमें अधिक से अधिक समय देने से ही संगीत कला को समझा जा सकता है।

विद्यालय, विश्वविद्यालय में संगीत विषय प्रारम्भ होने से संगीतज्ञों को व्यवसाय तो प्राप्त हुआ परन्तु इससे संगीत शिक्षा की गुणात्मकता पर प्रभाव पड़ा। यद्यपि विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत के विद्वान भी नियुक्त हुए परन्तु इन संस्थानों की व्यवस्था में उतने समय के लिए संगीत शिक्षक भी सीमा में बँध गये। गुरू—शिष्य परम्परा पद्धति में शिष्य पूर्ण रूप से संगीत के वातावरण में रहता था और संगीत संस्थानों में भी जितने समय के लिए वह संस्थान में है उतने समय तक वह संगीत के वातावरण में रहता था है। परन्तु विद्यालय और विश्वविद्यालय में विद्यार्थी केवल संगीत के वादन(पीरियड) में ही संगीत के वातावरण से जुड़ा रहता है। विद्यालयों, विश्वविद्यालयों से उपाधि सामान्य रूप में मिलती है जिसमें संगीत एक विषय के रूप में रहता है, जबकि संगीत संस्थानों में मिलने वाली उपाधि एवं प्रमाण पत्र केवल संगीत का ही मिलता है। गुरू—शिष्य परम्परा में तो कोई औपचारिक प्रमाण—पत्र नहीं होता है, इसमें शिष्य स्वयं अपनी शिक्षा का प्रमाण प्रस्तुत करता है। विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों में संगीत विषय की शिक्षा, स्नातकोत्तर उपाधि के लिए दी जाने लगी है जिसमें केवल संगीत विषय का ही अध्ययन विद्यार्थी को करना होता है।

विश्वविद्यालय स्तर पर केवल स्नातकोत्तर कक्षाओं में ही विद्यार्थी संगीत के वातावरण में रहता है जो मात्र दो वर्ष के पाठ्यक्रम में निबद्ध होता है। संगीत शिक्षा की गुणात्मकता स्नातकोत्तर स्तर पर ही हो पाती है जिसका स्वरूप संगीत संस्थानों की शिक्षा जैसा रहता है। स्नातकोत्तर

कक्षाओं में विद्यार्थियों को संगीत के अध्ययन और अभ्यास का समय प्राप्त होता है। विश्वविद्यालय स्तर पर स्नातक की कक्षाओं में संगीत विषय का विद्यार्थी सीमित समय जो कि उसके लिए समय सारिणी में निश्चित किया गया उसमें ही संगीत शिक्षक के सम्पर्क में रहता है। इसी उपलब्ध समय में शिक्षक का उद्देश्य निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा करने का भी होता है। अतः गुरू–शिष्य परम्परा पद्धति एवं संगीत संस्थान द्वारा शिक्षा पद्धति की तुलना में विश्वविद्यालय द्वारा दी जाने वाली संगीत शिक्षा की गुणवत्ता में कमी रहती है। स्नातकोत्तर में भी यही स्थिति रहती है परन्तु इसमें विद्यार्थी तथा शिक्षक के पास संगीत विषय के लिए अधिक समय रहता है।

संगीत के जिज्ञासु विद्यार्थी विश्वविद्यालय शिक्षा के अतिरिक्त संगीत संस्थानों एवं गुरू की सहायता भी प्राप्त करते हैं। संगीत में शिक्षक बनने हेतु विश्वविद्यालय प्रमाण–पत्र की आवश्यकता होती है अतः विद्यार्थी संगीत हेतु विश्वविद्यालय में प्रवेश लेता है। विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को संगीत पढ़ाना उद्देश्य है। केवल विश्वविद्यालय की संगीत शिक्षा से विद्यार्थी का कलाकार बनना कठिन है और ना ही विश्वविद्यालय का यह उद्देश्य ही है। विश्वविद्यालय में विषय से सम्बन्धित आयामों से विद्यार्थी को परिचित कराया जाता है जिससे वह भविष्य के लिए अपने विकल्प चुन सके।

विश्वविद्यालय की उपाधि प्रमाण–पत्र का महत्व संगीत की शिक्षक अर्हता के रूप में ही है। व्यवसायिक कलाकार बनने में इसका कोई महत्व नहीं है। विद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षक हेतु अर्हताएं एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षक हेतु अर्हताएं व्यवहारिक नहीं है, जिससे इनमें सदैव योग्य संगीत शिक्षक नियुक्त नहीं हो पाते हैं। संगीत विषय मुख्य रूप से क्रियात्मक विषय है परन्तु नैट की परीक्षा विश्वविद्यालय में संगीत शिक्षक के लिए पास करना अनिवार्य अर्हता है। परन्तु इस परीक्षा में संगीत विषय हेतु विद्यार्थी के क्रियात्मक ज्ञान को नहीं परखा जाता है जबकि संगीत विषय के शिक्षक के लिए क्रियात्मक ज्ञान होना आवश्यक है।

अभी तक आपने संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध हेतु भूमिका एवं विषय वस्तु का अध्ययन किया जो कि निबन्ध लेखन के लिए उदाहरण स्वरूप आपको बताया गया। किसी विषय के निबन्ध पर उपसंहार लिखने के विषय में आप संगीत शिक्षा विषय निबन्ध पर नीचे लिखे गये उपसंहार से समझेंगे।

<u>4.4.3 उपसंहार–संगीत शिक्षा विषय पर</u> – संगीत शिक्षा गुरू–शिष्य परम्परा, संगीत संस्थानों के माध्यम से एवं विद्यालय व विश्वविद्यालय में एक विषय के रूप में दी जाती है। गुरू–शिष्य परम्परा में गुरू और शिष्य के मध्य अटूट सम्बन्ध बन जाता है और शिष्य, गुरू के सानिध्य में रहकर संगीत के गूढ़ रहस्यों को सीखता है। इसमें गुरू एवं शिष्य दोनों का उद्देश्य कलाकार बनाना तथा बनना होता है। संगीत संस्थानों में भी केवल संगीत शिक्षा दी जाती है जिसमें विद्यार्थी सीमित समय के लिए ही गुरू के सम्पर्क में रहता है और विश्वविद्यालय शिक्षा में स्नातक स्तर पर तो बहुत ही कम समय के लिए विद्यार्थी संगीत के वातावरण में रहता है। परन्तु संगीत शिक्षक बनने हेतु संस्थानों एवं विश्वविद्यालय में प्रमाण–पत्रों की आवश्यकता होती है।

संगीत के जिज्ञासु विद्यार्थियों के लिए यह आवश्यक है कि वह संस्थानों की शिक्षा अथवा विश्वविद्यालय की शिक्षा के साथ गुरू–शिष्य परम्परा पद्धति में भी किसी गुरू से शिक्षा प्राप्त करें जिससे उसके पास संगीत शिक्षक का व्यवसाय अथवा व्यवसायिक कलाकार बनने का विकल्प रहेगा। उपरोक्त कथन से यह निष्कर्ष न निकाला जाए कि विश्वविद्यालय संगीत शिक्षा से ही अच्छा संगीत शिक्षक बन सकता है। जबकि संगीत की सही शिक्षा प्राप्त ही अच्छा शिक्षक बनेगा। वर्तमान व्यवस्था

में संगीत शिक्षक हेतु सभी माध्यमों का अपना महत्व है अतः विद्यार्थी को अपने निश्चित उद्देश्य के लिए इनका चयन करने की आवश्यकता है।

संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध के माध्यम से आपने निबन्ध लेखन के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। कुछ अन्य संगीत सम्बन्धित विषयों की सूची दी जा रही है।

अभ्यास हेतु निबन्ध के विषयः–

1. फिल्मों में संगीत
2. संगीत में इलक्ट्रोनिक उपकरण का योगदान
3. लोकसंगीत एवं शास्त्रीय संगीत
4. भक्ति एवं संगीत
5. संगीत एवं आध्यात्म
6. संगीत एवं संचार माध्यम (रेडियो व टी. वी.)
7. संगीत में अवनद्य वाद्यों की भूमिका
8. संगीत गोष्ठी

जैसा कि आपको बताया जा चुका है प्रत्येक विषय के निबन्ध का आरम्भ भूमिका से किया जाता है और निबन्ध का समापन उपसंहार से किया जाता है। उपरोक्त विषयों की विषयवस्तु नीचे दी जा रही है जिसके आधार पर आप इन विषयों पर निबन्ध लिख सकेंगे।

1. फिल्मों में संगीत

विषयवस्तु
फिल्म में संगीत का प्रयोग
पार्श्व गायन
फिल्म में वाद्यों का प्रयोग
गायन के साथ वाद्यों का प्रयोग
पार्श्व संगीत में वाद्यों का प्रयोग
फिल्मों में संगीत का स्थान एवं उपयोगिता

2. संगीत में इलक्ट्रोनिक उपकरणों का योगदान

विषयवस्तु
संगीत में प्रयोग होने वाले इलक्ट्रोनिक उपकरण
(अ) इलक्ट्रोनिक तानपुरा
(ब) इलक्ट्रोनिक तबला
(स) इलक्ट्रोनिक लहरा मशीन
संगीत के संरक्षण एवं शिक्षा में सहायक इलक्ट्रोनिक उपकरण
1. ग्रामोफोन 2. टेपरिकार्डर

3. लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत

विषयवस्तु
लोक संगीत की पृष्ठभूमि
शास्त्रीय संगीत का परिचय
लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत का सम्बन्ध

4. भक्ति एवं संगीत

विषयवस्तु
भक्ति की व्याख्या
विभिन्न धर्मों में भक्ति हेतु संगीत का प्रयोग
1. हिन्दू 2. मुस्लिम 3. सिख 4. इसाई

5. संगीत एवं आध्यात्म
विषयवस्तु
संगीत की उत्पत्ति
वैदिक कालीन संगीत
आध्यात्म में संगीत का महत्व

6. संगीत एवं संचार माध्यम
विषयवस्तु
रेडियो में संगीत
टेलीविजन में संगीत
रेडियो तथा टेलीविजन का संगीत के प्रचार–प्रसार में भूमिका

7. संगीत में अवनद्य वाद्य की भूमिका
विषयवस्तु
संगीत का परिचय
संगीत के तत्व
संगीत के अवनद्य वाद्य
संगीत में अवनद्य वाद्यों का प्रयोग

8. संगीत गोष्ठी
विषयवस्तु
संगीत गोष्ठी का परिचय
संगीत गोष्ठी में कलाकार की भूमिका
विभिन्न प्रकार की संगीत गोष्ठी
संगीत गोष्ठी के श्रोता

उपरोक्त कुछ विषय आपके निबन्ध लेखन के अभ्यास के लिए दिए गए हैं। इन सभी विषयों पर आप निबन्ध लिखने का अभ्यास ऊपर अध्ययन कराई विधि के अनुसार करें। सभी विषयों पर निबन्ध के अवयव का क्रम भूमिका, विषयवस्तु एवं उपसंहार रहेगा। उपसंहार एवं भूमिका के प्रभावशाली होने से आपका निबन्ध उच्चस्तर का होता है यद्यपि विषयवस्तु भी महत्वपूर्ण है। उपसंहार में विषयवस्तु में की गई चर्चाओं अथवा विवरणों से प्रकट तथ्यों को परिणाम स्वरूप में प्रस्तुत किया जाता है। आप को इन सबका ज्ञान संगीत शिक्षा विषय पर उदाहरण स्वरूप निबन्ध के माध्यम से दिया गया है। अतः उसी आधार पर आप उपरोक्त विषयों पर निबन्ध लेखन का अभ्यास करें।

4.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप निबन्ध लेखन की शैली से परिचित हो चुके होंगे। संगीत विषयों पर निबन्ध लेखन की शैली एवं विद्या से आपको इस इकाई के माध्यम से परिचित कराया गया। निबन्ध लेखन से आप अपने विचारों को लेखन के माध्यम से प्रकट करने की तकनीक विकसित करते है जो बाद में आपको शोधपत्र, लेख एवं शोध कार्य में सहायक सिद्ध होगी। उदाहरण स्वरूप दिए गए संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध से आप संगीत विषयों पर निबन्ध लेखन के विषय जान गए हैं एवं संगीत विषय पर लिखने में सक्षम होंगे। संगीत के गहन अध्ययन एवं संगीत के सन्दर्भों के अध्ययन से आप संगीत विषयों पर निबन्ध लिखने में सक्षम हो गए होंगे।

4.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. गर्ग, श्री लक्ष्मीनारायण, *निबन्ध संगीत,* संगीत कार्यालय, हाथरस।

3.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. इकाई में दिए गए अभ्यास हेतु निबन्ध विषयों में से किसी एक विषय पर निबन्ध लेखन कीजिए।

इकाई 5 – पाठ्यक्रम के रागों की बंदिशों (विलम्बित ख्याल, मध्यलय ख्याल, तान, तराना आदि) को लिपिबद्ध करना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 राग कोमल रिषभ आसावरी
5.3.1 विलम्बित ख्याल एव तानें
5.3.2 मध्यलय ख्याल एवं तानें
5.4 राग मुल्तानी
5.4.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें
5.4.2 मध्यलय ख्याल एवं तानें
5.4.3 मध्यलय ख्याल
5.4.4 तराना
5.5 राग ललित
5.5.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें
5.5.2 मध्यलय ख्याल (शुद्ध धैवत) एवं तानें
5.5.3 मध्यलय ख्याल (कोमल धैवत) एवं तानें
5.6 राग बिलासखानी तोड़ी
5.6.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें
5.6.2 मध्यलय ख्याल एवं तानें
5.7 राग श्री
5.7.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें
5.7.2 मध्यलय ख्याल एवं तानें
5.8 राग पूरियाधनाश्री
5.8.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें
5.8.2 मध्यलय ख्याल एवं तानें
5.9 सारांश
5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.11 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला—संगीत में स्नातकोत्तर, चतुर्थ सेमेस्टर (एम0पी0ए0एम0वी0—606) पाठ्यक्रम की पांचवी इकाई है। इससे पूर्व की इकाई के अध्ययन से आप निबन्ध लेखन की विधि तथा निबन्ध लेखन के अवयवों को जान चुके होंगे।

इस इकाई में पाठ्यक्रय के रागों में विभिन्न रचनाएँ स्वरलिपिबद्ध कर प्रस्तुत की जाएंगी जिसमें विलम्बित ख्याल, मध्यलय ख्याल और तरानों का स्वरलिपि के माध्यम से अध्ययन करेंगे। इस इकाई में आप बड़े ख्याल तथा छोटे ख्याल में प्रयोग की जाने वाली तानों का भी अध्ययन करेंगे।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप राग में विलम्बित ख्याल, मध्यख्याल/द्रुतख्याल एवं तरानों को स्वरालिपि के माध्यम से प्रस्तुत कर पाएंगे तथा रचनाओं को स्वरलिपिबद्ध भी कर सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :—

1. पाठ्यक्रम के रागों में विलम्बित ख्याल व मध्यलय ख्याल की रचनाओं को जान सकेंगे।
2. पाठ्यक्रम के कुछ रागों में तराना की रचना को जान सकेंगे।
3. स्वरलिपि के माध्यम से रचनाओं को प्रस्तुत कर सकेंगे।
4. इस इकाई में दी गई रागों की तानों को क्रियात्मक स्वरूप में प्रस्तुत कर सकेंगे।

5.3 राग कोमल रिषभ आसावरी

5.3.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें :–

स्थाई – एकताल

सारे	मप	ग	रे	म	प	ध	म	प	मप	ग	रेसा
जाऽ	नत	ना	ऽ	ऽ	ऽ	हीं	ऽ	ऽ	ऽऽ	का	हेऽ
4		×		0		2		0		3	
मप	ध–पध	सां	रेंसां	नी	धम	प	मप	मपधप	ग	रे	सा
रूऽ	ऽऽठग	ये	ऽऽ	मो	ऽऽ	रे	ऽऽ	साऽऽऽ	ज	ऽ	न
4		×		0		2		0		3	

अन्तरा

मपधप	पध	सां	नीध	सां	रेंसां	सारें	गं	रें	सां	रेंनी	धप
लाऽखऽ	मऽ	ना	ऽऽ	ऊँ	ऽऽ	माऽ	ऽ	न	त	नाऽ	हीऽ
4		×		0		2		0		3	
पंगं	रेंसां	रें	सां	नी	ध	प	मप	धम	ग	रेग	रेसा
सुभ	रंग	घा	ऽ	त	कि	यो	ऽऽ	कोऽ	ऊ	सौऽ	नत
4		×		0		2		0		3	

तानें – चौगुन लयकारी

1.	सारेमप	मपधप	धनिधप	धनिसां–	रेंसांधनि	धपमप
	0		2		0	
	निधपम	गगरेसा	जाऽ	नत	ना	
	3		4		×	
2.	रेमपध	मपधप	निधपध	मपधसां	गंरेंसारें	सांनिधप
	0		2		0	
	धमपम	गरेसासा	जाऽ	नत	ना	
	3		4		×	
3.	गगरेसा	रेमपध	मपधनि	धपमप	धनिसारें	सांनिधप
	0		2		0	
	धनिधप	मगरेसा	जाऽ	नत	ना	
	3		4		×	

तानें – अठगुन लयकारी

1. ममगरेसारेमप धधपमरेमपध | निनिधपमपधनि रेंरेंसांनिधनिसारें | गंगंरेंसांरेंरेंसांनि रेंरेंसांनिसांसांनिध |

0		2		0
निनिधपमपधनि	सांनिधपमगरेसा	जाऽ	नत	ना
3		4		×

2\.

सारेगगरेसानि सा	रेमपपमगरेम	पधनिनिधपम प	धनिसांसांनिधप ध	निसांरेंरेंसांनिधि न	सारेंगंगंरेंसांनि सां
0		2		0	
मंगंरेंसांनिसारें सां	निधपमगगरे सा	जाऽ	नत	ना	
3		4		×	

3\.

निसारेगरेसानिसा	रेमपधपमगरे	मपधनिधपमप	पधनिसांनिधमप	धनिसांरेंनिधमप	निसांरेंगंरेंसांनिसां
0		2		0	
निसांधनिपधमप	धमपगरेसानिसा	जाऽ	नत	ना	
3		4		×	

5.3.1 मध्यलय ख्याल एवं तानें :—

स्थायी — तीनताल

															प
															ब
ध	म	प	सां	ध	—	प	ध	म	म	प	ध	ग	—	ग	ग
ढ़े	ऽ	या	ऽ	ला	ऽ	ओ	ला	ऽ	वो	रे	ऽ	ला	ऽ	वो	ला
3				×				2				0			
—	रे	रे	—	सा	—	—सा	सा	सां	सां	रें	रें	ध	ध	प	प
ऽ	ओ	रे	ऽ	आ	ऽ	ऽज	सु	घ	र	घ	ड़	प	ल	ना,	ब
3				×				2				0			

अन्तरा

म	म	प	प	ध	ध	ध	ध	सां	सां	सां	सां	—	सां	सां	—
र	त	न	ज	टि	त	सों	ज	टि	त	हिं	डो	ऽ	ल	ना	ऽ
3				×				2				0			
सारेंगं	रें	—	रें	—	सां	—	सां	सां	—	रें	रें	ध	ध	प	प
झूऽऽ	ला	ऽ	वं	ऽ	त	ऽ	ज	सो	ऽ	म	ति	ल	ल	ना,	ब
3				×				2				0			

तानें — स्थाई

5 वीं मात्रा से प्रारम्भ :—

1.	सारे	मप	धसां	रेंनि	धम	गरे	सा—	ब
	2				0			
2.	सारे	मग	रेसा	सारे	मप	मग	रेसा	ब
	2				0			

3.	मप	धम	पध	मप	धम	गरे	सा—	ब
	2				0			
4.	धसां	रेंनि	धम	गरे	सा—	निध़	सा—	ब
	2				0			

सम से प्रारम्भ :—

5	सारे	मप	धसां	रेंनि	धम	गरे	मप	धम
	×				2			
	गरे	गरे	सा—	ब	ढ़ै	ऽ	या	ऽ
	×				2			

13 वीं मात्रा से प्रारम्भ :—

6.	ध़सा	रेम	गरे	सारे	मप	धम	पध	सारें
	3				×			
	निध	सारें	मंगं	रेंनि	धम	गरे	सा—	ब
	2				0			
7.	सारे	मप	धसां	रेंमं	गरें	सांनि	धम	गरे
	3				×			
	मप	धसां	रेंनि	धम	गरे	गरे	सा—	ब
	2				0			

तानें — अन्तरा

5 वीं मात्रा से प्रारम्भ :—

1.	सांनि	धम	गरे	गरे	सारे	मप	धसां	रेंसां
	2				0			
2.	सारें	मंगं	रेंनि	धम	गरे	सारे	मप	धसां
	2				0			
3.	रेंनि	धम	गरे	सा—	सारे	मप	धसां	रेंसां
	2				0			
4.	धसां	रेंनि	धम	गरे	गरे	सारे	मप	धसां
	2				0			

13 वीं मात्रा से प्रारम्भ :—

5.	सारे	मग	रेसा	सारे	मप	धम	गरे	सा—
	3				×			
	सारे	मप	धसां	रेंनि	धम	गरे	मप	धसां
	2				0			
6.	मग	मग	रेसा	धम	धम	गरे	गरे	सा—
	3				×			
	सारे	मप	धसां	रेंनि	धम	गरे	गरे	सा—
	2				0			

5.4 राग मुल्तानी

5.4.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें :–

स्थाई – तीनताल

								सा		सा					
	(प)	ग	रेसा	सा	नि़	सा	सा	नि़	सा	म॑ग	प	म॑प	,प	(प)ग	म॑ग
ऽ	गो	ऽ	कुल	गाँ	ऽ	ऽ	व	के	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽ	ऽछो	राऽ	ऽऽ
3				×				2				0			
म॑								म॑							
ग	म॑	प	नि	–	सां	रें	सां	प	सां	–	नि	(प)	म॑ग	म॑ग	गम॑पनि
ब	र	सा	ऽ	ऽ	ने	की	ऽ	ना	ऽ	ऽ	रि	रे	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽऽऽ
3				×				2				0			

अन्तरा

म॑		म॑						सां				सां			
प	(प)	ग	म॑	प	नि	सां	सां	नि	निसां	रें	सां	नि	सां	नि	धप
इ	न	दो	ऽ	उ	न	म	न	मो	ऽऽ	ह	लि	यो	ऽ	है	ऽऽ
3				×				2				0			
म॑					गं			सां	सां						
ग	म॑	प	नि	सां	रें	सां	सां	नि	नि	सां	–नि	(प)	म॑ग	म॑ग	गम॑पनि
र	हे	ऽ	स	दा	ऽ	रं	ग	नि	हा	ऽ	ऽर	रे	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽऽऽ
3				×				2				0			

क्रमिक पुस्तक मालिका – भाग–4, पेज न0 772–773, लेखक– विष्णुनारायण भातखण्डे

तिलवाड़ा ताल

मात्रा – 16 विभाग– 4, ताली – 1, 5 व 13 पर खाली – 9 पर

ठेका

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
धा	तिरकिट	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	तिरकिट	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं
×				2				0				3			

तानें – चौगुन लयकारी

11 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

1.	धा	धा	नि़सागम॑	पनिसांरें	सांनिधप	म॑गरेसा	गोऽ	ऽकुल	गाँ
	0				3				×
2.	धा	धा	गम॑पनि	सांगंरेंसां	निधपम॑	गरेसा–	गोऽ	ऽकुल	गाँ
	0				3				×

3.	धा	धा	गमंपग	मंपगमं	| पमंगमं	गरेसा–	गोऽ	ऽकुल	| गाँ
	0				3				×

9 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	पमंगमंपनिसारें	सांनिधपमंगरेसा	ऩिसागमंपमंगमं	पनिसांनिपनिसागं	
	0				
	रेंसांनिधपमंगमं	पनिधपमंगरेसा	गोऽ	ऽकुल	गाँ
	3				×
5.	सांनिधपमंगरेसा	ऩिसागमंपनिसां–	गरेंसांनिधपमंप	गमंपमंगरेसा–	
	0				
	ऩिसागमंपमंगमं	पमंगमंगरेसा–	गोऽ	ऽकुल	गाँ
	3				×

5 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

6.	गमंपगमंपगमं	पमंगमंगरेसा–	पनिसांपनिसांपनि	सांनिधपमंगरेसा	
	2				
	निसांगंमंपमंगरें	सांनिधपमंगरेसा	पनिसांगंरेंसांनिध	पमंगमंगरेसा–	
	0				
	ऩिसांगंमंपनिसारें	सांनिधपमंगरेसा	गोऽ	ऽकुल	गाँ
	3				×
7.	निसांगंरेंसांनिधप	मंपगमंपनिसारें	सांनिधपमंगरेसा	ऩिसागमंप–––	
	2				
	गमंपनिसां–––	पनिसांगंरेंरेंसां–	गोऽ	ऽकुल	
	0				
	गोऽ	ऽकुल	गोऽ	ऽकुल	गाँ
	3				×

5.4.2 मध्यलय ख्याल एवं तानें :–

स्थायी – तीनताल

मं		मं		मं				सा				प			
प	प	ग	प	ग	रे	सा	सा	ऩि	सा	मं	ग	मं	प	मं	ग
रू	ण	क	झु	न	क	मो	रि	पा	ऽ	य	ल	बा	ऽ	जे	ऽ
0				3				×				2			
मं								प						ग	
ग	मं	प	नि	सां	नि	ध	प	मं	मं	प	ध	(प)	–	मं	ग
बि	छु	वा	ऽ	छु	म	छु	म	छ	न	न	न	सा	ऽ	जे	ऽ
0				3				×				2			

अन्तरा

प				म॑		प		सां							
म॑	–	प	ध	प	ग	म॑	प	नि	–	सां	नि	सां	–	सां	–
से	ऽ	ज	च	ढ़	त	मो	रि	झाँ	ऽ	झ	न	हा	ऽ	ले	ऽ
0				3				×				2			
सां			सां					प						ग	
नि	–	सां	गं	रें	रें	सां	–	म॑	प	सां	नि	(प)	–	म॑	ग
सा	ऽ	स	न	न	द	की	ऽ	ला	ऽ	ऽ	ऽ	जे	ऽ	ऽ	ऽ
0				3				×				2			

क्रमिक पुस्तक मालिका – भाग–4, पेज न0–752–753, लेखक– विष्णुनारायण भातखण्डे

तानें – स्थायी

सम से प्रारम्भ :–

1.	ऩिसा	गम॑	पनि	सांरें	सांनि	धप	म॑ग	रेसा
	×				2			
2.	गम॑	पनि	सांगं	रेंसां	निध	पम॑	गरे	सा–
	×				2			
3.	ऩिसा	गम॑	पम॑	गम॑	पम॑	गम॑	गरे	सा–
	×				2			
4.	गम॑	पम॑	गरे	सा–	ऩिसा	गम॑	प–	ऽऽ
	×				2			

13 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

5.	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऩिसा	गम॑	प–	गम॑
	0				3			
	पनि	सां–	पनि	सांरें	सांनि	धप	म॑ग	रेसा
	×				2			
6.	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	गम॑	पग	म॑प	गम॑
	0				3			
	पनि	सांप	निसां	पनि	सांनि	धप	म॑ग	रेसा
	×				2			

9 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

7.	ऩिसा	गम॑	पम॑	गम॑	पनि	सांनि	पनि	सांगं
	0				3			
	रेंसां	निध	पम॑	गम॑	पनि	धप	म॑ग	रेसा
	×				2			
8.	ऩिसा	गग	रेसा	ऩिसा	म॑ग	म॑ग	रेसा	ऩिसा
	0				3			

	गमं	पप	मंग	मंग	रेसा	ऩिसा	गमं	प–
	×				2			

तानें – अन्तरा

सम से प्रारम्भ :–

1.	सांनि	धप	मंग	रेसा	ऩिसा	गमं	पनि	सां–
	×				2			
2.	निसां	गरें	सांनि	धप	मंप	गमं	पनि	सां–
	×				2			
3.	गमं	पमं	गरे	सा–	ऩिसा	गमं	पनि	सां–
	×				2			
4.	पनि	सांगं	रेंसां	निध	पमं	गमं	पनि	सां–
	×				2			

13 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

5.	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	निसां	गरें	सांनि	धप
	0				3			
	मप	गमं	पनि	धप	मंप	गमं	पनि	सां–
	×				2			
6.	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	निसां	रेंनि	सांरें	निसां
	0				3			
	गंगं	रेंसां	निसां	गंमं	पंमं	गंमं	गंरें	सां–
	×				2			

9 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

7.	गमं	पमं	गमं	पध	पमं	गमं	पनि	धप
	0				3			
	मंप	गमं	पनि	सांरें	सांनि	धप	मंग	रेसा
	×				2			

5.4.4 तराना :–

स्थाई – त्रिताल

			मं												
ध	प	प	प	ग	मं	ध	प	सां	–	–	नि	(प)	–	–	–
त	न	न	त	न	तुं	द्रें	ऽ	ना	ऽ	ऽ	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ
0				3				×				2			
								मं							
मं	प	नि	–	ध	–	प	–	प	ग	मं	प	मं	ग	रे	सा
दीं	ऽ	दीं	ऽ	तो	ऽ	तों	ऽ	त	न	न	न	न	न	न	न
0				3				×				2			

नि़	नि़	सा	मं	ग	रे	सा	–	नि़	नि़	सा	रे	नि़	ध़	प़	–
त	न	न	दे	रे	ना	तों	ऽ	त	न	न	न	दे	रे	ना	ऽ
0				3				×				2			
प	–	प	प	प	प	(प)	–	मं	ग	मं	प	मं	ग	रे	सा
तों	ऽ	त	न	न	न	तों	ऽ	त	न	न	न	दे	रे	ना	ऽ
0				3				×				2			

अन्तरा

प	प	प	(प)	–	मं	ग	मं	प	नि	सां	रें	सां	नि	सां	–
ना	द्रे	द्रें	दीं	ऽ	त	न	न	त	न	न	न	दे	रे	ना	ऽ
0				3				×				2			
सां	मं	–	गं	रें	सां	सां	–	नि	नि	सां	रें	नि	ध	प	–
त	दि	ऽ	या	ऽ	रे	तों	ऽ	त	न	न	न	दे	रे	ना	ऽ
0				3				×				2			
मं	प	नि	नि	(प)	–	प	–	मं	ग	मं	प	मं	ग	रे	सा
त	न	दे	रे	ना	ऽ	तो	ऽ	त	न	न	न	दे	रे	ना	ऽ
0				3				×				2			
नि़	सा	मं	ग	मं	प	प	–	प	प	ग	मं	प	नि	सां	–
त	न	दे	रे	दे	रे	ना	ऽ	त	न	दे	रे	या	ऽ	रे	ऽ
0				3				×				2			
सां	–	नि	ध	प	प	(प)	–	मं	ग	मं	प	मं	ग	रे	सा
तों	ऽ	त	न	न	न	तों	ऽ	त	न	न	न	दे	रे	ना	ऽ
0				3				×				2			

क्रमिक पुस्तक मालिका – भाग–4, पेज न0–761–762, लेखक– विष्णुनारायण भातखण्डे

5.5 राग ललित

5.5.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें :–

स्थाई – रैन का सपना री मैं कासे कहूँ री।

अन्तरा – सोवत–सोवत आँख खुली जब, को उन पायो अपना।।

स्थाई – त्रिताल

															ग
															म॑ग
															रैन
सा								म							
नि़	रे॒	–	गम	म॑	–	म	गम	ग	म	गम	गमम॑	(म)	–	ग	–
का	ऽ	ऽ	सप	ना	ऽ	ऽ	ऽऽ	री	ऽ	ऽऽ	ऽऽऽ	मैं	ऽ	ऽ	ऽ
3				×				2				0			
म		ध		ध											ग
ग	–	म॑	ध	म॑	ध	म॑	म	ग	–	म	म॑	म॑म॑गम॑	मग	रे॒	म॑ग
का	ऽ	से	क	हूँ	ऽ	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽ	ऽ,	रैन
3				×				2				0			

अन्तरा

म		ध		ध				सां						ध	
ग	–	म॑	ध	सां	–	रें॒	सां	नि़	–	रें॒	गं	(सां)नि	रें॒नि	म॑,	ध,म॑म
सो	ऽ	व	त	सो	ऽ	व	त	आँ	ऽ	ख	खु	लीऽ	जऽ	ब	ऽ,ऽऽ
3				×				2				0			
म॑		ध		नि				ध	ध						ग
ग	–	म॑धनिसां	–सां	सां नि	रें॒	नि	ध	म॑	म॑	ध	म॑	म	म॑म॑मग	मग	रे॒,म॑ग
को	ऽ	उऽऽऽ	ऽन	पा ऽ	ऽ	यो	ऽ	अ	प	ऽ	ना	ऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽ	ऽ,रैन
3				×				2				0			

क्रमिक पुस्तक मालिका – भाग–4, पेज न0–513, लेखक– विष्णुनारायण भातखण्डे

यह ख्याल शुद्ध धैवत द्वारा दर्शाया गया है।

तानें – चौगुन लयकारी

11 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

1.	ता	तिरकिट	नि़रे॒गम	म॑मगरे॒	गमं॑धम॑	गरे॒सा–	रैनकाऽ	ऽऽसप	ना
	0				3				×
2.	ता	तिरकिट	नि़रे॒गम॑	धनिरें॒नि	धम॑मग	म॑गरे॒सा	रैनकाऽ	ऽऽसप	ना
	0				3				×
3.	ता	तिरकिट	म॑धनिरें॒	निधम॑ध	म॑मगम॑	धनिरें॒सां	रैनकाऽ	ऽऽसप	ना
	0				3				×

तानें – अठगुन लयकारी

9 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	निरें॒गंरें॒सांनिधम॑	धम॑मगम॑गरे॒सा	नि़रे॒गम॑धनिरें॒गं	मं॑गंरें॒सांनिधम॑ग
	0			
	गम॑धनिरें॒गंरें॒सां	निधम॑मगरे॒सा–	रैनकाऽऽ	ऽऽसप
	3			
	ना			
	×			
5.	नि़रे॒सा–नि़रे॒गरे॒	सा–नि़रे॒गमम॑म	गरे॒सा–नि़रे॒गम॑	धम॑मगम॑गरे॒सा
	0			
	नि़रे॒गम॑धनिधम॑	धम॑मगम॑गरे॒सा	रैनकाऽऽ	ऽऽसप
	3			
	ना			
	×			

सम से प्रारम्भ :–

6.	नि़रेगम॑धनिरें॒नि	धम॑मगम॑गरे॒सा	म॑धनिरें॒निधम॑ध	म॑मगम॑गरे॒सा–
	×			
	नि़रे॒गम॑मम॑गरे॒	गम॑धम॑गरे॒सा–	नि़रे॒गमधनिरेंगं	मं॑गंरें॒सांनिधम॑म
	2			
	गम॑धनिरें॒गंरें॒सां	निधम॑मगरे॒सा–	रैनकाऽ	ऽऽसप
	0			
	रैनकाऽ	ऽऽसाप	रैनकाऽ	ऽऽसाप
	3			
	ना			
	×			

राग ललित की विलम्बित ख्याल की चौगुन एवं अठगुन लयकारी की तानें दी गई हैं जिससे आप राग को भली भाँति गा पाएँगे।

5.5.2 मध्यलय ख्याल(शुद्ध धैवत) एवं तानें :–

स्थायी – तीनताल

सा						म									
नि़	रे॒	ग	रे॒	सा	सा	ग	म	म	–	–	म॑	(म)	–	म	ग
पि	यु	पि	यु	र	ट	त	प	पी	ऽ	ऽ	य	रा	ऽ	बो	ले
0				3				×				2			
								नि	नि		ध				
–	ध	म॑	ध	सां	सां	सां	–	सां	रें॒	नि	म॑	–	ध	म॑	म
ऽ	औ	र	को	य	लि	या	ऽ	स	कु	न	दे	ऽ	त	मो	रे
0				3				×				2			

म		ध						नि	रें॒						
ग	ग	म॑	ध	सां	सां	सां	—	सां	नि	—	ध	म॑	ध	म॑	मग
पि	यु	के	मि	ल	न	को	ऽ	आ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	जेऽ
0				3				×				2			

अन्तरा

ध				नि											
म॑	ध	म॑	ध	सां	—	सां	—	सां	—	सां	नि	रें॒	—	सां	—
झिं	ग	र	झिं	गा	ऽ	रे	ऽ	दा	ऽ	दु	र	बो	ऽ	ले	ऽ
0				3				×				2			
नि				रें				ध							
सां	सां	सां	—	नि	—	ध	—	म॑	म॑ध	ध	म॑	म	—	ग	—
मु	र	वा	ऽऽ	बो	ऽ	ले	ऽ	ब	नऽ	ब	न	के	ऽ	ऽ	ऽ
0				3				×				2			
ध															
म॑	ध	म॑	ध	म॑	ध	म॑	ग	ग	रे॒	ग	म॑	ग	रे॒	सा	—
अ	व	न	सु	नी	ऽ	म	न	रं	ऽ	ग	पी	त	म	की	ऽ
0				3				×				2			
नि़				ध				सां		ध				ग	
सा	सा	ग	म	म॑	ध	सां	सां	रें॒	नि	म॑	ध	ध	म॑	म	ग
म	ग	न	भ	ये	ऽ	स	ब	घ	र	के	ऽ	जि	य	रा	ऽ
0				3				×				2			

क्रमिक पुस्तक मालिका – भाग–4, पेज न0–499–500 लेखक– विष्णुनारायण भातखण्डे

उपरोक्त बंदिश शुद्ध धैवत से है।

तानें – स्थाई

सम से प्रारम्भ :–

1.	नि़रे॒	गम	म॑म	गरे॒	गम॑	धम॑	गरे॒	सा—
	×				2			
2.	म॑ध	निरें॒	निध	म॑ध	म॑म	गम॑	धनि	रें॒सां
	×				2			
3.	नि़रे॒	गम॑	धनि	रें॒नि	धम॑	मग	म॑ग	रे॒सा
	×				2			

13 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	निरें॒	गरें॒	सांनि	धम॑	धम॑	मग	म॑ग	रे॒सा
	2				0			
	नि़रे॒	गम॑	धनि	सां—	पि	यु	पि	यु
	3				×			
5.	पि	यु	पि	यु	नि़रे॒	सा—	नि़रे॒	गरे॒
	0				3			

	सा–	नि़रे॒	गम॑	धम॑	| धम॑	मग	म॑ग	रे॒सा
	×				2			

9 वीं मात्रा से आरम्भ :–

6.	नि़रे॒	गम॑	धनि	रें॒गं	| म॑गं	रें॒सां	निध	म॑म
	0				3			
	गम॑	धनि	रें॒गं	रें॒सां	| निध	म॑म	गरे॒	सा–
	×				2			
7.	नि़रे॒	गनि़	रे॒ग	नि़रे॒	| गम	म॑ग	म॑ग	रे॒सा
	0				3			
	गम॑	धग	म॑ध	गम॑	| धम॑	मग	म॑ग	रे॒सा
	×				2			

तानें – अन्तरा

सम से प्रारम्भ :–

1.	निरें॒	निध	म॑ध	म॑म	| गम॑	धनि	रें॒–	सां–
	×				2			
2.	निरें॒	गरें॒	सांनि	धम॑	| धम॑	मग	म॑ध	निसां
	×				2			
3.	निरें॒	गमं	म॑मं	गरें॒	| सांनि	धम॑	धनि	रें॒सां
	×				2			

13 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	झिं	ग	र	झिं	| म॑ध	निरें॒	गग	रे॒सा
	2				0			
	निध	म॑म	गरे॒	सा–	| नि़रे॒	गम	म॑म	ग–
	3				×			
5.	झिं	ग	र	झिं	| गम॑	धग	म॑ध	गम॑
	0				3			
	धम॑	धम॑	मग	म॑ग	| रे॒सा	म॑ध	निरें॒	सा–
	×				2			

9 मात्रा से प्रारम्भ :–

6.	निरें॒	गंनि	रें॒गं	निरें॒	| गंमं	म॑मं	गरें॒	सां–
	0				3			
	निरें॒	निध	म॑ध	म॑म	| गम॑	धनि	रें॒रें॒	सां–
	×				2			

7.

निरे	गम	मंम	गरे	गमं	धनि	रेंरें	सां–
0				3			
मंध	निरें	निध	मंध	मंम	गमं	धनि	रेंसां
×				2			

ललित राग को शुद्ध धैवत एवं कोमल धैवत दोनों प्रकार से गाया जाता है। यहाँ सुविधा के लिए शुद्ध एवं कोलम धैवत दोनों प्रकार के ललित के द्रुतख्याल की स्वरलिपियाँ दी गयी हैं जिससे आप दोनों तरह से राग की बंदिश गा सकेंगे।

5.5.3 मध्यलय ख्याल (कोमल धैवत) :–

कोमल धैवत के अनुसार स्वरलिपि :–

स्थाई – तीनताल

														ग	
ग	रे	ग	मं	ग	रे	नि	रे	ध	–	–	–	मं	ध	मं	ग
जो	गि	या	ऽ	मो	रे	घ	र	आ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ये	ऽ
0				3				×				2			
–	मं	ध	मं	धनि	सां	सां	सां	नि	रें	नि	ध	मं	ध	मं	ग
ऽ	आ	ये	रि	आऽ	य	मो	रे	भा	ऽ	ग	ज	गा	ऽ	ये	ऽ
0				3				×				2			

अन्तरा

														ग	
–	म	ध	म	धनि	सां	सां	सां	नि	रें	नि	ध	मं	ध	मं	ग
ऽ	का	न	न	कुऽ	य	ड	ल	ग	ले	मृ	ग	छा	ऽ	ला	ऽ
0				3				×				2			
–	सां	सां	सां	नि	रें	नि	ध	मं	ध	मं	म	ग	ममं	म	ग
ऽ	अं	ग	ब	भू	ऽ	त	र	मा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ये
0				3				×				2			

उपरोक्त में तानें दी गई है, उनमें कोमल धैवत का प्रयोग कर तानों का स्वरूप उसी प्रकार रहेगा।

5.6 राग विलासखानी तोड़ी

5.6.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें :–

स्थायी – एकताल

										रेगरे	गप
										हैऽऽ	कछु
										4	
ध	म,गरे	ग	रेसा	रेनि	सा	रेगरे	गम	म	गरे	गप	पप
बा	ऽ,ऽऽ	ऽ	तेंऽ	बोऽ	ऽ	लऽऽ	ऽत	ना	ऽऽ	ऽऽ	हिंपि
×		0		2		0		3		4	
ध	नि	ध	म	गरे	ग	रे	सा	रेनि	सा	रे,गरे	गम
या	ऽ	मो	ऽ	ऽऽ	ऽ	से	ऽ	ऽऽ	ऽ	है,ऽऽ	कछु
×		0		2		0		3		4	

अन्तरा

ध	मग	प	ध	सां	सां	सां	–सां	रें	निध	सां	–सां
का	ऽऽ	मो	से	चू	ऽ	क	ऽप	री	ऽऽ	ऽ	ऽब
3		4		×		0		2		0	
सारें	सांरेंगं–	रेंसां	–सां	रें	नि	ध	मगरे	ग	रेसा	रेग	गप
ताऽ	ऽऽऽऽ	वोबे	ऽगि	रा	म	रँ	ऽ,ऽऽ	ऽ	ऽग	लेऽ	होसु
3		4		×		0		2		0	
प	–	ध	म	ग	रे	ग	रे	सा	–	रे	निध
ध	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	र	ऽ	ऽ	ऽऽ
3		4		×		0		2		0	
सा	–रे	गरे	गप								
ऽ	ऽहै	ऽऽ	कछु								
3		4									

तानें – अठगुन लयकारी

9 वी ं मात्रा से प्रारम्भ :–

1.	सारेगरेसासाधसा	रेगमगरेगरेसा	हैंऽऽ	कछु	बा
	3		4		×
2.	सारेगपधमगरे	गमगरेगरेसा–	हैंऽऽ	कछु	बा
	3		4		×

7 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

3.	सारेसारेगरेगरे	सारेगमगरेगरे	सारेगपधमगरे	गमगरेगरेसा–	हैऽऽ
	0		3		4
	कछु	बा			
		×			

4. सारेगपधमगरे गपधनिधमगरे | गपधसांरेंनिधम गरेगमगरेसा– | हैऽऽ
0 3 4
कछु | बा
×

5वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

5. सांनिधमगरेगरे सारेगपधसांरेंगं | मंगंरेंगंरेंसांरेंनि धमगरेगपधसां | रेंगंरेंसांरेंनिधम
2 0 3
गरेगमगरेसा | हैंऽऽ कछु | बा
4 ×

6. सारेगपधसांरेंनि धमगरेगरेसा– | गगरेगगरेगग रेगरेसाधधमध | धमधधमगरेग
2 0 3
रेसागपधसांरेंसा | हैंऽऽ कछु | बा
4 ×

सम से प्रारम्भ :–

7. सारेंसारेंगरेंसांसां रेंनिधमगरेसारे | गपधसांरेंनिधम गरेगपधसांरेंसा | रेंगंरेंसांरेंनिधम
× 0 2
गरेगमगरेसा– | हैंऽऽ कछु | हैंऽऽ कछु
0 3
| हैंऽऽ कछु | बा
4 ×

5.6.2 मध्यलय ख्याल एवं तानें :–

स्थाई – तीनताल

रे	ग	रे	सा	रे	नि॒	सा	रे	ग	–	म	ग	रे	ग	रे	सा
क	र	म	ही	ऽ	न	क	छु	का	ऽ	वि	द	पा	ऽ	यो	ऽ
0				3				×				2			
सा	रे	ग	प	ध	–	म	ग	रे	–	ग	रे	सा	–	रे	ग
क	र	न	हि	ले	ऽ	क	हि	ले	ऽ	न	छु	ले	ऽ	प	ग
0				3				×				2			
रे	–	ग	प	ध	–	सां	रें	गं	रे	नि	ध	म	ग	रे	सा
भा	ऽ	ग	भ	रो	ऽ	से	ही	जो	ऽ	नि	त	जा	ऽ	वे	ऽ
0				3				×				2			

अन्तरा

														ध	ध
														चा	हे
सां	–	सां	सां	रें	नि	सां	रें	गं	–	रें	रें	सां	–	सां	रें
सी	ऽ	प	मि	ले	ऽ	के	मि	ले	ऽ	मु	क	ता	ऽ	ज	ब
0				3				×				2			
गं	–	मं	गं	रें	गं	रें	सां	ध	–	गं	गं	रें	–	सां	–
सा	ऽ	ग	र	अं	ऽ	त	र	भे	ऽ	द	ल	गा	ऽ	वे	ऽ
0				3				×				2			

नि	ध	म	ग	रे	–	ग	प	ध	–	सां	रें	गं	–	रें	सां
सु	र	स	रि	ती	ऽ	र	न	से	ऽ	प	र	आ	ऽ	प	हि
0				3				×				2			
ध	नि	सां	रें	गं	–	रें	नि	ध	–	म	ग	रे	ग	रे	सा
नी	ऽ	र	न	ही	ऽ	च	लि	प्या	ऽ	स	बु	झा	ऽ	वे	ऽ
0				3				×				2			

तानें – स्थायी

सम से प्रारम्भ :–

1.	सारे	गरे	सासा	धसा	रेग	मग	रेग	रेसा
	×				2			
2.	सारे	गप	धम	गरे	गम	गरे	गरे	सा–
	×				2			
3.	सारे	गप	धसां	रेंनि	धम	गरे	गरे	सा–
	×				2			

9 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	सारे	सारे	गरे	गरे	सारे	गम	गरे	गरे
	0				3			
	सारे	गप	धम	गरे	गम	गरे	गरे	सा–
	×				2			
5.	सारे	गप	धम	गरे	गप	धनि	धम	गरे
	0				3			
	गप	धसां	रेंनि	धम	गरे	गम	गरे	सा–
	×				2			
6.	सारे	गप	ध–	धम	गरे	गप	ध–	धनि
	0				3			
	धम	गरे	गप	ध–	धसां	रेंनि	धम	गरे
	×				2			
	गप	ध–	धसां	रेंगं	मंगं	रेंगं	रेंसां	रेंनि
	0				3			
	धम	गरे	गप	धम	गरे	गम	गरे	सा–
	×				2			

तानें – अन्तरा

सम से प्रारम्भ :–

1.	सांनि	धम	गरे	सारे	गप	धसां	चा	हे
	×				2			
2.	सांरें	गरें	सांसां	धसां	रेंगं	रेंसां	चा	हे
	×				2			
3.	गप	धम	गरे	सारे	गप	धसां	चा	हे
	×				2			

7 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	ले	ऽ	मु	क	ता	ऽ	गग	रेग
	×				2			
	गरे	गग	रेग	रेसा	धध	मध	धम	धध
	0				3			
	मग	रेग	रेसा	सारे	गप	धसां	चा	हे
	×				2			
5.	ले	ऽ	मु	क	ता	ऽ	सारें	सारें
	×				2			
	गरें	सांसां	रेंनि	धम	गरे	सारे	गप	धसां
	0				3			
	रेंनि	धम	गरे	गप	धसां	रेंसां	चा	हे
	×				2			

13. वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

6.	सारे	गप	धसां	धनि	धम	गरे	गरे	सा–
	3				×			
	सांनि	धम	गरे	गरे	सारे	गप	धसां	रेंगं
	2				0			
	मंग	रेंगं	रेंसां	रेंनि	धम	गरे	गरे	गप
	3				×			
	धसां	रेंसां	चा	हे				
	2							

5.7 राग श्री

5.7.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें :–

स्थाई – झूमरा ताल

ग				नि			प		ध				
रे	–	सा	सा	सा	प	–	मं	पध	मं	गरे	ग	रे	सा
ला	ऽ	गो	हि	आ	ऽ	ऽ	वे	ऽऽ	रे	ऽऽ	ऽ	पि	यु
3				×			2				0		
सा	सा						प़						
नि़	नि़रे	नि़	ध़	नि़	ध़	प़	मं़	प़	नि़	सा	रे	–	सा
अ	तिऽ	ब	र	जो	ऽ	नं	मा	ऽ	ऽ	ऽ	ने	ऽ	हि
3				×			2				0		

अन्तरा

प		सा					सा						
मं	प	नि	,नि	सां	सां	सां	नि	–सां	रें	सां	निसां	निध	प
ज	ब	ते	ऽ,पि	या	प	र	दे	ऽस	ग	व	नऽ	कीऽ	ने
3				×			2				0		
प		सां		नि			प						
मं	प	नि	सां	रें	–	सां	मंप	सां	निध	मं,गरे	ग	रे	सा
अ	ब	मा	इ	दे	ऽ	ख	रीऽ	ऽ	सोऽ	ऽ,ऽऽ	ऽ	ऽ	वे
3				×			2				0		

क्रमिक पुस्तक मालिका, भाग – 3, पेज न0 373–374, लेखक – विष्णुनारायण भातखण्डे

उपरोक्त विलम्बित ख्याल झूमरा ताल में निबद्ध है। झूमरा ताल में 14 मात्राऐं, 4 विभाग, 3 ताली एवं 1 खाली है। पहली, चौथी एवं ग्यारहवीं मात्रा पर ताली तथा आठवीं मात्रा पर खाली है।

झूमरा ताल – ठेका

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
धिं	ऽधा	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तिं	ऽता	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट
×			2				0			3			

तानें – चौगुन लयकारी

8 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

1.	निसारेमं	पनिसांरें	रेंनिधप	मंपधमं	गरेसा–	लाऽ	गोहि	आ
	0			3				×
2.	निसारेमं	पनिसांरें	सांनिधप	मंगरेग	रेसानिसा	लाऽ	गोहि	आ
	0			3				×
3.	मंपनिसां	पनिसांसां	गंगंरेंसां	निधपमं	गरेसा–	लाऽ	गोहि	आ
	0			3				×

तानें – अठगुन लयकारी

4 मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	निसारेमंपनिसांरें	रेंनिधपमंपधमं	गरेगगरेसानिसा	रेमंपरेमंपनिसा
	2			
	निसारेमंपरेमंप	निसांरेंनिधपमंप	धमंगरेगगरेसा	मंपनिसांरेंसांनिसां
	0			3
	निधपमंगरेसा–	लाऽ	गोहि	आ
				×
5.	गगरेसानिसारेमं	पनिनिधपमंपनि	सांरेंरेंगंरेंसानिसां	निधपमंपधमंग

2			
मंपनिसांरें–––	रेंगंरेंसांनिसांरें–	रेंनिधपमंपनिसां	‖ –निधपमंप–ध
0			3
–मंगरेगगरेसा	लाऽ	गोहि	‖ आ
			×

6.	पमपधधपमंप	निसांरेंगंगंरेंसांनि	रेंनिधपमंपनिसां	निधपमंपधधमं	‖
	2				
	गरेगगरेसानि़सा	लाऽ	गोहि	‖ लाऽ	
	0			3	
	गोहि	लाऽ	गोहि	‖ आ	
				×	

5.7.2 मध्यलय ख्याल एवं तानें :–

स्थायी – एरी हूँ तो आसन गैली पासन।
गैली लुगवा धरे मैका नाम।।

अन्तरा – जबते पी परदेस गवन कीनो।
तबते देहरिन दीनो पाँव।।

स्थायी – त्रिताल

प				सां				सां							
मं	प	नि	सां	रें	–	सां	सां	नि	–	सां	–	नि	ध	प	प
ए	री	हुँ	तो	आ	ऽ	स	न	गै	ऽ	ली	ऽ	पा	ऽ	स	न
3				×				2				0			
प				ध						ध					
मं	–	प	ध	मं	गरे	ग	रेसा	सा	प	मं	गरे	ग	रे	सा	–
गै	ऽ	ली	ऽ	लु	गऽ	वा	धऽ	रे	ऽ	मैं	काऽ	ना	ऽ	म	ऽ
3				×				2				0			

अन्तरा

प								सां				सां			
मं	प	नि	–	सां	–	सां	सां	नि	सां	रें	सां	नि	निसां	निध	प
ज	ब	ते	ऽ	पी	ऽ	प	र	दे	ऽ	स	ग	व	नऽ	कीऽ	नो
3				×				2				0			
प								प		ध					
मं	प	नि	सां	रें	रें	सां	–	मंप	मंपध	मं	गरे	मं	रे	–	सा
त	ब	ते	ऽ	दे	ह	रि	न	दीऽ	ऽऽऽ	नो	ऽऽ	पाँ	ऽ	ऽ	व
3				×				2				0			

क्रमिक पुस्तक मालिका – भाग –3 पेज न0 367–368, लेखक– विष्णुनारायण भातखण्डे।

तानें – स्थाई

5वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

1.	नि सा	मंप	निसां	रेंसां	निध	पमं	गरे	सा–
	2				0			
2.	मंप	निसां	रेंसां	निसां	निध	पमं	गरे	सा–
	2				0			
3.	पनि	सांनि	सांगं	रेंसा	निध	पमं	गरे	सा–
	2				0			

13 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	मंप	निध	पमं	पनि	सांरें	सांनि	सांरें	धप
	3				×			
	मंप	निसां	रेंसां	गंरें	सांनि	धप	मंग	रेसा
	2				0			
5.	मंप	निसां	रेंसां	निसां	निध	पमं	पनि	सांनि
	3				×			
	सांरें	सांनि	सांगं	रेंसां	निध	पमं	गरे	सा–
	2				0			

तानें – अन्तरा

5वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

1.	सांनि	धप	मंग	रेसा	निसा	मंप	निसां	रेंसां
	2				0			
2.	निसां	गंरें	सांनि	धप	मंप	निसां	रेंरें	सां–
	2				0			
3.	पनि	सांनि	सांगं	रेंसां	निध	पमं	पनि	सां–
	2				0			

13वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	मंप	निनि	धप	––	मंप	निनि	धप	निसां
	3				×			
	रेंरें	सांनि	सांगं	रेंसां	निध	पमं	गरे	सा–
	2				0			
5.	निसां	निरें	सांनि	धप	मंप	निसां	रेंसां	निसां
	3				×			
	गंरें	सांनि	धप	मंग	रेसा	मंप	निसां	रेंसा
	2				0			

5.8 राग पूरियाधनाश्री

1.8.1 विलम्बित ख्याल एवं तानें :–

स्थाई – एकताल

ध				रे							
मंध	मं	ग	गमं	ग	रे	सा–	–	रेरेसानि़	–	–	सारे
बऽ	लि	ऽ	बलि	जा	ऽ	ऊँ	ऽ	मीऽऽऽ	ऽ	ऽ	तऽ
3		4		×		0		2		0	
				मं				सां			
ग	मंमंरे	ग	–	प	–मं	ध	प	नि	रेंनि	ध	प
मो	ऽऽऽ	रे	ऽ	तो	ऽऽ	रे	ऽ	का	ऽर	न	ऽ
3		4		×		0		2		0	
मं	ध					रे		ध			
प	मं	ग	–	मं	रेरे	ग	–	मं	–	ध	निनि
लो	ग	वा	ऽ	ऽ	ऽबु	रे	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽऽ
3		4		×		0		2		0	

अन्तरा

ध							नि				
मंध	सांसां	सांसां	सां	रें	–	सां	,सां	सां	–	नि	ध
लेऽ	चल	अप	ने	दे	ऽ	स	,स	दा	ऽ	रँ	ग
3		4		×		0		2		0	
सां	सां			ध		ध					
नि	निरेंनि	ध	प	मं	धनि	मं	ग	मंमं	रे	ग	–मं
पा	छेऽप	रे	ऽ	नि	गुऽ	रे	ऽ	ऽऽ	ऽ	रे	ऽऽ
3		4		×		0		2		0	
मं											
ध	मं	ग	गमं								
ब	लि	ऽ	बलि								
3		4		×		0		2		0	

क्रमिक पुस्तक मालिका, भाग–4, पेज न0 362–363, लेखक– विष्णुनारायण भातखण्डे

तानें – चौगुन लयकारी

7 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

1.	नि़रेगमं	धनिरेंनि	धपमंग	मंगरेसा	बलि	बलिऽ	जा
	0		3		4		×

2.	म॑धनिसां	निधपम॑	गम॑पम॑	गरेसा–	बलि	बलिऽ	जा
	0		3		4		×
3.	निरेगम॑	धनिरेंनि	धपम॑ग	रेगप–	बलि	बलिऽ	जा
	0		3		4		×

तानें – अठगुन लयकारी

5 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	निरेगम॑पधपम॑	गम॑धनिसांरेंसांनि	म॑धनिरेंगं म॑ं गंरें	सांनिधपम॑गरेसा	
	2		0		
	निरेगम॑गरेगप	म॑धपम॑गरेसा–	बलि	बलिऽ	जा
	3		4		×
5.	निरेंगंरेंसांनिधप	मगरेसानिरेगप	धनिसांधनिसांधनि	सांरेंसांनिधपम॑ग	
	2		0		
	म॑रेगगम॑गरेसा	निरेगम॑धनिसां–	बलि	बलिऽ	जा
	3		4		×

7 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

6.	निरेग॑मरेगरेसा	गम॑पधम॑पगम॑	धनिसांरेंनिसांनिध	निरेंगंम॑ंगंरेंसां
	0		3	
	बलि	बलिऽ	जा	
	4		×	

सम से प्रारम्भ :–

7.	गम॑धनिरेंगंरेंसां	निधपम॑गरेसा–	निरेगम॑धनिरेंनि	धपम॑गरेसानिरे	गम॑धनिरेंगंरेंसां
	×		0		2
	निधपम॑गरेसा–	बलि	बलिऽ	बलि	बलिऽ
		0		3	
	बलि	बलिऽ	जा		
	4		×		

5.8.2 मध्यलय ख्याल एवं तानें :–

स्थायी – पायलिया झनकार मोरी, झनन–झनन बाजे झनकारी।

अन्तरा – पिया समझाऊँ समझत नाहीं, सास ननद मोरी देगी गारी।।

स्थाई – तीनताल

म॑				ध		ध							म॑		
प	–	ध	ग	म॑	ध	रें	नि	ध	–	प	प	–	प	–	प
पा	ऽ	य	लि	या	ऽ	झ	न	का	ऽ	ऽ	र	ऽ	मो	ऽ	रि
0				3				×				2			

ध	ध							ग							
म॑	म॑ध	म॑	ग	म॑	रे	ग	–	म॑	रे	ग	म॑	ग	रे	सा	–
झ	नऽ	न	झ	न	न	बा	ऽ	जे	ऽ	झ	न	का	ऽ	री	ऽ
0				3				×				2			

अन्तरा

ग				ध				ध							
म॑	म॑	ग	ग	म॑	–	ध	–	सां	सां	सां	सां	रें	–	सां	–
पि	या	स	म	झा	ऽ	ऊँ	ऽ	स	म	झ	त	ना	ऽ	हीं	ऽ
0				3				×				2			
सां				रें						सां			ध		
नि	रें	गं	रें	नि	रें	सां	–	नि	ध	नि	रें	नि	नि	ध	प
सा	ऽ	स	न	न	द	मो	ऽ	री	ऽ	दे	ऽ	गि	गा	ऽ	रि
0				3				×				2			

क्रमिक पुस्तक मालिका – भाग–4, पेज न0–347 लेखक– विष्णुनारायण भातखण्डे

तानें – स्थाई

सम से प्रारम्भ :–

1.	निरे	गम॑	धनि	रेंनि	धप	म॑ग	रेग	प–
	×				2			
2.	म॑ध	निसां	निध	पम॑	गम॑	पम॑	गरे	सा–
	×				2			
3.	निरे	गम॑	गरे	गप	म॑ध	पम॑	गरे	सा–
	×				2			

13 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

4.	निरे	गम॑	धनि	रेंनि	धप	म॑ग	रेग	म॑ग
	3				×			
	म॑रे	ग–	म॑ग	रेसा	पा	ऽ	य	लि
	2				0			
5.	म॑ध	निरें	गंम॑	गंरें	सांनि	धप	म॑ग	रेसा
	3				×			
	निरे	गप	म॑ध	प–	पा	ऽ	य	लि
	2				0			

9 वीं मात्रा से प्रारम्भ :–

6.	निरें	गम॑	धनि	रेंनि	धप	म॑ग	रेसा	निरे
	0				3			
	गम॑	धनि	रेंगं	रेंसां	निध	पम॑	गरे	सा–
	×				2			
7.	निरे	गम॑	पध	पम॑	गम॑	धनि	सारें	सांनि
	0				3			

	म॑ध	निरें	गमं॑	गरें	सांनि	धप	म॑ग	रेसा
	×				2			
	म॑ध	निसां	निध	पम॑	गम॑	पम॑	गरे	सा—
	0				3			
	ऩिरे	गम॑	गरे	गप	म॑ध	पम॑	गरे	सा—
	×				2			

<u>तानें — अन्तरा</u>

सम से प्रारम्भ :—

1.	निरें	गरें	सांनि	धप	म॑ग	रेसा	ऩिरे	गप
	×				2			
2.	गम॑	धनि	रेंगं	रेंसां	निध	पम॑	गरे	सा—
	×				2			
3.	सांनि	धप	म॑ग	रेसा	ऩिरे	गम॑	धनि	रेंसां
	×				2			

13 वीं मात्रा से प्रारम्भ :—

4.	धनि	सांनि	धनि	धप	म॑ध	पम॑	गरे	सा—
	3				×			
	ऩिरे	गप	म॑ध	प—	पि	या	स	म
	2				0			
5.	निरें	गरें	सांनि	धप	म॑ध	पम॑	गरे	सा—
	3				×			
	ऩिरे	गप	म॑ध	प—	पि	या	स	म
	2				0			

9 वीं मात्रा से प्रारम्भ :—

6	धनि	सांध	निसां	धनि	सांरें	सांनि	धप	म॑ग
	0				3			
	म॑रे	गग	म॑ग	रेसा	ऩिरे	गम॑	धनि	सां—
	×				2			
7.	ऩिरे	गम॑	रेग	रेसा	गम॑	पध	म॑प	गम॑
	0				3			
	धनि	सांरें	निसां	निध	निरें	गंमं॑	गरें	सां—
	×				2			
	गम॑	धनि	रेंगं	रेंसां	निध	पम॑	गरे	सा—
	0				3			
	निरें	गरें	सांनि	धप	म॑ध	निरें	गरें	सां—
	×				2			

5.9 सारांश

स्वरलिपि संगीत को लिखित रूप में सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप रागों के विलम्बित मध्य, मध्यलय लय की रचनाओं व तराना को स्वरलिपि के माध्यम से पढ़ सकेंगे और किसी रचना को स्वरलिपिबद्ध भी कर पाऐंगे। स्वरलिपि को पढ़कर उसका सफल गायन भी कर सकेंगे। राग गायन में प्रस्तुत की जाने वाली रचनाओं के साथ तानों का प्रयोग भी आवश्यक अंग रहता है जो कि आप इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् सफलता पूर्वक करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप स्वरलिपि को पढ़ने में सक्षम होंगे और किसी भी संगीत रचना की स्वरलिपि को पढ़कर उसको क्रियात्मक रूप देंगे।

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पं0 विष्णुनारायण, *क्रमिक पुस्तक मालिका भाग–1,2,3,4,5,6* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. झा, पंडित रामाश्रय 'रामरॅग', *अभिनव गीतांजलि–भाग 1,2,3,4 व 5*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. चक्रवर्ती, डॉ0 कविता, *भारतीय संगीत को महान संगीतज्ञों की देन।*

5.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम के किन्हीं तीन रागों की विलम्बित ख्याल की स्वरलिपि लिखिए तथा चौगुन लयकारी की चार–चार तान लिखिए।
2. पाठ्यक्रम के किन्हीं चार रागों की मध्यलय ख्याल की स्वरलिपि लिखिए तथा दुगुन लयकारी की चार–चार तान भी लिखिए।
3. पाठ्यक्रम के किन्हीं दो रागों में तराना लिखिए।

इकाई 6 – पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद एवं धमार (दुगुन, तिगुन व चौगुन) लयकारी सहित लिपिबद्ध करना

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद एवं धमार

6.3.1 राग पूरियाधनाश्री

6.3.2 राग मुल्तानी

6.3.3 राग ललित

6.3.4 राग बिलासखानी तोडी

6.3.5 राग श्री

6.3.6 राग कोमल ऋषभ आसावरी

6.4 सारांश

6.5 संदर्भ ग्रंथ सूची

6.6 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, चतुर्थ सेमेस्टर (एम0पी0ए0एम0वी0–606) पाठ्यक्रम की छठवीं इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप भारतीय संगीत के ग्रन्थों का ज्ञान प्राप्त कर चुके होंगे। आप पाठ्यक्रम के रागों में बन्दिशें व उनको लिपिबद्ध करना भी सीख गये होंगे।

प्रस्तुत इकाई में विभिन्न रागों में ध्रुपद एवं धमार लिपिबद्ध किए गए है। पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद एवं धमार की दुगुन, तिगुन व चौगुन भी लिपिबद्ध कर बतायी गई है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप रागों में ध्रुपद व धमार को जान सकेंगे। आप रागों की रचनाओं को विभिन्न लयकारीयों जैसे दुगुन, तिगुन व चौगुन में लिपिबद्ध करना भी जान सकेंगे।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :–

- रागों में ध्रुपद व धमार की रचनाओं को जान सकेंगे।
- ध्रुपद व धमार की रचनाओं की लिपिबद्ध लयकारीयों को जान सकेंगे।
- रागबद्ध रचनाओं को सुनकर आप स्वंय उन्हें लिपिबद्ध कर सकेंगे तथा लयकारियों को प्रस्तुत कर सकेंगे।

6.3.1 राग पूरियाधनाश्री :–

ध्रुपद – चौताल

स्थायी

सां						सा			मं		
ध	मं	ग	रे	सा	सा	नि़	रे	मं	रे	ग	ग
सु	मि	र	न	ह	रि	को	ऽ	क	रो	ऽ	रे
0		3		4		×		0		2	
मं						प	ध		ग		
प	–	प	ध	–	प	ध	मं	ग	मं	रे	ग
जा	ऽ	सुँ	हो	ऽ	वे	भ	व	ऽ	पा	ऽ	र
0		3		4		×		0		2	
ग											
ध	मं	ग	रे	सा	सा						
सु	मि	र	न	ह	रि						
0		3		4		×					

अन्तरा

ग			ध			ध					
मं	ग	–	मं	–	ध	सां	–	सां	रें	–	सां
य	ह	ऽ	सी	ऽ	ख	जा	ऽ	न	मा	ऽ	न
×		0		2		0		3		4	
नि								ध			
सां	नि	रें	गं	रें	सां	सां	निध	रें	नि	ध	प
क	ह्यो	ऽ	है	ऽ	पु	रा	ऽऽ	न	न	मों	ऽ
×		0		2		0		3		4	
मं			ध			ध					
प	पमं	ध	मं	–	ग	मं	ध	रें	नि	ध	प
भ	गऽ	ऽ	वा	ऽ	न	आ	ऽ	ऽ	प	ही	ऽ
×		0		2		0		3		4	
ध	ध		ग			ग					
नि	मं	ग	मं	रे	ग	ध	मं	ग	रे	सा	सा
क	र	ऽ	ता	ऽ	र	सु	मि	र	न	ह	रि
×		0		2		0		3		4	

स्थायी – दुगुन

सा					
ध	मं	ग	रे	सा	सा
सु	मि	र	न	ह	रि
0		3		4	

सा					
नि़	रे	मं	धमं	गरे	सासा
को	ऽ	क	सुमि	रन	हरि
×		0		2	
निरे	मंरे	गम	प–	पध	–प
कोऽ	करो	ऽरे	जाऽ	सुँहो	ऽवे
0		3		4	
धमं	गमं	रेग	धमं	गरे	सासा
भव	ऽपा	ऽर	सुमि	रन	हरि
×		0		2	

स्थायी – तिगुन

सा					
ध	मं	ग	रे	सा	सा
सु	मि	र	न	ह	रि
0		3		4	
सा			मं		
नि़	रे	मं	रे	ग	ग
को	ऽ	क	रो	ऽ	रे
×		0		2	
मं					
प	–	धमंग	रेसासा	नि़रेमं	रेगग
जा	ऽ	सुमिर	नहरि	कोऽक	रोऽरे
0		3		4	
प–प	ध–प	धमं ग	मंरेग	धमं ग	रेसासा
जाऽसुँ	होऽवे	भवऽ	पाऽर	सुमिर	नहरि
×		0		2	

स्थायी – चौगुन

सा					
ध	मं	ग	रे	12धमं	गरेसासा
सु	मि	र	न	12सुमि	रनहरि
0		3		4	
नि़रेमं रे	गगप–	पध–प	धमंगमं	रेगधमं	गरेसासा
कोऽकरो	ऽरेजाऽ	सुँहोऽवे	भवऽपा	ऽरसुमि	रनहरि
×		0		2	

अन्तरा – दुगुन

मंग	–मं	–ध	सां–	सारें	–सां
यह	ऽसी	ऽख	जाऽ	नमा	ऽन
×		0		2	
सांनि	रेंगं	रेंसां	सांनिध	रेंनि	धप
कह्यो	ऽहै	ऽपु	राऽऽ	नन	मोऽ
0		3		4	
पपमं	धमं	–ग	मंध	रेंनि	धप
भगऽ	ऽवा	ऽन	आऽ	ऽप	हीऽ
×		0		2	
निमं	गमं	रेग	धमं	गरे	सासा
कर	ऽता	ऽर	सुमि	रन	हरि
0		3		4	

अन्तरा – तिगुन

ग			ध		
मं	ग	–	मं	–	ध
य	ह	ऽ	सी	ऽ	ख
×		0		2	
ध					
सां	–	मंग–	मं –ध	सां–सां	रें–सां
जा	ऽ	यहऽ	सीऽख	जाऽन	माऽन
0		3		4	
सांनिरें	गरेंसां	सांनिधरें	निधप	पपमंध	मं–ग
कह्योऽ	हैऽपु	राऽऽन	नमोऽ	भगऽऽ	वाऽन
×		0		2	
मंधरें	निधप	निमंग	मंरेग	धमंग	रेसासा
आऽऽ	पहीऽ	करऽ	ताऽर	सुमिर	नहरि
0		3		4	

अन्तरा – चौगुन

मंग–मं	–धसां–	सारें–सां	सानिरेंगं	रेंसांसांनिध	रेंनिधप
यहऽसी	ऽखजाऽ	नमाऽन	कह्योऽहै	ऽपुराऽऽ	ननमोऽ
×		0		2	
पपमंधमं	–गमंध	रेंनिधप	निमंगमं	रेगधमं	गरेसासा

भगऽऽवा	ऽनआऽ	ऽपहीऽ	करऽता	ऽरसुमि	रनहरि
0		3		4	

धमार–स्थाई

सा											म॑		
नि़	रे॒	ग	रे॒सा	नि़	रे॒	–	सा	सा	सा	–	प	प	–
मो	ह	न	खेऽ	ला	ऽ	ऽ	री	ऽ	खे	ऽ	ल	न	ऽ
3				×					2		0		
म॑				ध॒									
ध॒	–	प	–	म॑	ध॒	–	म॑	ग	म॑	रे॒	ग	रे॒	सा
आ	ऽ	ए	ऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री
3				×					2		0		

अन्तरा

ध॒											नि		
म॑	ध॒	–	सां	सां	सां	–	सां	सां	–	सां	रें॒	सां	सां
अ	बी	ऽ	र	गु	ला	ऽ	ल	के	ऽ	स	र	पि	च
×					2		0			3			
सां					सां		ध॒						
नि	–	ध॒	नि	–	निरें॒	नि	नि	–	ध॒	–	–	प	–
का	ऽ	ऽ	री	ऽ	लेऽ	सं	गा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	वे	ऽ
×					2		0			3			
ध॒													
म॑	ध॒	नि	म॑	ग	म॑	रे॒	ग	रे॒	सा				
हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री				
×					2		0			3			

स्थाई – दुगुन

सा						
नि़	रे॒	नि़रे॒	गरे॒सा	नि़रे॒	–सा	–सा
मो	ह	मोह	नखेऽ	लाऽ	ऽरी	ऽखे
3				×		
–प	प–	ध॒–	प–	म॑ध॒	–म॑	गम॑
ऽल	नऽ	आऽ	एऽ	होऽ	ऽऽ	ऽऽ
		2		0		
रे॒ग	रे॒सा	नि़रे॒	गरे॒सा	नि		
ऽऽ	ऽरी	मोह	नखेऽ	ला		
3				×		

स्थाई – तिगुन

सा						
नि़	रे	ग	रेसा	नि़	रे	–
मो	ह	न	खेऽ	ला	ऽ	ऽ
3				×		

1नि़रे	गरेसानि़	रे–सा	–सा–	पप–	ध–मं	–मंध
1मोह	नखेऽला	ऽऽरी	ऽखेऽ	लनऽ	आऽए	ऽहोऽ
		2		0		

–मंग	मंरेग	रेसानि़	रेगरेसा	नि़
ऽऽऽ	ऽऽऽ	ऽरीमो	हनखेऽ	ला
3				×

स्थाई – चौगुन

नि़	रे	ग	रेसा	नि़	रे	–
मो	ह	न	खेऽ	ला	ऽ	ऽ
3				×		

सा	–	सा	नि़रेगरेसा	नि़रे–सा	–सा–प	प–ध–
री	ऽ	खे	मोहनखेऽ	लाऽऽरी	ऽखेऽल	नऽआऽ
		2		0		

प–मंध	–मंगमं	रेगरेसा	नि़रेगरेसा	नि़
एऽहोऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽरी	मोहनखेऽ	ला
3				×

अन्तरा – दुगुन

मं	ध	–	सां	सां	सां	–
अ	बी	ऽ	र	गु	ला	ऽ
×					2	

मंध	–सां	सांसां	–सां	सां–	सांरें	सांसां
अबी	ऽर	गुला	ऽल	केऽ	सर	पिच
0			3			

नि–	धनि	–निरें	निनि	–ध	––	प–
काऽ	ऽरी	ऽलेऽ	सगा	ऽऽ	ऽऽ	वेऽ
×					2	

मंध	निमं	गमं	रेग	रेसा	नि़रे	गरेसा
होऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽरि	मोह	नखेऽ
0			3			

अन्तरा – तिगुन

मंध–	सांसांसां	–सांसां	–सारें	सांसांनि	–धनि	–निरेंनि
अबीऽ	रगुला	ऽलके	ऽसर	पिचका	ऽऽरी	ऽलेऽसं
×					2	
नि–ध	––प	–मंध	निमंग	मंरेग	रेसानि	रेगरेसा
गऽध	ऽऽवे	ऽहोऽ	ऽऽऽ	ऽऽऽ	ऽरीमो	हनखेऽ
0			3			

अन्तरा – चौगुन

मं	ध	–	12मंध	–सासासां	–संसां–	सारेंसांसां
अ	बी	ऽ	12अबी	ऽरगुला	ऽलकेऽ	सरपिच
×					2	
नि–धनि	–निरेंनिनि	–ध––	प–मंध	निमंगमं	रेगरेसा	निरेगरेसा
काऽऽरी	ऽलेऽसंगा	ऽऽऽऽ	वेऽहोऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽरी	मोहनखेऽ
0			3			

6.3.2 राग मुल्तानी :–

ध्रुपद – चौताल

स्थायी

प	–	प	ग	मं	प	ग	मं	प	मंग	रेसा	सा
सा	ऽ	व	रो	ऽ	स	लो	ऽ	ने	काऽ	ऽऽ	न्हा
×		0		2		0		3		4	
नी	सा	–	मं	ग	मं	प	नीसां	नीसां	नी	ध	प
म	न	ऽ	ह	ऽ	र	ली	ऽऽ	ऽऽ	नो	मो	रा
×		0		2		0		3		4	
ग	मं	प	नी	ध	प	सां	–	नी	ध	प	–
मु	र	ऽ	लीह	ऽ	की	धु	ऽ	न	सौं	ऽ	ऽ
×		0		2		0		3		4	
मं	प	ग	मं	ध	प	ग	मं	–	ग	रे	सा
सु	ध	ऽ	ऽ	बि	स	रा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ई
×		0		2		0		3		4	

अन्तरा

प	प	–	ग	मं	प	नी	नी	नी	सां	–	सा
ज	मु	ऽ	ना	ऽ	के	नी	ऽ	र	ती	ऽ	र
×		0		2		0		3		4	
प	नी	नी	सां	गं	रें	नी	सां	नी	ध	प	मं
गा	ऽ	पी	ग्व	ऽ	ल	धे	ऽ	नु	ऽ	रे	नु
×		0		2		0		3		4	

नी	सां	गं	रें	रें	सां	नी	सां	रें	सां	–	सां
सु	न	ऽ	ऽ	सु	न	ग	यो	ऽ	धी	ऽ	र
×		0		2		0		3		4	
नी	सांनी	ध	प	प	प	ग	मं	–	ग	रे	सा
व्या	ऽऽ	कु	ल	भ	ये	धा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ये
×		0		2		0		3		4	

स्थायी – दुगुन

प–	पग	मंप	गमं	पमंग	रेसासा
साऽ	वरो	ऽस	लोऽ	नेकाऽ	ऽऽन्हा
×		0		2	
निसा	–मं	गमं	पनिसां	निसांनि	धप
मन	ऽह	ऽर	लीऽऽ	ऽऽनो	मोरा
0		3		4	
गमं	पनी	धप	सां–	निध	प–
मुर	ऽली	ऽकी	धुऽ	नसौं	ऽऽ
×		0		2	
मंप	गमं	धप	गमं	–ग	रेसा
सुध	ऽऽ	बिस	राऽ	ऽऽ	ऽई
0		3		4	

स्थायी – तिगुन

प	–	प	ग	मं	प
सा	ऽ	व	रो	ऽ	स
×		0		2	
ग	मं	प–प	गमंप	गमंप	मंगरेसासा
लो	ऽ	साऽव	रोऽस	लोऽने	काऽऽऽन्हा
0		3		4	
नीसा–	मंगमं	पनीसांनीसां	नीधप	गमंप	नीधप
मनऽ	हऽर	लीऽऽऽऽ	नोमोरा	मुरऽ	लीऽकी
×		0		2	
सां–नी	धप–	मंपग	मंधप	गमं–	गरेसा
धुऽन	सौंऽऽ	सुधऽ	ऽबिस	राऽऽ	ऽऽई
0		3		4	

स्थायी – चौगुन

प–पग	म॑पगम॑	पम॑गरेसासा	नीसा–म॑	गम॑पनीसां	नीसांनीधप
साऽवरो	ऽसलोऽ	नेकाऽऽऽन्हा	मनऽह	ऽरलीऽऽ	ऽऽनोमोरा
×		0		2	
गम॑पनी	धपसां–	निधप–	म॑पगम॑	धपगम॑	–गरेसा
मुरऽली	ऽकीधुऽ	नसौंऽऽ	सुधऽऽ	बिसराऽ	ऽऽऽई
0		3		4	

अन्तरा – दुगुन

पप	–ग	म॑प	निनि	निसां	–सां
जमु	ऽना	ऽके	नीऽ	रती	ऽर
×		0		2	
पनि	निसां	गरें	निसां	निध	पम॑
गाऽ	पीग्व	ऽल	धेऽ	नुऽ	रेनु
0		3		4	
निसां	गरें	रेंसां	निसां	रेंसां	–सां
सुन	ऽऽ	सुन	गयो	ऽधी	ऽर
×		0		2	
निसांनी	धप	पप	गम॑	–ग	रेसा
व्याऽऽ	कुल	भये	धाऽ	ऽऽ	ऽये
0		3		4	

अन्तरा – तिगुन

प	प	–	ग	म॑	प
ज	मु	ऽ	ना	ऽ	के
×		0		2	
नि	नि	पप–	गम॑प	निनिनि	सां–सां
नी	ऽ	जमुऽ	नाऽके	नीऽर	तऽर
0		3		4	
पनिनि	सांगरें	निसांनि	धपम॑	निसांगं	रेंरेंसां
गाऽपी	ग्वऽल	धेऽनु	ऽरेनु	सुनऽ	ऽसुन
×		0		2	
निसांरें	सां–सां	निसांनिध	पपप	गम॑–	गरेसा
गयोऽ	धीऽर	व्याऽऽकु	लभये	धाऽऽ	ऽऽये
0		3		4	

अन्तरा – चौगुन

पप–ग	मंपनिनि	नीसां–सां	पनिनिसां	गंरेंनिसां	निधपमं
जमुऽना	ऽकेनीऽ	रतऽर	गाऽपीग्व	ऽलधेऽ	नुऽरेनु
×		0		2	
निसांगंरें	रेंसांनिसां	रेंसां–सां	निसांनीधप	पपगमं	–गरेसा
सुनऽऽ	सुनगयो	ऽधीऽर	व्याऽऽकुल	भयेधऽ	ऽऽऽये
0		3		4	

धमार
स्थाई

मं		मं								रें			
प	प	ग	मं	प	नि	–	–	–	सां	सां	नि	ध	प
दे	ख	स	ब	आ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ई	ऽ	हैं	ऽ	ऽ
3				×					2		0		
मं				मं									
प	ग	मं	प	प	ग	–	–	–	रे	रे	सा	–	–
ऽ	ऽ	बृ	ज	की	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ब	धु	वा	ऽ	ऽ
3				×					2		0		
सा							ग		प				
नि़	सा	सा	–	सा	नि़	सा	मं	ग	मं	मं	प	–	–
ऽ	ऽ	न	ऽ	प	क	ऽ	र	ऽ	मि	ल	का	ऽ	ऽ
3				×					2	रें	0		
ध	–	प	–	प	नि	–	–	–	सां	सां	नि	ध	प
न्ह	ऽ	ले	ऽ	आ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ई	ऽ	हैं	ऽ	ऽ
3				×					2		0		

अन्तरा

			मं		प		सां						
प	–	–	ग	–	मं	प	नि	–	–	सां	–	सां	–
आ	ऽ	ऽ	न	ऽ	खि	र	की	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	में	ऽ
×					2		0			3			
सां							सां	सां					
नि	–	–	सां	गं	रें	सां	नि	नि	सां	नि	ध	प	–
खे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ल	र	चो	ऽ	ऽ	है	ऽ	ऽ	ऽ
×					2		0			3			
मं												मं	
प	नि	–	नि	–	सां	रें	नि	ध	–	प	–	ग	मं
त	रू	ऽ	नी	ऽ	ऽ	ऽ	बा	ऽ	ऽ	ल	ऽ	उ	ठ

×					2		0			3			
						रें				मं		मं	
प	नि	–	–	–	सां	सां	नि	ध	प	प	प	ग	मं
धा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ई	ऽ	हैं	ऽ	ऽ,	दे	ख	स	ब
×					2		0			3			

स्थाई – दुगुन

मं						
प	प	पप	गमं	पनि	––	–सां
दे	ख	देख	सब	आऽ	ऽऽ	ऽई
3				×		
सांनि	धप	पग	मंप	पग	––	–रें
ऽहैं	ऽऽ	ऽऽ	बृज	कीऽ	ऽऽ	ऽब
		2		0		
रेसा	––	निसा	सा–	सानि	साग	गमं
धुवा	ऽऽ	ऽऽ	नऽ	पक	ऽर	ऽमि
3				×		
मंप	––	ध–	प–	पनि	––	–सां
लका	ऽऽ	न्हऽ	लेऽ	आऽ	ऽऽ	ऽई
		2		0		
सांनि	धप	पप	गमं	प		
ऽहैं	ऽऽ	देख	सब	आ		
3				×		

स्थाई – तिगुन

मं		मं				
प	प	ग	मं	प	नि	–
दे	ख	स	ब	आ	ऽ	ऽ
3				×		
			रें			
–	–	सां	सां	नि	पपग	मंपनि
ऽ	ऽ	ई	ऽ	हैं	देखस	बआऽ
		2		0		
–––	सांसांनि	धपप	गमंप	पग–	––रें	रेसा–
ऽऽऽ	ईऽहैं	ऽऽऽ	ऽबृज	कीऽऽ	ऽऽब	धुवाऽ
3				×		
–निसा	सा–सा	निसाग	गमंमं	प––	ध–प	–पनि–
ऽऽऽ	नऽप	कऽर	ऽमिल	काऽऽ	न्हऽले	ऽआऽ
		2		0		

———	सांसांनि	धपप	पगमं	प
SSS	ईSहैं	SSदे	खसब	आ
3				×

स्थाई – चौगुन

मं		मं				
प	प	ग	पपगमं	पनि——	—सांसांनि	धपपग
दे	ख	स	देखसब	आSSS	SईSहैं	SSSS
3				×		

मंपपग	———रे	रेसा——	निसासा—	सानिसाग	गमंमंप	——ध—
बृजकीS	SSSब	धुवाSS	SSनS	पकSर	Sमिलका	SSन्हS
		2		0		

प—पनि	———सां	सांनिधप	पपगमं	प
लेSआS	SSSई	SहैंSS	देखसब	आ
3				×

अन्तरा – दुगुन

प—	—ग	—मं	पनि	——	सां—	सां—
आS	Sन	Sसि	रकी	SS	SS	मेंS
×					2	
नि—	—सां	गरें	सांनि	निसां	निध	प—
खेS	SS	Sल	रच्यो	SS	हैS	SS
0			3			
पनि	—नि	—सां	रेंनि	ध—	प—	गमं
तरू	Sनी	SS	Sबा	SS	लS	उठ
×					2	
पनि	——	—सां	सांनि	धप	पप	गमं
धाS	SS	Sई	Sहैं	SS	देख	साब
0			3			

अन्तरा – तिगुन

			मं		प	
प	–	–	ग	–	मं	प
आ	S	S	न	S	खि	र
×					2	
सां						
नि	–	1प–	–ग–	मंपनि	––सां	–सां–
की	S	1आS	SनS	सिरकी	SSS	SमेंS
0			3			

नि––	सांगंरें॒	सांनिनि	सांनिध	प–प	नि–नि	–सांरें॒
खेऽऽ	ऽऽल	रच्योऽ	ऽहैंऽ	ऽऽत	रूऽनी	ऽऽऽ
×					2	
निध–	प–ग	मंपनि	–––	सांसांनि	धपप	पगमं
बाऽऽ	लऽउ	ऽधाऽ	ऽऽऽ	ईऽहैं	ऽऽदे	खसब
0			3			

अन्तरा – चौगुन

प––ग	–मंपनि	––सां–	सां–नि–	–सांगंरें॒	सांनिनिसां	निधप–
आऽऽन	ऽसिरकी	ऽऽऽऽ	मेंऽखेऽ	ऽऽऽल	रच्योऽऽ	हैंऽऽऽ
×					2	
पनि–नि	–सांरें॒नि	ध–प–	गमंपनि	–––सां	सांनिधप	पपगमं
तरू ऽनी	ऽऽऽबा	ऽऽलऽ	उठधाऽ	ऽऽऽई	ऽहैंऽऽ	देखसब
0			3			

6.3.3 राग ललित :–

ध्रुपद – चौताल

स्थाई

											ग
ग	नि़	रे॒	ग	म	म	म	–	–	मं	–	मग
अ	ध	ऽ	म	ऽ	उ	धा	ऽ	ऽ	र	ऽ	नऽ
0		3		4		×		0		2	
									ग		
ग	ग	ग	मं	ध	मं	ध	–	मं	म	–	ग
बि	र	द	रा	ऽ	व	रो	ऽ	कि	वा	ऽ	को
0		3		4		×		0		2	
ग			ध			ध					
म	–	ग	मं	ध	–	सां	–	नि	रें॒	–	सां
दे	ऽ	खि	अ	त	ऽ	मो	ऽ	प	ती	ऽ	त
0		3		4		×		0		2	
नि						ध			ग		
सां	सांनि	रें॒	नि	ध	–	मं	ध	मं	म	–	ग
की	ऽऽ	ऽ	सु	धि	ऽ	ना	ऽ	हिं	तो	ऽ	हे
0		3		4		×		0		2	

अन्तरा

			मं								
–	ग	–	ध	मं	ध	सां	–	नि	रें॒	–	सां
ऽ	के	ऽ	व	ऽ	ट	भी	ऽ	ऽ	ली	ऽ	नि
0		3		4		×		0		2	

नि						नि					
सां	नि	रें	गं	रें	सां	सां	सांनि	रें	नि	–	ध
गी	ऽ	ध	रा	ऽ	ज	म	तिऽ	ऽ	दी	ऽ	नि
0		3		4		×		0		2	
ध	–	मं	ध	सां	धमं	ध	–	मं	म	–	म
दी	ऽ	न	जा	ऽ	नऽ	दी	ऽ	न	बं	ऽ	धु
0		3		4		×		0		2	
म		ध				नि			रें		
ग	–	मं	ध	सां	सां	सां	–	सांनि	नि	–	ध
बा	ऽ	र	न	ऽ	उ	भा	ऽ	रऽ	ली	ऽ	नि
0		3		4		×		0		2	
ध											
मं	ध	मं	म	–	ग	–	ग	नि़	रे	ग	म
दी	ऽ	न	जो	ऽ	हे	ऽ	अ	ध	ऽ	म	उ
0		3		4		×		0		2	

स्थाई – दुगुन

ग	नि़	रे	गनि़	रेग	मम	
अ	ध	ऽ	अध	ऽम	ऽउ	
0		3		4		
म–	– मं	–मग	गग	गमं	धमं	
धाऽ	ऽर	ऽनऽ	बिर	दरा	ऽव	
×		0		2		
ध–	मंम	–ग	म–	गमं	ध–	
रोऽ	किवा	ऽको	देऽ	खिउ	तऽ	
0		3		4		
सां–	निरें	–सां	सांसांनि	रेंनि	ध–	
मोऽ	पती	ऽत	कीऽऽ	ऽसु	धिऽ	
×		0		2		
मंध	मंम	–ग	गनि़	रेग	मम	म
नाऽ	हिंतो	ऽहे	अध	ऽम	ऽउ	धा
0		3		4		×

स्थाई – तिगुन

गनि़रें	गमम	म––	मं–मग	गगग	मंधमं
अधऽ	मऽउ	धाऽऽ	रऽनऽ	बिरद	राऽव
0		3		4	
ध–मं	म–ग	म–ग	मंध–	सां–नि	रें–सां
रोऽकि	वाऽको	देऽखि	अतऽ	मोऽप	तीऽत
×		0		2	

सांसांनिरें	निध–	मंधमं	म–ग	गनि़रें	गमम
कीऽऽऽ	सुधिऽ	नाऽहिं	तोऽहे	अधऽ	मऽउ
0		3		4	
म					
धा					
×					

स्थाई – चौगुन

ग	नि़	रे	ग	12गनि	रेगमम
अ	ध	ऽ	म	12 अध	ऽमऽउ
0		3		4	
म––मं	–मगगग	गमंधमं	ध–मंम	–गम–	गमंध–
धाऽऽर	ऽनऽबिर	दराऽव	रोऽकिवा	ऽकोदेऽ	खिअतऽ
×		0		2	
सां–निरें	–सांसांसांनि	रेंनिध–	मंधमंम	–ग गनि	रेगमम
मोऽपती	ऽतकीऽऽ	ऽसधिऽ	नाऽहिंतो	ऽहे अध	ऽमऽउ
0		3		4	
म					
धा					
×					

अन्तरा – दुगुन

			मं		
–	ग	–	ध	मं	ध
ऽ	के	ऽ	व	ऽ	ट
0		3		4	
सां	–	नि	–ग	–ध	मंध
भी	ऽ	ऽ	ऽके	ऽव	ऽट
×		0		2	
सां–	निरें	–सां	सांनि	रेंगं	रेंसां
भीऽ	ऽली	ऽनि	गीऽ	धरा	ऽज
0		3		4	0
सांसांनि	रेंनि	–ध	ध–	मंध	सांधमं
गतिऽ	ऽदी	ऽनि	दीऽ	नजा	ऽनऽ
×		0		2	
ध–	मंम	–म	ग–	मंध	सांसां
दीऽ	नबं	ऽधु	बाऽ	रन	ऽउ
0		3		4	0
सां–	सांनिनि	–ध	मंध	मंम	–ग
भाऽ	रऽली	ऽनि	दीऽ	नजो	ऽहे
×		0		2	

–ग	नि़रे	गम	–ग	–ध	मंध	सां
ऽअ	धऽ	मउ	ऽके	ऽव	ऽट	भी
0		3		4	0	×

अन्तरा – तिगुन

			मं		
–	ग	–	ध	मं	ध
ऽ	के	ऽ	व	ऽ	ट
0		3		4	
सां	–	–ग–	धमंध	सां–नि	रें–सां
भी	ऽ	ऽकेऽ	वऽट	भीऽऽ	लीऽनि
×		0		2	
सांनिरें	गरेंसां	सांसांनिरें	नि–ध	ध–मं	धसांधमं
गीऽध	राऽज	गतिऽऽ	दीऽनि	दीऽन	जाऽनऽ
0		3		4	
ध–मं	म–म	ग–मं	धसांसां	सां–सानि	नि–ध
दीऽन	बंऽधु	बाऽर	नऽउ	भाऽरऽ	लीऽनि
×		0		2	
मंधमं	म–ग	–गनि़	रे़गम	–ग–	धमंध
दीऽन	जोऽहे	ऽअध	ऽमउ	ऽकेऽ	वऽट
0		3		4	
सां					
भी					
×					

अन्तरा – चौगुन

			मं		
–	ग	–	ध	मं	ध
ऽ	के	ऽ	व	ऽ	ट
0		3		4	
सां	–	नि	–ग–ध	मंधसां–	निरें–सां
भी	ऽ	ऽ	ऽकेऽव	ऽटभीऽ	ऽलीऽनि
×		0		2	
सांनिरेंगं	रेंसांसांसांनि	रेंनि–ध	ध–मंध	सांधमंध–	मंम–म
गीऽधरा	ऽजगतिऽ	ऽदीऽनि	दीऽनजा	ऽनऽदीऽ	नबंऽधु
0		3		4	
ग–मंध	सांसांसां–	सांनिनि–ध	मंधमंम	–ग–ग	नि़रेगम
बाऽरन	ऽउभाऽ	रऽलीऽनि	दीऽनजो	ऽहेऽअ	धऽमउ
×		0		2	

धमार

स्थाई

कण	सा											मं		
स्वर	नि़	रे	ग	म	मं	–	–	म	–	ग	म	ग	म	मं
बोल	आ	ज	रं	ग	भी	ऽ	ऽ	ने	ऽ	ऽ	ऽ	दं	ऽ	ऽ
ताल	3				×					2		0		
कण					ध							नि		
स्वर	म	म	ग	ग	मं	ध	–	सां	सां	सां	–	सां	–	रें
बोल	प	त	मि	ल	खे	ऽ	ऽ	ल	त	नी	ऽ	के	ऽ	र
ताल	3				×					2		0		
कण	रें				ध			ध						
स्वर	नि	नि	ध	ध	मं	ध	–	सां	–	मं	ध	मं	–	मग
बोल	ह	स	ऽ	र	ह	स	ऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ	हो	ऽ	रीऽ
ताल	3				×					2		0		

अन्तरा

स्वर	ध	मं	ध	सां	–	सां	–	सां	सां	–	रें	–	सां	–
बोल	ज्यों	ऽ	ऽ	ज्यों	ऽ	खे	ऽ	ल	त	ऽ	त्यों	ऽ	त्यों	ऽ
ताल	×					2		0			3			
कण	सां							सां			रें			
स्वर	नि	रें	गं	रें	सां	सां	सां	नि	सां	रें	नि	नि	ध	–
बोल	री	ऽ	ऽ	झ	त	रं	ग	स	ब	ऽ	सां	व	रे	ऽ
ताल	×					2		0			3			
कण	ध			ध		ध								
स्वर	मं	ध	–	सां	सां	मं	ध	मं	–	मग				
बोल	ले	ऽ	ऽ	औ	र	गो	ऽ	ऽ	ऽ	रीऽ				
ताल	×					2		0			3			

स्थाई – दुगुन

कण	सा								
स्वर	नि़	रे	ग	म	मं	–	–	म	–
बोल	आ	ज	रं	ग	भी	ऽ	ऽ	ति	ऽ
ताल	3				×				

स्वर	निरे	गम	मं–	–म	–ग
बोल	आज	रंग	भीऽ	ऽने	ऽऽ
ताल	2		0		

मग	ममं	मम	गग	मंध	–सां	सांसां

ऽदं	ऽऽ	पत	मिल	खेऽ	ऽल	तनी
3				×		
–सां	–रें	निनि	धध	मंध	–सां	–मं
ऽके	ऽर	हस	ऽर	हस	ऽहो	ऽऽ
		2		0		

धमं	–मग	नि॒रे	गम	मं
ऽहो	ऽरीऽ	आज	रंग	भी
3				×

स्थाई – तिगुन

सा नि॒	रे	12नि	रेगम	मं––	म–ग	मगम
आ	ज	12आ	जरंग	भीऽऽ	नेऽऽ	ऽदंऽ
3				×		
मंमम	गगमं	ध–सां	सांसां–	सां–रें	निनिध	धमंध
ऽपत	मिलखे	ऽऽल	तनीऽ	केऽर	हसऽ	रहस
		2		0		
–सां–	मंधमं	–मगनि	रेगम	मं		
ऽहोऽ	ऽऽहो	ऽरीआ	जरंग	भी		
3				×		

स्थाई – चौगुन

सा नि॒	रे	ग	म	मं	–	12नि॒रे
आ	ज	रं	ग	भी	ऽ	12आज
3				×		
गममं–	–म–ग	मगममं	ममगग	मंध–सां	सांसां–सां	–रेंनिनि
रंगभीऽ	ऽनेऽऽ	ऽदंऽऽ	पतमिल	खेऽऽल	तनीऽके	ऽरहस
		2		0		
धधमंध	–सां–मं	धमं–मग	नि॒रेगम	मं		
ऽरहस	ऽहोऽऽ	ऽहोऽरीऽ	आजरंग	भी		
3				×		

अन्तरा – दुगुन

ध	मं	ध	सां	सां	सां	–
ज्यों	ऽ	ऽ	ज्यों	ऽ	खे	ऽ
×					2	
धमं	धसां	–सां	–सां	सां–	रें–	सां–
ज्योंऽ	ऽज्यों	ऽखे	ऽल	तऽ	त्योंऽ	त्योंऽ
0			3			

निरें	गरें	सांसां	सांनि	सारें	निनि	ध–	
रीऽ	ऽझ	तरं	गस	बऽ	साँव	रेऽ	
×					2		
मंध	–सां	सांमं	धमं	–मग	निरे	गम	
लेऽ	ऽऔ	रगो	ऽऽ	ऽरी	आज	रंग	
0			3				

अन्तरा – तिगुन

धमंध	सां–सां	–सांसां	–रें–	सां–नि	रेंगरें	सांसांसां	
ज्योंऽऽ	ज्योंऽखे	ऽलत	ऽत्योंऽ	त्योंऽरी	ऽऽझ	तरंग	
×					2		
निसारें	निनिध	–मंध	–सांसां	मंधमं	–मगनि	रेगम	मं
सबऽ	साँवरे	ऽलेऽ	ऽऔर	गोऽऽ	ऽरीऽआ	जरंग	भी
0			3				×

अन्तरा – चौगुन

ध	मं	ध	12धमं	धसां–सां	–सांसां–	रें–सां–	
ज्यों	ऽ	ऽ	12ज्योंऽ	ऽज्योंऽखे	ऽलतऽ	त्योंऽत्योंऽ	
×					2		
निरेंगरें	सांसांसांनि	सारेंनिनि	ध–मंध	–सांसांमं	धमं–मग	निरेगम	मं
रीऽऽझ	तरंगस	बऽसाँव	रेऽलेऽ	ऽऔरगो	ऽऽऽरीऽ	आजरंग	भी
0			3				×

6.3.4 राग बिलासखानी तोडी :–

ध्रुपद – चौताल

स्थाई

									रे		
सा	रे	ग	प	ध	नि	ध	म	ग	ग	रे	सा
आ	ऽ	ऽ	न	न्द	भ	यो	ऽ	ऽ	न	ग	र
×		2		0		3		0		4	
						ग			रे		
रे	नि	ध	सा	–	सा	रे	ग	–	ग	रे	सा
धू	ऽ	म	धा	ऽ	म	है	ऽ	ऽ	ऽ	ग	र
×		2		0		3		0		4	
सा	रे	ग	–	म	ग	रे	ग	–	प	–	प

प्र	ग	टे	ऽ	द	स	र	थ	ऽ	ध	ऽ	र
×		2		0		3		0		4	
ध	–	सां	रें	नि	ध	नि	ध	म	ग	रे	सा
ती	ऽ	न	लो	ऽ	क	ठा	ऽ	कु	रे	ऽ	ऽ
×		2		0		3		0		4	

अन्तरा

ध	म	ग	प	–	ध	सां	सां	–	रें	रें	सां
रा	ऽ	ऽ	म	ऽ	भ	र	त	ऽ	ल	ख	न
×		2		0		3		0		4	
रें	नि	नि	सां	–	सां	रें	–	गं	रें	सां	सां
श	ऽ	त्रु	ह	ऽ	न	श	ऽ	त्रु	ह	न	न
×		2		0		3		0		4	
रें	नि	ध	सां	रें	नि	ध	नि	ध	म	–	ग
सु	र	न	र	मु	नि	प	र	मा	न	ऽ	न्द
×		2		0		3		0		4	
ग	रे	ग	प	ध	नि	नि	ध	म	ग	रे	सा
नि	र	खि	बा	ऽ	ल	बां	ऽ	कु	रे	ऽ	ऽ
×		2		0		3		0		4	

स्थाई – दुगुन

सारे	गप	धनि	धम	गग	रेसा	रेनि	धसा	–सा	रेग	–ग	रेसा	
आऽ	ऽन	न्दभ	योऽ	ऽन	गर	धूऽ	मधा	ऽम	हैऽ	ऽड	गर	
×		2		0		3		0		4		
सारे	ग–	मग	रेग	–प	–प	ध–	सांरें	निध	निध	मग	रेसा	सा
प्रग	टेऽ	दस	रथ	ऽध	ऽर	तीऽ	नलो	ऽक	ठाऽ	कुरे	ऽऽ	आ
×		2		0		3		0		4		×

स्थाई – तिगुन

सा	रे	ग	प	ध	नि
आ	ऽ	ऽ	न	न्द	भ
×		2		0	
ध	म	सारेग	पधनि	धमग	गरेसा

यो	ऽ	आऽऽ	नन्दभ	योऽऽ	नगर	
3		0		4		
रेनिध धूऽम	सा–सा धाऽम	रेग– हैऽऽ	गरेसा डगर	सारेग प्रगटे	–मग ऽदस	
×		2		0		
रेग– रथऽ	प–प धऽर	ध–सां तीऽन	रेंनिध लोऽक	निधम ठाऽकु	गरेसा रेऽऽ	सा आ
3		0		4		×

स्थाई – चौगुन

सारेगप अऽऽन	धनिधम न्दभयोऽ	गगरेसा ऽनगर	रेनिधसा धूऽमधा	–सारेग ऽमहैऽ	–गरेसा ऽडगर	
×		2		0		
सारेग– प्रगटेऽ	मगरेग दसरथ	–प–प ऽधऽर	ध–सारें तीऽनलो	निधनिध ऽकठाऽ	मगरेसा कुरेऽऽ	सा आ
3		0		4		×

अन्तरा – दुगुन

धम राऽ	गप ऽम	–ध ऽभ	सांसां रत	–रें ऽल	रेंसां खन	
×		2		0		
रेंनि शऽ	निसां त्रुह	–सां ऽन	रें– शऽ	गरें त्रुह	सांसां नन	
3		0		4		
रेंनि सुर	धसां नर	रेंनि मुनि	धनि पर	धम मान	–म ऽन्द	
×		2		0		
गरे निर	गप खिबा	धनि ऽल	निध बांऽ	मग कुरे	रेसा ऽऽ	ध रा
3		0		4		×

अन्तरा – तिगुन

ध रा	म ऽ	ग ऽ	प म	– ऽ	ध भ	
×		2		0		
सां र	सां त	धमग राऽऽ	प–ध मऽभ	सांसां– रतऽ	रेंरेंसां लखन	
3		0		4		
रेंनिनि शऽत्रु	सां–सां हऽन	रें–गं शऽत्रु	रेंसांसां हनन	रेंनिध सुरन	सांरेंनि रमुनि	
×		2		0		
धनिध	म–म	गरेग	पधनि	निधम	गरेसा	ध

परमा	नऽन्द	निरखि	बाऽल	बांऽकु	रेऽऽ	रा
3		0		4		×

अन्तरा – चौगुन

धमगप	—धसांसां	—रेंरेंसां	रेंनिनिसां	—सारें—	गरेंसांसां	
राऽऽम	ऽभरत	ऽलखन	शऽत्रुह	ऽनशऽ	त्रुहनन	
×		2		0		
रेंनिधसां	रेंनिधनि	धम—म	गरेगप	धनिनिध	मगरेसा	ध
सुरनर	मुनिपर	मानऽन्द	निरखिवा	ऽलबांऽ	कुरेऽऽ	रा
3		0		4		×

धमार–स्थाई

सा	—	रे	नि	सा	सा	रे	ग	—	ग	म	ग	रे	ग
ए	ऽ	मो	री	अँ	गी	ऽ	या	ऽ	द	र	की	ऽ	ऽ
3				×					2		0		
रे	—	सा	—	सा	रे	नि	सा	—	,	रे	ग	रे	ग
जा	ऽ	त	ऽ	फा	ऽ	ऽ	ग	ऽ	ऽ	खे	ल	न	ऽ
3				×					2		0		
ग				निं	निं								
रे	—	सा	—	सा	ध	—	प	—	ध	म	म	ग	म
ग	ऽ	हे	ऽ	रा	ऽ	ऽ	खूँ	ऽ	ची	ऽ	रे	ऽ	ऽ
3				×					2		0		
ग	रे	—	सा	सा	रे	नि	ध	नि	सा	सारे	ग	रे	ग
श्या	ऽ	ऽ	म	कै	ऽ	ऽ	से	ऽ	र	हेऽ	गी	ऽ	ऽ
3				×					2		0		
रे	स,	रे	नि										
ला	ज,	मो	री										

अन्तरा

			नि										
प	प	—	ध	—	सां	सां	सां	सां	सां	रें	गं	रें	सां
लि	प	ऽ	ट	ऽ	लि	प	ट	झ	क	झो	ऽ	रे	ऽ
×					2		0			3			
										ग			
सां	—	—	सां	—	रें	नि	ध	म	ग	रे	ग	रे	सा
झो	ऽ	ऽ	र	ऽ	क	रे	जो	ऽ	र	मो	ऽ	ऽ	रि
×					2		0			3			

सा															
नि़	सा	रे	ग	–	ग	म	ग	रे	ग	रे	–	सा	सा
चु	रि	ऽ	यां	ऽ	क	र	का	ऽ	ऽ	ई	ऽ	ह	म
×					2		0			3			

नि़ सा													
सा	सां	–	रें	नि	ध	म	ग	रे	ग	रे	सा,	रे	नि़
री	ऽ	ऽ	भी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	जे	ऽ,	मो	री
×					2		0			3			

स्थाई – दुगुन

सा	–	सासा	रेनि़	सासा	रेग	गग
ए	ऽ	एऽ	मोरी	अँगी	ऽया	ऽद
3				×		
मग	रेग	रेरे	सासा	सारे	नि़सा	सा–
रकी	ऽऽ	जाऽ	तऽ	फाऽ	ऽग	ऽऽ
		2		0		
रेग	रेग	रेरे	सासा	साध	धप	पध
खेल	नऽ	गऽ	हेऽ	राऽ	ऽखू	ऽची
3				×		
मम	गम	गरे	रेसा	सारे	नि़ध़	नि़सा
ऽरे	ऽऽ	श्याऽ	ऽम	कैऽ	ऽसे	ऽर
		2		0		
सारेग	रेग	सासा	रेनि़	सा		
हेऽगी	ऽऽ	एऽ	मोरी	अँ		
3				×		

स्थाई – तिगुन

सा	–	रे	नि़	सा	सा	रे
ए	ऽ	मो	री	अँ	गी	ऽ
3				×		
ग	–	ग	म	ग	सासारे	नि़सासा
या	ऽ	द	र	की	एऽमो	रीअँगी
		2		0		
रेग–	गमग	रेगरे	रेसासा	सारेनि़	सा––	रेगरे
ऽयाऽ	दरकी	ऽऽजा	ऽतऽ	फाऽऽ	गऽऽ	खेलन
3				×		
गरे–	सासासा	धधप	पधम	मगम	गरेरे	सासारे
ऽगऽ	हऽरा	ऽऽखूँ	ऽचीऽ	रेऽऽ	श्याऽऽ	मकैऽ

		2		0
निधनि	सासारेग	रेगसा	सारेनि	सा
ऽसेऽ	रहेऽगी	ऽऽए	ऽमोरी	अँ
3				×

स्थाई – चौगुन

सा	–	रे	सासारेनि	सासारेग	गगमग	रेगरेरे	
ए	ऽ	मो	एऽमोरी	अँगीऽयां	ऽदरकी	ऽऽजाऽ	
3				×			
सासासारे	निसा––	रेगरेरग	रे–सासा	साधधप	पधमम	गमगरे	
तऽफाऽ	ऽगऽऽ	खेलनऽ	गऽहोऽ	राऽऽखूं	ऽचीऽरे	ऽऽश्याऽ	
		2		0			
रेसासारे	निधनिसा	सारेगरेग	सासारेनि	सा			
ऽऽमकै	ऽसेऽर	हेऽगीऽऽ	एऽमोरी	अँ			
3				×			

अन्तरा – दुगुन

			नि				
प	प	–	ध	–	सां	सां	
लि	प	ऽ	ट	ऽ	लि	प	
×					2		
सां	सां	सां	रें	गं	पप	पध	
ट	झ	क	झो	ऽ	लिप	ऽट	
0			3				
धसां	सांसां	सांसां	रेंगं	रेंसां	सांसां	सांसां	
ऽलि	पट	झक	झोऽ	रेऽ	झोऽ	ऽर	
×					2		
सारें	निध	मग	रेग	रेसा	निसा	रेग	
ऽक	रेजो	ऽर	मोऽ	ऽरि	चुरि	ऽयां	
0			3				
गग	मग	रेग	रेरे	सासा	सासां	सारें	
ऽक	रका	ऽऽ	ईऽ	हम	रीऽ	ऽभी	
×					2		
निध	मग	रेग	रेसा	रेनि	सासा	रेनि	प
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	जेऽ	मोरी	एऽ	मोरी	लि
0			3				×

अन्तरा – तिगुन

			नि			
प	प	–	ध	–	सां	सां

लि	प	ऽ	ट	ऽ	लि	प	
×					2		
सां	पपप	ध–सां	सांसांसां	सांरेंगं	रेंसांसां	सांसांसां	
ट	लिपऽ	टऽलि	पटझ	कझोऽ	रेऽझो	ऽऽर	
0			3				
सांरेंनि	धमग	रेगरे	सानिसा	रेगग	गमग	रेगरे	
ऽकरे	जोऽर	मोऽऽ	रिचुरि	ऽयांऽ	करका	ऽऽई	
×					2		
–सासा	सासां–	रेंनिध	मगरे	गरेसा,	रेनिसा	सारेनि	प
ऽहम	रीऽऽ	भीऽऽ	ऽऽऽ	ऽजेऽ,	मोरीए	ऽमोरी	लि
0			3				×

अन्तरा – चौगुन

			नि				
प	प	–	ध	–	सां	सां	
लि	प	ऽ	ट	ऽ	लि	प	
×					2		
सां	सां	सां	रें	गं	रें	पपपध	
ट	झ	क	झो	ऽ	रे	लिपऽट	
0			3				
–सांसांसां	सांसारेंगं	रेंसांसांसां	सांसांसारें	निधमग	रेगरेसा	निसारेग	
ऽलिपट	झकझोऽ	रेऽझोऽ	ऽरऽक	रेजोऽर	मोऽऽरी	चुरिऽयां	
×					2		
गगमग	रेगरे–	सासासासां	–रेंनिधम	मगरेग	रेसा,रेनि	सासारेनि	प
ऽकरका	ऽऽईऽ	हमरीऽ	ऽभीऽऽ	ऽऽऽऽ	जेऽमोरी	एऽमोरी	लि
0			3				×

2.3.5 राग श्री :–

ध्रुपद – चौताल

स्थाई

नि		सा				सां	सां				
सा	–	रें	–	सां	सां	नि	नि	सां	नि	ध	प
बं	ऽ	सी	ऽ	ध	र	पि	ना	ऽ	क	ध	र
×		0		2		0		3		4	
ध						सां					
मं	मं	प	ध	प	प	नि	निरें	नि	ध	प	प
गि	रि	ब	र	ध	र	गं	ऽऽ	गा	ऽ	ध	र
×		0		2		0		3		4	
मं			ध						ग		

प	–	ध॒	मं	–	गरे॒	ग	–	रे॒	रे॒	–	सा
चं	ऽ	द्रं	मा	ऽ	लऽ	ला	ऽ	ट	ध	ऽ	र
×		0		2		0		3		4	
	ध॒		सा			रे॒			रे॒		
–	मं	प	नि	–	रे॒	मं	ग	–	ग	रे॒	सा
ऽ	रा	ऽ	ज	ऽ	त	ह	री	ऽ	ह	ऽ	र
×		0		2		0		3		4	

अन्तरा

मं						सां	सां				
प	प	मं	ध॒	–	प	नि	नि	सां	सां	–	सां
सु	धा	ऽ	ध	ऽ	र	वि	ष	ऽ	ध	ऽ	र
×		0		2		0		3		4	
सां	सां					सां					
नि	नि	रें॒	गं	रें॒	सां	नि	–	सां	नि	ध॒	प
ध	र	नी	ऽ	ध	र	शे	ऽ	ष	ध	ऽ	र
×		0		2		0		3		4	
ध॒			सां						सां		
मं	–	प	नि	–	सां	रें॒	–	सां	नि	सां	सां
च	ऽ	क्र	ध	ऽ	र	शू	ऽ	ल	ध	ऽ	र
×		0		2		0		3		4	
मं						ध॒			रे॒		
प	सां	नि	ध॒	प	प	मं	–	गरे॒	ग	रे॒	सा
न	र	ह	र	शि	व	शं	ऽ	ऽऽ	क	ऽ	र
×		0		2		0		3		4	

स्थाई – दुगुन

सां–	रें–	सांसां	निनि	सांनि	धप	
बंऽ	सीऽ	धर	पिना	ऽक	धर	
×		0		2		
मंमं	पध॒	पप	निनिरें॒	निध॒	पप	
गिरि	बर	धर	गंऽऽ	गाऽ	धर	
0		3		4		
प–	ध॒मं	–गरे॒	ग–	रे॒रे॒	–सा	
चंऽ	द्रंमा	ऽलऽ	लाऽ	टध	ऽर	
×		0		2		
–मं	प़नि़	–रे॒	मंग	–ग	रे॒सा	सा
ऽरा	ऽज	ऽत	हर	ऽर	ऽर	बं
0		3		4		×

स्थाई – तिगुन

नि̣		सा				
सां	–	रें	–	सां	सां	
बं	ऽ	सी	ऽ	ध	र	
×		0		2		
सां	सां					
नि	नि	सां–रें	–सांसां	निनिसां	निधप	
पि	ना	बंऽसी	ऽधर	पिनाऽ	कधर	
0		3		4		
मंमंप	धपप	निनिरेंनि	धपप	प–ध	मं–गरे	
गिरिब	रधर	गंऽऽगा	ऽधर	चंऽद्र	माऽलऽ	
×		0		2		
ग–रे	रे–सा	–मंप	नि̣–रे	मंग–	गरेसा	सा
लाऽट	धऽर	ऽराऽ	जऽत	हरऽ	रऽर	बं
0		3		4		×

स्थाई – चौगुन

सां–रें–	सांसांनिनि	सांनिधप	मंमंपध	पपनिनिरें	निधपप	
बंऽसीऽ	धरपिना	ऽकधर	गिरिबर	धरगंऽऽ	गाऽधर	
×		0		2		
प–धमं	–गरेग–	रेरे–सा	–मंपनि̣	–रेमंग	–गरेसा	सा
चंऽद्रमा	ऽलऽलाऽ	टधऽर	ऽराऽज	ऽतहर	ऽरऽर	बं
0		3		4		×

अन्तरा – दुगुन

पप	मंध	–	निनि	सांसां	–सां	
सुधा	ऽध	ऽर	विभि	ऽध	ऽर	
×		0		2		
निनि	रेंगं	रेंसा	नि–	सांनि	धप	
धर	णीऽ	धर	शेऽ	षध	ऽर	
0		3		4		
मं–	पनि	–सां	रें–	सांनि	सांसां	
चऽ	क्रध	ऽर	शूऽ	लध	ऽर	
×		0		2		
पसां	निध	पप	मं–	गरेग	रेसा	प
नर	हर	शिव	शंऽ	ऽऽक	ऽर	सु
0		3		4		×

अन्तरा – तिगुन

प	प	मं	ध	–	प	
सु	धा	ऽ	ध	ऽ	र	
×		0		2		
नि	नि	पपमं	ध–प	निनिसां	सां–सां	
वि	भि	सुधाऽ	धऽर	विभिऽ	धऽर	
0		3		4		
निनिरें	गरेंसां	नि–सां	निधप	मं–प	नि–सां	
धरणी	ऽधर	शेऽष	धऽर	चऽक्र	धऽर	
×		0		2		
रें–सां	निसांसां	पसांनि	धपप	मं–गरे	गरेसा	प
शूऽल	धऽर	नरह	रशिव	शंऽऽऽ	कऽर	सु
0		3		4		×

अन्तरा – चौगुन

पपमंध	–पनिनि	सांसां–सां	निनिरेंगं	रेंसांनि–	सांनिधप	
सुधाऽध	ऽरविभि	ऽधऽर	धरणीऽ	धरशेऽ	षधऽर	
×		0		2		
मं–पनि	–सारें–	सांनिसांसां	पसांनिध	पपमं–	गरेगरेसा	प
चऽक्रध	ऽरशूऽ	लधऽर	नरहर	शिवशंऽ	ऽऽकऽर	सु
0		3		4		×

धमार– स्थाई

		सां									रें		
मं	प	नि	सां	रें	–	–	सां	–	–	सां	नि	–	सा
सा	व	रो	ऽ	खे	ऽ	ऽ	ल	ऽ	ऽ	र	ह्यो	ऽ	ऽ
3				×					2		0		
				ध			ध						
नि		ध	प	मं	–	ध	मं	–	ग	रे	ग	रे	–
है	ऽ	ऽ	ऽ	हो	ऽ	ऽ	री	ऽ	त	ट	ज	मु	ऽ
3				×					2		0		
				नि									
सां	–	रें	सां	सां	ध	–	मं	–	ग	रे	ग	रे	सा
ना	ऽ	ऽ	के	ती	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	र
3				×					2		0		

अन्तरा

			सां		सां					सां			
म॑	प	–	नि	–	नि	–	सां	–	–	नि	सां	सां	–
भ	र	ऽ	पि	ऽ	च	ऽ	का	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री	ऽ
×					2		0			3			
सां							सां						
नि	सां	–	रें	–	सां	–	नि	–	सा	नि	ध	प	–
त	क	ऽ	त	ऽ	क	ऽ	मा	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ
×					2		0			3			
प			सां										
म॑	–	प	नि	–	–	सां	रें	–	–	सां	–	सां	–
भी	ऽ	ऽ	ज	ऽ	ऽ	ग	ई	ऽ	ऽ	मो	ऽ	री	ऽ
×					2		0			3			
म॑										प		सां	
प	सां	–	नि	ध	म॑	गरे	ग	रे	सां	म॑	प	नि	सां
ची	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	र	सां	व	रो	ऽ
×					2		0			3			

स्थाई – दुगुन

		सां				
म॑	प	नि	सां	रें	–	–
सा	व	रो	ऽ	खे	ऽ	ऽ
3				×		
सां	–	म॑प	निसां	रें–	–सा	––
ल	ऽ	साव	रोऽ	खेऽ	ऽल	ऽऽ
		2		0		
सांनि	निसां	निनि	धप	म॑–	धम॑	–ग
रह्यो	ऽऽ	हैऽ	ऽऽ	होऽ	ऽरी	ऽत
3				×		
रेग	रेसा	सांसां	रेंसां	सांध	धम॑	–ग
टज	मुऽ	नाऽ	ऽके	तीऽ	ऽऽ	ऽऽ
		2		0		
रेग	रेसा	म॑प	निसा	रे		
ऽऽ	ऽर	साव	रोऽ	खे		
3				×		

स्थाई – तिगुन

म॑	प	12म॑	पनिसां	रें––	सां––	सांनिनि
सा	व	12सा	वरोऽ	खेऽऽ	लऽऽ	रह्योऽ
3				×		

सांनिनि	धपमं	–धमं	–गरे	गरेसा	सांसांरें	सांसांध
ऽहैऽ	ऽऽहो	ऽऽरी	ऽतट	जमुऽ	नाऽऽ	केतीऽ
		2		0		

धमं–	गरेग	रेसामं	पनिसां	रे
ऽऽऽ	ऽऽऽ	ऽरसा	वरोऽ	खे
3				×

स्थाई – चौगुन

		सां				
मं	प	नि	सां	रें	–	12मंप
सा	व	रो	ऽ	खे	ऽ	12साव
3				×		

निसांरे–	–सा––	सानिनिनिसां	निनिधप	मं–धमं	–गरेग	रेसासांसां
रोऽखेऽ	ऽलऽऽ	रह्योऽऽ	हैऽऽऽ	होऽऽरी	ऽतटज	मुऽनाऽ
		2		0		

रेंसांसांध	धमं–ग	रेगरेसा	मंपनिसां	रे
ऽकेतीऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽर	सावरोऽ	खे
3				×

अन्तरा – दुगुन

मंप	पनि	निसां	निसां	––	निसां	––
भर	ऽपी	ऽच	ऽका	ऽऽ	ऽऽ	रीऽ
×					2	

निसां	–रें	–सां	सांनि	–सां	निध	प–
तक	ऽत	ऽक	ऽमा	ऽऽ	रीऽ	ऽऽ
0			3			

मंमं	पनि	निनि	सांरें	––	सां–	––
भीऽ	ऽज	ऽऽ	गई	ऽऽ	मोऽ	रीऽ
×					2	

सांसां	सांनि	धमं	गरेग	रेसा	मंप	निसां
चिऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽऽ	ऽऽ	साव	रोऽ
0			3			

अन्तरा – तिगुन

			सां		सां	
मं	प	–	नि	–	नि	–
भ	र	ऽ	पी	ऽ	च	ऽ
×					2	

सां	–	1मंप	पनिनि	सांनिसां	––नि	सां––
का	ऽ	1भर	ऽपिऽ	चऽका	ऽऽऽ	ऽरीऽ
0			3			

निसं–	रें–सां	सांनि–	सांनिध	प–मं	मंपनि	निनिसां
तकऽ	तऽक	ऽमाऽ	ऽरीऽ	ऽऽभी	ऽऽज	ऽऽग
×					2	
रें––	सां––	–सांसां	सांनिध	मंगरेग	रेसामं	पनिसां
ईऽऽ	मोऽरी	ऽपिऽ	ऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽरसा	वरोऽ
0			3			

अन्तरा – चौगुन

मंपपनि	निसांनिसां	––निसां	––निसां	–रें–सां	सांनि–सां	निधप–
भरऽपिऽ	चऽकाऽ	ऽऽऽऽ	रीऽतक	ऽतऽक	ऽमाऽऽ	रीऽऽऽ
×					2	
मंमंपनि	निनिसारें	––सां–	––सांसां	सांनिधमं	गरेगरेसा	मंपनिसां
भीऽऽज	ऽऽगई	ऽऽमोऽ	रीऽपिऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽसा	सपवरोऽ
0			3			

6.3.6 राग कोमल ऋषभ आसावरी :–

ध्रुपद – चौताल

स्थायी

ध	म	रे	रे	–	रे	रे	ग	रे	सा	–	सा
नै	ऽ	न	आ	ऽ	ल	सा	ऽ	ने	भा	ऽ	रे
×		0		2		0		3		4	
सां	–	रे	नि	ध	ध	सा	–	ग	रे	–	सा
ऐ	ऽ	से	आ	ऽ	ज	अं	ऽ	ज	ना	ऽ	रे
×		0		2		0		3		4	
सा	–	रे	म	प	–	ध	–	प	ध	सां	–
दे	ऽ	ख	म	न	ऽ	मे	ऽ	रो	पि	या	ऽ
×		0		2		0		3		4	
सारें	नि	ध	प	धम	पध	ग	रे	–	रे	सा	–
अऽ	ति	ऽ	ही	ऽऽ	अऽ	कु	ला	ऽ	त	है	ऽ
×		0		2		0		3		4	

अन्तरा

म	प	मप	ध	–	ध	सां	–	सां	सां	सां	–
ब	स	ऽऽ	न	ऽ	म	ली	ऽ	न	भ	ए	ऽ
×		0		2		0		3		4	
ध	–	ध	सां	सां	–	गं	रें	सां	सां	ध	प
अं	ऽ	ज	न	हूँ	ऽ	नै	ऽ	न	ध	रे	ऽ
×		0		2		0		3		4	

प	गं	–	रें	रें	रें	सां	सां	रें	सां	ध	प
भा	ऽ	ऽ	व	र	त	न	सा	ऽ	ज	त	ये
×		0		2		0		3		4	
प	नि	ध	ध	प	धम	ग	–	रे	रे	सा	–
अं	ऽ	ग	रा	ऽ	गऽ	आ	ऽ	ऽ	त	है	ऽ
×		0		2		0		3		4	

स्थायी – दुगुन

धम	रेरे	–रे	रेग	रेसा	–सा
नैऽ	नआ	ऽल	साऽ	नेभा	ऽरे
×		0		2	
सां–	रेनि	धध	सा–	गरे	–सा
ऐऽ	सेआ	ऽज	अंऽ	जना	ऽरे
0		3		4	
सा–	रेम	प–	ध–	पध	सां–
देऽ	खम	नऽ	मेऽ	रोपि	याऽ
×		0		2	
सारेनि	धम	धमपध	गरे	–रे	सा–
अऽति	ऽही	ऽऽअऽ	कुला	ऽत	हैऽ
0		3		4	

स्थायी – तिगुन

		धमरे	रे–रे	रेगरे	सा–सा
		नैऽन	आऽल	साऽने	भाऽरे
0		3		4	
सा–रे	निधध	सा–ग	रे–सा	सा–रे	मप–
ऐऽसे	आऽज	अंऽज	नाऽरे	देऽख	मनऽ
×		0		2	
ध–प	धसां–	सारेंनिध	पधमपध	गरे–	रेसा–
मेऽरो	पियाऽ	अऽतिऽ	हीऽऽअऽ	कुलाऽ	तहैऽ
0		3		4	

स्थायी – चौगुन

धमरेरे	–रेरेग	रेसा–सा	सा–रेनि	धधसा–	गरे–सा
नैऽनआ	ऽलसाऽ	नेभाऽरे	ऐऽसेआ	ऽजअऽ	जनाऽरे
×		0		2	
सा–रेम	प–ध–	पधसां–	सारेंनिधप	धमपधगरे	–रेसा–
देऽखम	नऽमेऽ	रोपियाऽ	अऽतिऽही	ऽऽअऽकुला	ऽतहैऽ

0		3		4	

अन्तरा – दुगुन

मप	मपध	–ध	सां–	सांसां	सां–
बस	ऽऽन	ऽम	लीऽ	नभ	ए ऽ
×		0		2	
ध–	धसां	सां–	गंरें	सांसां	धप
अंऽ	जन	हूँऽ	नैऽ	नध	रेऽ
0		3		4	
पगं	–रें	रेंरें	सांसां	रेंसां	धप
भाऽ	ऽव	रत	नसा	ऽज	तये
×		0		2	
पनि	धध	पधम	ग–	रेरे	सा–
अंऽ	गरा	ऽगऽ	आऽ	ऽत	हैऽ
0		3		4	

अन्तरा – तिगुन

0		मपमप	ध–ध	सां–सां	सांसां–
		बसऽऽ	नऽम	लीऽन	भए ऽ
0		3		4	
ध–ध	सांसां–	गंरेंसां	सांधप	पगं–	रेंरेंरें
अंऽज	नहूँऽ	नैऽन	धरेऽ	भाऽऽ	वरत
×		0		2	
सांसांरें	सांधप	पनिध	धपधम	ग–रे	रेसा–
नसाऽ	जतये	अंऽग	राऽगऽ	आऽऽ	तहैऽ
0		3		4	

अन्तरा – चौगुन

मपमपध	–धसां–	सांसांसां–	ध–धसां	सां–गंरें	सांसांधप
बसऽऽन	ऽमलीऽ	नभएऽ	अंऽजन	हूऽनैऽ	नधरेऽ
×		0		2	
पगं–रें	रेंरेंसांसां	रेंसांधप	पनिधध	पधमग–	रेरेसा–
भाऽऽव	रतनसा	ऽजतये	अंऽगरा	ऽगऽआऽ	ऽतहैऽ
0		3		4	

धमार

स्थाई

रे	म	म	प	–	–	–	ध	–	–	–	–	प	–
आ	ऽ	ऽ	यो	ऽ	ऽ	ऽ	फा	ऽ	ऽ	गु	ऽ	न	ऽ
0			3				×					2	
ध	म	–	प	–	–	ध	ग	–	–	रे	सा	–	–
मा	ऽ	ऽ	स	ऽ	ऽ	स	खी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	री	ऽ
0			3				×					2	
रे	नि	ध	सा	सा	रे	सा	ध	ग	–	रे	–	सा	–
ले	ऽ	ऽ	च	ल	ऊ	न	ही	पा	ऽ	ऽ	ऽ	स	ऽ
0			3				×					2	

अन्तरा

प	प	प	ध	ध	ध	ध	सां	सां	सां	सां	सां	सां	सां
बै	ऽ	ऽ	ठा	ऽ	कु	र	अ	ज	ऽ	हूँ	ऽ	न	हि
×					2		0			3			
रे	–	गं	रें	रें	सां	–	रें	सां	सां	ध	–	–	नि
आ	ऽ	ऽ	ऐ	ऽ	टूं	ऽ	ट	न	ऽ	ला	ऽ	गी	ऽ
×					2		0			3			
ध	म	ग	रे	रे	सा	–	रे	म	–	प	–	–	–
आ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	स	ऽ	आ	ऽ	ऽ	यो	ऽ	ऽ	ऽ
×					2		0			3			

स्थाई – दुगुन

रे	म	म	प	–	–	–
आ	ऽ	ऽ	यो	ऽ	ऽ	ऽ
0			3			
ध	–	–	1रे	मम	प–	––
फा	ऽ	ऽ	1आ	ऽऽ	योऽ	ऽऽ
×					2	
ध–	––	–प	–ध	म–	प–	–ध
फाऽ	ऽगु	ऽन	ऽमा	ऽऽ	सऽ	ऽस
0			3			
ग–	–रे	सा–	–रे	निध	सासा	रेसा
खीऽ	ऽऽ	ऽरी	ऽले	ऽऽ	चल	उन
×					2	
धग	–रे	–सा	–रे	मम	प–	––
हीया	ऽऽ	ऽस	ऽआ	ऽऽ	योऽ	ऽऽ
0			3			
ध						

फा
×

स्थाई – तिगुन

रे	म	म	प	12रे	ममप	———
आ	ऽ	ऽ	यो	12आ	ऽऽयो	ऽऽऽ
0			3			
ध——	——प	—धम	—प—	—धग	——रे	सा——
फाऽऽ	गुऽन	ऽमाऽ	ऽसऽ	ऽसखी	ऽऽऽ	ऽरीऽ
×					2	
रेनिध	सासारे	साधग	—रे—	सा—रे	ममप	———
लेऽऽ	चलऊ	नहीपा	ऽऽऽ	सऽआ	ऽऽयो	ऽऽऽ
0			3			
ध						
फा						
×						

स्थाई – चौगुन

रे	म	म	प	–	–	–
आ	ऽ	ऽ	यो	ऽ	ऽ	ऽ
0			3			
ध	123रे	ममप–	––ध–	–––प	–धम–	प––ध
फा	123आ	ऽऽयोऽ	ऽऽफाऽ	ऽगुऽन	ऽमाऽऽ	सऽऽस
×					2	
ग––रे	सा––रे	निधसासा	रेसाधग	–रे–सा	–रेमम	प–––
खीऽऽऽ	ऽरीऽले	ऽऽचल	ऊनहीपा	ऽऽऽस	ऽआऽऽ	योऽऽऽ
0			3			
ध						
फा						
×						

अन्तरा – दुगुन

प	प	प	ध	ध	ध	ध
बै	ऽ	ऽ	ठा	ऽ	कु	र
×					2	
पप	पध	धध	धसां	सांसां	सांसां	सांसां
बेऽ	ऽठा	ऽकु	रआ	जऽ	हूँ ऽ	नहि
0			3			
रें–	गरें	रेंसां	–रें	सांसां	ध–	–नि
आऽ	ऽऐ	ऽइ	ऽट	नऽ	लाऽ	गीऽ
×					2	
धम	गरे	रेसा	–रे	म–	प–	––
आऽ	ऽऽ	ऽस	ऽआ	ऽऽ	योऽ	ऽऽ

0			3			
प						
बै						
×						

अन्तरा – तिगुन

पपप	धधध	धसांसां	–––	सांसांरें	रेंगरें	रेंसां–
बैऽऽ	ठाऽकु	रअज	ऽहूँऽ	नाहिआ	ऽऽऐ	ऽइऽ
×					2	
रेंसांसां	ध––	निधम	गरेरे	सा–रे	रेमम	पपप
तनऽ	लाऽगी	ऽआऽ	ऽऽऽ	सऽआ	ऽऽयो	ऽऽऽ
0			3			
प						
बै						
×						

अन्तरा – चौगुन

प	प	प	12पप	ध–––	धसांसांसां	––––
बै	ऽ	ऽ	12बैऽ	ऽठाऽकु	रअजऽ	हूँनहि
×					2	
रेंरेंगरें	रेंसांसारें	सां–ध–	धनिधम	गरेरेसा	सारेम–	पपपप
आऽऽयो	ऽटूऽट	नऽलाऽ	गीऽआऽ	ऽऽऽस	ऽआऽऽ	योऽऽऽ
0			3			
ध						
फा						
×						

6.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम के विभिन्न रागों में ध्रुपद एवं धमार की रचनाओं को जान चुके होंगे। आप विभिन्न रागों में ध्रुपद एवं धमार को लिपिबद्ध करना भी सीख चुके होंगे। पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद एवं धमार की दुगुन, तिगुन व चौगुन भी लिपिबद्ध कर बतायी गई है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह भी जान चुके होंगे कि इन रागों में ध्रुपद एवं धमार की विभिन्न लयकारीयों जैसे दुगुन, तिगुन व चौगुन को कैसे लिपिबद्ध किया जाता है। आप रागबद्ध रचनाओं को सुनकर आप स्वयं उन्हें लिपिबद्ध कर सकेंगे तथा लयकारियों को प्रस्तुत कर सकेंगे।

6.5 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भातखण्डे, पं0 विष्णुनारायण, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग–1,2,3,4,5,6, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. झा, पंडित रामाश्रय 'रामरॅग', अभिनव गीतांजलि–भाग 1,2,3,4 व 5, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. चक्रवर्ती, डॉ0 कविता, भारतीय संगीत को महान संगीतज्ञों की देन।
4.

6.6 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम के किन्ही चार रागों में ध्रुपद व धमार को दुगुन, तिगुन व चौगुन लयकारी सहित लिपिबद्ध कीजिए।

इकाई 7 – पाठ्यक्रम की तालों का परिचय व तालों के ठेकों को लयकारी (दुगुन, तिगुन, चौगुन, आड, कुआड व बिआड) सहित लिपिबद्ध करना

7.1 प्रस्तावना
7.2 उदेद्श्य
7.3 तालों का परिचय
    7.3.1 झूमरा ताल का परिचय
    7.3.2 सूलताल ताल का परिचय
    7.3.3 गजझम्पा ताल का परिचय
    7.3.4 11 मात्रा की ताल का परिचय
7.4 तालों को लयकारीयों में लिखना
    7.4.1 झूमरा ताल में लयकारी
    7.4.2 सूलताल में लयकारी
    7.4.3 गजझम्पा ताल में लयकारी
    7.4.4 11 मात्रा की ताल में लयकारी
7.5 सारांश
7.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
7.8 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला—संगीत में स्नातकोत्तर, चतुर्थ सेमेस्टर (एम0पी0ए0एम0वी0—606) पाठ्यक्रम की सातवीं इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप रागों की रचनाओं को जान चुके होंगे। आप पाठ्यक्रम के रागों में ध्रुपद व धमार को लयकारीयों सहित लिपिबद्ध करना भी सीख गए होंगे।

इस इकाई में पाठ्यक्रम की तालों का परिचय व उनके ठेकों को विभिन्न लयकारी (दुगन, तिगुन, चौगुन, आड, कुआड व बिआड) में लिपिबद्ध करने के विषय में बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने के विषय में जान चुके होंगे। इससे आप लयकारी को बोलने एवं बजाने में भी सक्षम होंगे।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात :—

1. आपको लयकारी का ज्ञान होगा ।
2. आप तबले की ताल के ठेकों को विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने एवं उसके क्रियात्मक स्वरूप को तबले में प्रस्तुत कर पाएंगे।
3. आप लयकारी का प्रयोग अपने वादन(एकल वादन, संगत) करने में सक्षम होंगे जिससे आप का वादन प्रभावशाली होगा।

7.3 तालों का परिचय

7.3.1 झूमरा ताल का परिचय :–

परिचय – यह तबले का ताल है। इस ताल की संरचना दीपचन्दी की भांति है परन्तु इस ताल का प्रयोग दीपचन्दी से भिन्न है। झूमरा ताल का प्रयोग शास्त्रीय गायन के विलम्बित ख्याल के साथ किया जाता है। इस ताल का प्रयोग विलम्बित लय में ही किया जाता है, मध्य एवं द्रुत लय इस ताल के प्रयोग का प्रचलन नहीं है। एकल वादन का प्रचलन इस ताल मे नहीं है किन्तु कुछ विद्वानों के अनुसार पुराने तबला वादकों द्वारा इसमें कभी–कभी स्वतन्त्र वादन भी प्रस्तुत किया गया है।

यह मिश्र जाति की अर्द्ध समपदीय ताल है। इसकी 14 मात्राएं 3/4/3/4 विभागों में बँटी हैं। इसमें पहला एवं तीसरा विभाग तीन–तीन मात्रा एवं दूसरा एवं चौथा विभाग चार–चार मात्रा का है। पहली, चौथी एवं ग्यारवीं मात्रा पर ताली एवं आठवीं मात्रा पर खाली है।

मात्रा – 14, विभाग – 4, ताली – 1, 4 व 11 पर, खाली – 8 पर

ठेका

धिं	ऽधा	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तिं	ऽता	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	धिं
×			2				0			3				×

7.3.2 सूलताल का परिचय :–

परिचय – इसे सूलफाक अथवा सूलफाक्ता के नाम से भी जाना जाता है। पं0 विजयशंकर मिश्र ने अपनी पुस्तक तबला पुराण में लिखा है – "मोहम्मद करम इमाम ने सूलताल को अमीर खुसरो द्वारा रचित 17 तालों में से एक माना है, आचार्य बृहस्पति ने अदन–उल–मूसीकी नामक पुस्तक के आधार पर इस ताल का नाम उसूले–फाख्ता दिया है, जो बाद में बिगड़कर सूलफाख्ता हो गया। उसूल का अर्थ सिद्धान्त होता है, और फाख्ता पंडुक (गुलगुचया) नामक चिड़िया को कहते हैं। लोगों का मत है कि इस चिड़िया की बोली के आधार पर इस ताल की रचना हुई है। फाख्ता की बोली कुछ इस प्रकार होती है – कू ऽ ऽ ऽ कू ऽ कू ऽ ऽ ऽ"

यह पखावज पर बजाई जाने वाली प्रमुख तालों में से एक है। मुख्यतः इसका वादन मध्य व द्रुत लय में होता है। गायन में ध्रुपद शैली की मध्य लय की रचनाओं व वादन में वीणा के साथ संगति में इसका प्रयोग होता है। पखावज में इस ताल में एकल वादन भी प्रस्तुत किया जाता है।

यह चतस्त्र जाति की सम पदीय ताल है। इसकी मात्राओं की संख्या 10 है, जो पाँच विभागों में बँटी है। इसके प्रत्येक विभाग में दो–दो मात्राएं हैं। एक, पांच एवं सातवीं मात्रा पर ताली एवं तीसरी व नौवी मात्रा पर ताली है।

मात्रा – 10, विभाग – 5, ताली – 1, 5 व 7 पर, खाली – 3 व 9 पर

ठेका

धा	धा	दिं	ता	किट	धा	तिट	कता	गदी	गिन	धा
×		0		2		3		0		×

7.3.3 गजझम्पा ताल का परिचय :–

परिचय – गजझम्पा ताल पखावज के तालों में से एक है। यह ताल बहुत प्रचलित नहीं है। इस ताल का प्रयोग तबले पर भी खुले अंदाज में किया जाता है। मुख्यतः इसका प्रयोग मध्य व द्रुत लय में होता है। अति विलम्बित व अति द्रुत लय में इस ताल के प्रयोग का प्रचलन नहीं है। ध्रुपद गायन की रचनाओं की संगत हेतु इस ताल का प्रयोग किया जाता है। पखावज पर एकल वादन भी इस ताल में प्रस्तुत किया जाता है। अतः इसमें परनें, प्रस्तार, छन्द आदि रचनाएं मिलती हैं।

यह 15 मात्रा का विषम पदीय ताल है। इसमें कुल 4 विभाग होते हैं जो 4/4/3/4 में विभाजित हैं। पहले व दूसरे विभाग में चार–चार, तीसरे में तीन तथा पाचवीं में चार मात्राएं हैं। इसकी पहली, पाँचवीं व बाहरवीं पर ताली है तथा नवीं पर खाली है।

मात्रा – 15, विभाग – 4, ताली – 1, 5 व 12 पर, खाली – 9 पर

ठेका

धा	धीं	नक	तक	धा	धीं	नक	तक	दीं	नक	तक	तेटे	कत	गदि	गन	धा
×				2				0			3				×

7.3.4 11 मात्रा की ताल का परिचय :–

भारतीय शास्त्रीय संगीत में 11 मात्रा की विभिन्न तालें हैं – रूद्र ताल, अष्टमंगल ताल, कुंभ ताल एवं मणि ताल है। अष्टमंगल ताल, मणि ताल पखावज एवं रूद्र ताल तबले पर बजाई जाने वाली ताल है।

रूद्र ताल – रूद्र ताल तबला एकल वादन एवं गायन तथा वादन की मध्य लय की रचनाओं हेतु प्रयोग की जाती है। यह सम पदीय ताल है। यह ताल 11 विभाग की 11 मात्रा की ताल है अतः प्रत्येक विभाग एक मात्रा का है। इसमें पहली दो मात्रा की ताली के बाद तीसरी मात्रा पर खाली इसके पश्चात् तीन मात्राओं की ताली के पश्चात् सातवीं मात्रा पर खाली एवं अन्त में आठवीं–नवीं एवं दसवीं मात्रा की ताली के बाद अन्तिम मात्रा खाली की है।

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 2, 4, 5, 6, 8, 9 व 10 पर, खाली – 3, 7 व 11 पर

ठेका – 1

धी	ना	धी	ना	ता	ती	ना	क	ता	धि	ना	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 3, 4, 5, 7, 8, 9 व 10 पर, खाली – 2, 6 व 11 पर

ठेका – 2

धा	त्त	धा	तिरकिट	धी	ना	तिरकिट	तू	ना	क	त्ता	धा
×	0	2	3	4	0	5	6	7	8	0	×

अष्टमंगल ताल – यह एक समपदीय ताल है। इसका प्रयोग ध्रुपद गायन शैली के साथ संगत के लिए तथा एकल वादन के लिए किया जाता है। कुछ विद्वान इसे 22 मात्रा का भी मानते हैं, जो पखावज का ठेका है। मुख्यतः इसका प्रयोग मध्य व द्रुत लय में बजाने के लिए किया जाता है। पखावज व तबले पर इसका अलग–अलग ठेका है।

मात्रा – 22, विभाग – 11, ताली – 1, 5, 7, 11, 13, 17, 19 व 21 पर, खाली – 3, 9 व 15 पर

ठेका – पखावज

धा ऽ	कि ट	त क	धु म	कि ट	त क	धे ऽ	ता ऽ	क त	ग दि	ग न	धी
×	0	2	3	0	4	5	0	6	7	8	×

ठेका – तबला

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 3, 4, 6, 7, 9, 10 व 11 पर, खाली – 2, 5 व 8 पर

धी	ना	धी	धी	ना	धी	धी	ना	धागे	नधा	तिरकिट	धी
×	0	2	3	0	4	5	0	6	7	8	×

कुंभ ताल – कुंभ समपदीय ताल है। यह प्राचीन होने के साथ–साथ अप्रचलित भी है। इसका प्रयोग मध्य लय की रचनाओं के साथ संगत में किया जाता है। कभी–कभी इसका प्रयोग तबला व पखावज में एकल वादन हेतु भी किया जाता है।

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 3, 4, 5, 7, 8, 9 व 10 पर, खाली – 2, 6 व 11 पर

ठेका

धा	धीं	तेटे	कत	धा	धीं	नक	तेटे	कत	गदि	गन	धी
×	0	2	3	4	0	5	6	7	8	0	×

<u>मणि ताल</u> – यह एक विषम पदीय व अप्रचलित ताल है। यह पखावज व तबला दोनों पर समान रूप से बजाया जाता है, किन्तु इसका प्रयोग कम ही देखने को मिलता है।

मात्रा – 11, विभाग – 4, ताली – 1, 4, 6 व 9 पर

<u>ठेका – 1</u>

धा	दीं	ता	धेत्त	ता	धागे	नधा	त्रक	धागे	नधा	त्रक	धा
×			2		3			4			×

<u>ठेका – 2</u>

धा	कि	ट	कि	ट	धा	कि	ट	त	कि	ट	धा
×			2		3			4			×

7.4 तालों को लयकारीयों में लिखना

<u>लयकारी</u> – समय की समान गति को लय कहते हैं। दो मात्राओं की क्रिया के मध्य होने वाला विश्रांति काल ही लय है और जब यह काल प्रयोग होने वाली मात्राओं के बीच समान रहता है तो वह निश्चित लय का स्वरूप ले लेता है। अतः लय का सम्बन्ध मात्रा एव मात्राओं के बीच के समय से है।

लय सामान्य रूप से तीन प्रकार की मानी गई है। विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय। काल के लम्बा होने पर विलम्बित लय स्थापित होती है। इस काल के कम होने पर मध्य लय एवं उससे अधिक कम होने पर द्रुत लय हो जाती है। सामान्य रूप से मध्य लय का विश्रांति समय विलम्बित लय के विश्रांति समय का आधा होता हैं एवं द्रुत लय का विश्रांति मध्य लय में विश्रांति समय का आधा होता है। संगीत में यह मान्यता स्थापित हो चुकी है एवं प्रचलन में है। विलम्बित लय को आधार लय मानने से मध्य लय का प्रयोग विलम्बित लय में दो बार एवं द्रुत लय का प्रयोग चार बार करने की आवश्यकता होगी अतः मध्य लय विलम्बित लय की दुगुनी, द्रुत लय मध्य लय की दुगुन होती है। लय का यही प्रयोग लयकारी कहलाता है। एक मात्रा में एक से अधिक मात्राओं का आधार लय के साथ प्रयोग लयकारी कहलाता है।

संगीत में विभिन्न लयकारी जैसे दुगुन, तिगुंन, चौगुन, आड, कुआड, एवं बिआड प्रयोग की जाती है।

दुगुन –	एक मात्रा में दो मात्रा	1 2 1 2
तिगुन –	एक मात्रा में तीन मात्रा	1 2 3 123
चौगुन –	एक मात्रा में चार मात्रा	1234 1234
आड –	एक मात्रा में डेढ़ मात्रा अथवा दो मात्रा में तीन मात्रा, आड लयकारी कहलाती है। इसे चयोडी लय भी कहा जाता हैं एवं इसको 3/2 की लयकारी के रूप में भी व्यक्त करते हैं।	1 ऽ 2 ऽ 3 ऽ

कुआड– इस लयकारी के विषय में दो मत हैं पहला– आड की आड को कुआड कहते हैं अतः 9/4 जिसके अनुसार चार मात्रा में नौ मात्रा अथवा एक मात्रा में $2\frac{1}{4}$ अथवा सवा दो मात्रा का प्रयोग करते हैं। दूसरा – 5/4 की लयकारी अर्थात चार मात्रा में पांच मात्रा अथवा एक मात्रा में सवा मात्रा। इस दूसरे मत का अधिक प्रचलन है एवं इसको सवागुन की लय भी कहते हैं।

<u>पहले मत के अनुसार</u>–:

1ऽ ऽ ऽ 2ऽ ऽ ऽ 3 | ऽ ऽ ऽ 4 ऽऽ ऽ 5 ऽ | ऽ ऽ 6 ऽ ऽ ऽ 7 ऽ ऽ | ऽ 8 ऽ ऽ ऽ 9 ऽ ऽ ऽ

1 | 2 | 3 | 4

<u>दुसरे मत के अनुसार–:</u>

1 ऽ ऽ ऽ 2 | ऽ ऽ ऽ 3 ऽ | ऽ ऽ 4 ऽ ऽ | ऽ 5 ऽ ऽ ऽ

1 | 2 | 3 | 4

<u>बिआड लय–</u>

इस लयकारी के विषय में भी दो मत हैं। एक मत के अनुसार कुआड लय की आड बिआड लयकारी होती जिसे $^9/_4 \times {}^3/_2 = \frac{27}{8}$ के रूप में व्यक्त करते हैं एवं दूसरे मत के अनुसार $^7/_4$की लयकारी बिआड की लयकारी है। इसमें एक मात्रा में पौने दो गुन मात्रा प्रयोग की जाती है जिसे पौने दो गुन की लयकारी भी कहते हैं।

<u>पहले मत के अनुसार</u> :–

1ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 2 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 3 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 4 ऽ ऽ

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 5 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 6 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 7 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

ऽ ऽ 8 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 9 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 10 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 11

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 12 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 13 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 14 ऽ ऽ ऽ

ऽ ऽ ऽ ऽ 15 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 16 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 17 ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

ऽऽ 18 ऽऽऽऽऽऽऽऽ 19 ऽऽऽऽऽऽऽऽ 20 ऽऽऽऽऽऽऽऽ 21 ऽ

ऽऽऽऽऽऽ 22 ऽऽऽऽऽऽऽऽ 23 ऽऽऽऽऽऽऽऽ 24 ऽऽऽऽ

ऽऽऽ 25 ऽऽऽऽऽऽऽऽ 26 ऽऽऽऽऽऽऽऽ 27 ऽऽऽऽऽऽऽऽ

<u>दूसरे मत के अनुसार</u> :–

1 ऽऽऽ 2 ऽऽ | ऽ 3 ऽऽऽ 4 ऽ | ऽऽ 5 ऽऽऽ 6 | ऽऽऽ 7 ऽऽऽ

कुआड एवं बिआड में दूसरा मत ही अधिक प्रचलित एवं व्यवहारिक है अतः लयकारी लिपिबद्ध करने में दूसरे मत का ही प्रयोग करेंगे। आड, कुआड एवं बिआड, लयकारी लिखने के लिए इनकी भिन्न अथवा बटे में दिखाई संख्या से भाग देते हैं। गणित के अनुसार भाग देने में बटे की संख्या उलटी हो कर गुणा में बदल जाती है।

उदाहरण आड को बट्टा संख्या 3/2 = $1\frac{1}{2}$

आड लयकारी की मात्रा संख्या = ताल की मात्रा × 2/3, किस मात्रा से आरम्भ की जानी है, इसके लिए उपर की संख्या को ताल की मात्रा संख्या से घटाते हैं।

ताल की मात्रा संख्या – ताल की भाग संख्या × 2/3 जो लयकारी लिखनी है। उसमें बट्टा के नीचे वाली राशी में से एक घटाकर उतनी संख्या के अवग्रह लगाते हैं।

उदाहरण– आड की लयकारी – $^{3}/_{2}$ = 2–1 = 1

कुआड की लयकारी – $^{5}/_{4} = 4 - 1 = 3$

बिआड की लयकारी – $^{7}/_{4} = 4 - 1 = 3$

अतः आड की लयकारी को मात्रा के साथ एक अवग्रह, कुआड एवं बिआड की लयकारी में तीन अवग्रह लगाते हैं। इसके पश्चात बट्टा की उपर वाली राशि में विभाग बना लेते हैं। सरलता के लिए पीछे से विभाग बनाना शुरू करते हैं एवं पहली मात्रा में जितनी मात्रा कम होती है, मात्रा से पहले उतने अवग्रह लगा देते हैं जो कि आप विभिन्न तालों में लयकारी के उदाहरण से समझेंगे।

7.4.3 झूमरा ताल में लयकारी :–

झूमरा ताल

मात्रा – 14, विभाग – 4, ताली – 1, 4 व 11 पर, खाली – 8 पर

ठेका

धिं	ऽधा	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तिं	ऽता	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	धिं
×			2				0			3				×

झूमरा ताल की दुगुन :–

धिंऽधा	तिरकिटधिं	धिंधागे	तिरकिटतिं	ऽतातिरकिट	धिंधिं	धागेतिरकिट	
×			2				
धिंऽधा	तिरकिटधिं	धिंधागे	तिरकिटतिं	ऽतातिरकिट	धिंधिं	धागेतिरकिट	धिं
0			3				×

झूमरा ताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

धिंऽधा	तिरकिटधिं	धिंधागे	तिरकिटतिं	ऽतातिरकिट	धिंधिं	धागेतिरकिट	धिं
0			3				×

झूमरा ताल की तिगुन :–

धिंऽधातिरकिट	धिंधिंधागे	तिरकिटतिंऽता	तिरकिटधिंधिं	धागेतिरकिटधिं	ऽधातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिट	
×			2				
तिंऽतातिरकिट	धिंधिंधागे	तिरकिटधिंऽधा	तिरकिटधिंधिं	धागेतिरकिटतिं	ऽतातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिट	धिं
0			3				×

झूमरा ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

1धिंऽधा	तिरकिटधिंधिं	धागेतिरकिटतिं	ऽतातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिट	धिं
	3				×

झूमरा ताल की चौगुन :–

धिंऽधातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिटतिं	ऽतातिरकिटधिंधिं	
×			
धागेतिरकिटधिंऽधा	तिरकिटधिंधिंधागे	तिरकिटतिंऽतातिरकिट	धिंधिंधागेतिरकिट
2			

धिंऽधातिरकिटधिं धिंधागेतिरकिटतिं ऽतातिरकिटधिंधिं |
0
धागेतिरकिटधिंऽधा तिरकिटधिंधिंधागे तिरकिटतिंऽतातिरकिट धिंधिंधागेतिरकिट | धिं
3 ×

झूमरा ताल की चौगुन एक आवर्तन :—

12धिंऽधा तिरकिटधिंधिंधागे तिरकिटतिंऽतातिरकिट धिंधिंधागेतिरकिट | धिं
3 ×

झूमरा ताल की आड :—

12धिं ऽऽधा तिरकिटधिं | ऽधिंऽ धागेतिर किटतिंऽ | ऽतातिर किटधिंऽ धिंऽधा गेतिरकिट | धिं
0 3 ×

झूमरा ताल की कुआड :—

1234धिं | ऽऽऽऽऽ धाऽतिरकि टधिंऽऽऽ धिंऽऽऽधा | ऽगेऽतिर किटतिंऽऽ ऽऽऽताऽ |
2 0
| तिरकिटधिं ऽऽऽधिंऽ ऽऽधाऽगे ऽतिरकिट | धिं
3 ×

झूमरा ताल की बिआड :—

धिंऽऽऽऽऽधा | ऽतिरकिटधिंऽ ऽऽधिंऽऽऽधा ऽगेऽतिरकिट |
0
| तिंऽऽऽऽऽता ऽतिरकिटधिंऽ ऽऽधिंऽऽऽधा ऽगेऽतिरकिट | धिं |
3 ×

7.4.4 सूलताल में लयकारी :—

मात्रा — 10, विभाग — 5, ताली — 1, 5 व 7 पर, खाली — 3 व 9 पर

ठेका

| धा धा | दिं ता | किट धा | तिट कता | गदी गन | धा
× 0 2 3 0 ×

<u>सूलताल की दुगुन :–</u>

| धाधा दिंता | किटधा तिटकता | गदिगन धाधा | दिंता किटधा | तिटकता गदिगन | धा

× 0 2 3 0 ×

<u>सूलताल की दुगुन एक आवर्तन में :–</u>

धाधा | दिंता किटधा | तिटकता गदिगन | धा

3 0 ×

<u>सूलताल की तिगुन :–</u>

| धाधादिं ताकिटधा | तिटकतागदि गनधाधा | दिंताकिट धातिटकता |

× 0 2

गदिगनधा धादिंता | किटधातिट कतागदिगन | धा

3 0 ×

<u>सूलताल की तिगुन एक आवर्तन में :–</u>

12धा धादिंता | किटधातिट कतागदिगन | धा

3 0 ×

<u>सूलताल की चौगुन :–</u>

| धाधादिंता किटधातिटकता | गदिगनधाधा दिंताकिटधा | तिटकतागदिगन धाधादिंता |

× 0 2

किटधातिटकता गदिगनधाधा | दिंताकिटधा तिटकतागदिगन | धा

3 0 ×

<u>सूलताल की चौगुन एक आवर्तन में :–</u>

12धाधा | दिंताकिटधा तिटकतागदिगन | धा

0 ×

<u>सूलताल की आड़ :–</u>

| धा धा | दिं 1धाऽ | धाऽदिं ऽताऽ | किटधा ऽतिट | कताग दिगन | धा

× 0 2 3 0 ×

सूलताल की कुआड़ :–

धा धा	धाऽऽऽधा ऽऽऽदिंऽ	ऽऽताऽऽ ऽकिऽटऽ	धाऽऽऽति ऽटऽकऽ	ताऽगऽदि ऽगऽनऽ	धा
×	0	2	3	0	×

सूलताल की बिआड़ :–

धा धा	दिं ता	12धाऽऽऽधा ऽऽऽदिंऽऽऽ	ताऽऽऽकिऽट ऽधाऽऽऽतिऽ	टऽकऽताऽग ऽदिऽगऽनऽ	धा
×	0	2	3	0	×

7.4.7 गजझम्पा ताल में लयकारी :–

मात्रा – 15, विभाग – 4, ताली – 1, 5 व 12 पर, खाली – 9 पर

ठेका

धा धीं नक तक	धा धीं नक तक	दीं नक तक	तेटे कत गदि गन	धा
×	2	0	3	×

गजझम्पा ताल की दुगुन :–

धाधीं नकतक धाधीं नकतक	दींनक तकतेटे कतगदि गनधा	धींनक तकधा धींनक
×	2	0
तकदीं नकतक तिटकत गदिगन	धा	
3	×	

गजझम्पा ताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

1धा	धींनक तकधा धींनक	तकदीं नकतक तिटकत गदिगन	धा
	0	3	×

गजझम्पा ताल की तिगुन :–

धाधींनक तकधाधीं नकतकदीं नकतकतेटे	कतगदिगन धाधींनक तकधाधीं नकतकदीं	
×	2	
नकतकतेटे कतगदिगन धाधींनक	तकधाधीं नकतकदीं नकतकतेटे कतगदिगन	धा
0	3	×

<u>गजझम्पा ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–</u>

धाधींनक	तकधाधीं	नकतकदीं	नकतकतेटे	कतगदिगन	धा
	3				×

<u>गजझम्पा ताल की चौगुन :–</u>

धाधींनकतक	धाधींनकतक	दींनकतकतेटे	कतगदिगनधा	धींनकतकधा	धींनकतकदीं	नकतकतेटेकत	गदिगनधाधीं
×				2			
नकतकधाधीं	नकतकदींनक	तकतेटेकतगदि	गनधाधींनक	तकधाधींनक	तकदींनकतक	तेटेकतगदिगन	धा
0			3				×

<u>गजझम्पा ताल की चौगुन एक आवर्तन में :–</u>

1धाधींनक	तकधाधींनक	तकदींनकतक	तेटेकतगदिगन	धा
3				×

<u>गजझम्पा ताल की आड़ :–</u>

धा	धीं	नक	तक	धा	धाऽधीं	ऽनक	तकधा
×				2			
ऽधींऽ	नकत	कदींऽ	नकत	कतेटे	कतग	दिगन	धा
0			3				×

<u>गजझम्पा ताल की कुआड :–</u>

धा	धीं	नक	धाऽऽऽधीं	ऽऽऽनऽ	कऽतऽक	ऽधाऽऽऽ	धींऽऽऽन
×				2			
ऽकऽतऽ	कऽदींऽऽ	ऽनऽकऽ	तऽकऽते	ऽटेऽकऽ	तऽगऽदि	ऽगऽनऽ	धा
0			3				×

<u>गजझम्पा ताल की बिआड :–</u>

धा	धीं	नक	तक	धा	धीं	123धाऽऽऽ	धींऽऽऽनऽक
×				2			
ऽतऽकऽधाऽ	ऽऽधींऽऽऽन	ऽकऽतऽकऽ	दींऽऽऽनऽक	ऽतऽकऽतेऽ	टेऽकऽतऽग	ऽदिऽगऽनऽ	धा
0			3				×

7.4.8 11 मात्रा की ताल में लयकारी :–

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 2, 4, 5, 6, 8, 9 व 10 पर, खाली – 3, 7 व 11 पर

ठेका – 1

धी	ना	धी	ना	ता	ती	ना	क	त्ता	धि	ना	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की दुगुन :–

धीना	धीना	ताती	नाक	त्ताधि	नाधी	नाधी	नाता	तीना	कत्ता	धिना	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

1धी	नाधी	नाता	तीना	कत्ता	धीना	धी
5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की तिगुन :–

धीनाधी	नाताती	नाकत्ता	धिनाधी	नाधीना	तातीना	कत्ताधि	नाधीना	धीनाता	तीनाक	त्ताधिना	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

1धीना	धीनाता	तीनाक	त्ताधीना	धी
6	7	8	0	×

रूद्र ताल की चौगुन :–

धीनाधीना	तातीनाक	त्ताधिनाधी	नाधीनाता	तीनाकत्ता	धिनाधीना	धीनाताती
×	2	0	3	4	5	0
नाकत्ताधि	नाधीनाधी	नातातीना	कत्ताधिना	धी		
6	7	8	0	×		

रूद्र ताल की चौगुन एक आवर्तन में :–

1धीनाधी	नातातीना	कत्ताधिना	धी
7	8	0	×

रूद्र ताल की आड़ :–

धी	ना	धी	12धी	ऽनाऽ	धीऽना	ऽताऽ	तीऽना	ऽकऽ	त्ताऽधि	ऽनाऽ	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की कुआड :–

धी	ना	1धीऽऽऽ	नाऽऽऽधी	ऽऽऽनाऽ	ऽऽताऽऽ	ऽतीऽऽऽ	नाऽऽऽक	ऽऽऽताऽ	ऽऽधीऽऽ	ऽनाऽऽ	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की बिआड :–

धी	ना	धी	ना	12345धीऽ	ऽऽनाऽऽऽधी	ऽऽऽनाऽऽऽ	ताऽऽऽतीऽऽ	ऽनाऽऽऽकऽ	ऽऽत्ताऽऽऽधी	ऽऽऽनाऽऽऽ	धी
				4	5	0	6	7	8	0	×

अभ्यास प्रश्न

क. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

1. झूमरा .... का ताल है।
2. झूमरा .... जाति की ताल है।
3. सूलताल को .... नाम से भी जाना जाता है।
4. सूलताल .... की ताल है।
5. गजझम्पा ताल .... का ताल है।
6. गजझम्पा ताल में .... मात्रा पर खाली होती है।
7. 11 मात्रा की .... तालें हैं।
8. रूद्र ताल .... पर बजाई जाने वाली ताल है।

7.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम की तालों को ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी (दुगन, तिगुन, चौगुन, आड, कुआड़ व बिआड़) में लिपिबद्ध करने के विषय में जान चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप लयकारी को भली–भांति समझ चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप लयकारी का प्रयोग अपने वादन(एकल वादन व संगत) में करने में सक्षम होगे जिससे आपका वादन प्रभावशाली होगा। इससे आप लयकारी को बोलने एवं बजाने में भी सक्षम होंगे। तबले की तालों के ठेकों को विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने एवं उसके क्रियात्मक स्वरूप को तबले में प्रस्तुत कर पायेंगे।

7.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

1. तबले
2. मिश्र जाति
3. सूलफाक अथवा सूलफाक्ता
4. पखावज
5. पखावज
6. 9
7. 4(रूद्र ताल, अष्टमंगल ताल, कुंभ ताल एवं मणि ताल)
8. तबले पर

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. मिश्र, पं0 विजयशंकर, तबला पुराण, कनिष्क पब्लिशर्स, दिल्ली।
3. श्रीवास्तव, श्री गिरीश चन्द्र, *ताल परिचय,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

7.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम की किन्हीं चार तालों के ठेकों को दुगुन, तिगुन, चौगुन, आड़, कुआड व बिआड सहित लिपिबद्ध कीजिए।